CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केरल क्षेत्रीय हिन्दी साहित्य का इतिहास

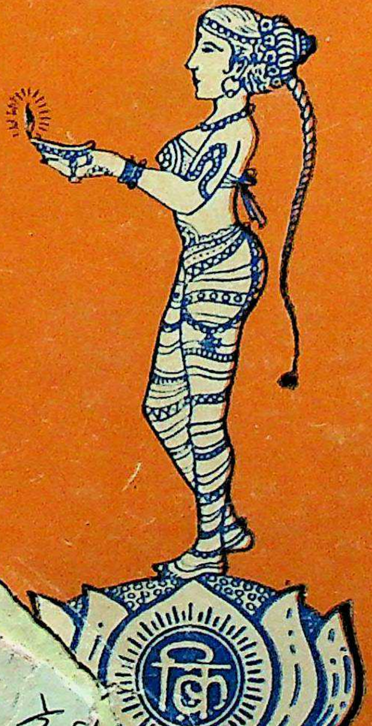

स. हैदराबाद.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'केरलीय हिन्दी-लेखकों का हिन्दी साहित्य का योगदान' विषय पर अनेक लेख एवं ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। लेकिन उन लेखों तथा ग्रंथों में, लगता है, पूर्वाग्रह का स्वर उठा हुआ है। पुस्तकों के नाम एवं रचनाकार का सामान्य परिचय देने मात्र से किसी 'देन' का सही परिचय अथवा इतिहास प्राप्त नहीं होता। प्रत्येक ललित साहित्य का अपना एक परिप्रेक्ष्य होता है। रचनाकार की सृजन-मनोभूमि को अंगीकार देकर ही किसी देन पर कुछ लिखा जा सकता है।

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति ने स्वातंत्र्योत्तर केरलीय रचनाओं पर समग्रतः पर्यवेक्षण कराया है और संपूर्ण रचना-प्रक्रिया के आयाम का सर्वेक्षण कराकर विधात्मक विभागों में इतिहास प्रस्तुत किया है। इसके लेखकों-संपादकों ने सृजन-मनोभूमि के उत्स को प्रधानता दी है। हिन्दीतर प्रदेशों के शताधिक लेखकों ने राष्ट्र-निर्माण के मार्ग में अपना-अपना योगदान दे दिया है। केरल में भी कतिपय निष्ठावान साहित्यिक व्यक्तियों द्वारा यह वाङ्मय-पूजन हुआ है। इनकी अर्चना का फल नकारात्मक नहीं होगा। भविष्य में हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास इनके पूजा-पुष्पों को भी स्वीकार करके ही रचा जाएगा।

आवरण : भगतसिंह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केरल क्षेत्रीय हिन्दी साहित्य का इतिहास

संपादक-मंडल

डॉ. भीमसेन निर्मल (हैदराबाद)
प्रोफेसर गोपालजी भटनागर (शाहदोल)
डॉ. यज्ञप्रसाद तिवारी (अनूपपुर)
श्री क्षेमचन्द्र सुमन (दिल्ली)

प्रकाशक
किरण प्रकाशन
4-8-494, गौलीगुडा, राममंदिर रोड,
हैदराबाद-500 012

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केरल क्षेत्रीय हिन्दी साहित्य का इतिहास

© दक्षिणांचलीय साहित्य समिति
गांधीनगर, हैदराबाद–500 380

प्रथम प्रकाशन : अप्रैल 1977

प्रकाशक तथा मुद्रक : किरण प्रकाशन, हैदराबाद

मूल्य : पच्चीस रुपये

KERAL KSHETRIYA HINDI SAHITYA-ka-ITIHAS

Editted by :
Dr. Bhimsen Nirmal
Prof. Gopalji Bhatnagar
Dr. Yejnaprasad Tiwari
Shri Kshemchandra Suman

April 1977 Price Rs. 25-00

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशन-वक्तव्य

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति, हैदराबाद अहिन्दी भाषी सृजनात्मक प्रतिभाओं की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था है, जो अहिन्दी-प्रदेश के साहित्य-वैभव को हिन्दी के माध्यम से समस्त भारत में उजागर करने के उद्देश्य से संस्थापित है। सन् 1972 में जन्मी इस संस्था ने अपने अस्तित्व की इस लघु अवधि में दक्षिण में रामकथा, शाकुन्तलम् की अभिज्ञानता तथा कैरली-वैभव शीर्षक से तीन ग्रंथ अपनी मूल्यांकन-माला-योजना के अन्तर्गत प्रकाशित किये हैं और यह चौथा पुष्प 'केरल क्षेत्रीय हिन्दी साहित्य का इतिहास' विज्ञ पाठकों, हिन्दी-प्रेमियों के हाथ में है। चार वर्ष के भीतर चार महत्वपूर्ण पुष्पों से माता-भारती की अर्चना करने का सुयोग पाकर समिति अवश्य ही गर्व का अनुभव करती है और आशा करती है कि भविष्य में इन पूजा-पुष्पों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जाएगी।

प्रस्तुत ग्रंथ के प्रकाशन के पीछे समिति का एक विशेष लक्ष्य रहा है। राष्ट्र-भाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अहिन्दी-भाषियों का महत्वपूर्ण योगदान है। हिन्दी के राष्ट्रभाषा बनने के सदियों पूर्व अहिन्दी-प्रदेश के संत-महात्माओं ने इसे भारत की भावात्मक एकता की वाहिका समझकर इसकी श्री-वृद्धि में अपना अपूर्व योगदान दिया था और वही कार्य आज भी चलता आ रहा है। केरल के महाराजा स्वाति-तिरुनाल् तथा आंध्र के पुरुषोत्तम कवि की हिन्दी को देन अवश्य ही गौरव की वस्तु है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरांत हिन्दी की एक लहर ने समस्त उत्तर-दक्षिण को अपना आश्लेष प्रदान किया, जिसके फलस्वरूप उत्तर से कदम मिलाते हुए दक्षिण में भी हिन्दी पठन-पाठन एवं लेखन में एक नयी जागृति एवं गति का अनुभव होता आ रहा है। इसके फलस्वरूप दक्षिण में सैकड़ों शीर्षस्थ हिन्दी-लेखक तैयार हो चुके हैं, जो अपनी बहुमूल्य साहित्य-सेवा से राष्ट्रभारती के चिराराध्य हैं। पर बड़े खेद की बात है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास में राष्ट्रभारती के ये उपासक उपेक्षित ही रह गये; इनके समुचित मूल्यांकन की ओर किसी इतिहासकार ने ध्यान नहीं दिया। इन उपेक्षित रत्नों को प्रकाश में लाने तथा इनका सही मूल्यांकन करने की आवश्यकता है, जिससे हिन्दी साहित्य का सार्वदेशिक रूप उभरकर सामने आए।

दक्षिण प्रदेश के साहित्यकारों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व तथा विकसनशील राष्ट्रभाषा के साहित्य केलिए उनके योगदान का लेखा-जोखा निष्पक्षता से किया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाना चाहिए । अहिन्दी प्रदेश के साहित्यकारों के मूल्यांकन की ओर एकाध लेखकों का ध्यान आकृष्ट हुआ और हिन्दी में तत्संबंधी कुछ प्रकीर्ण लेख तथा एक-दो शोध-प्रबंध भी प्रकाशित हुए । किन्तु उनके लेखक, यहाँ तक कि शोधकर्ता भी अपने संकुचित दृष्टिकोण तथा पूर्वाग्रह के कारण हिन्दी की सेवा में अनवरत तल्लीन मनीषियों, साहित्य-संतों के साथ न्याय नहीं कर सके । उनके लेखन एवं शोध का क्षेत्र विश्वविद्यालयों के हिन्दी-विभागों तक सीमित रहा, बाहर के निस्वार्थ तपस्वी साहित्यकार अछूते रह गये । वे यह बात भूल गये कि हिन्दी किसी राजाश्रय या विभागाश्रय से नहीं पनपी; उसपर संतों, मनीषियों का बड़ा उपकार रहा ।

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति ने दक्षिण के हिन्दी साहित्यकारों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को प्रकाश में लाने की अपनी योजना बनायी और भारत के सुदूर छोरवर्ती केरल प्रदेश से इसका आरंभ करने का निश्चय किया । फलस्वरूप यह ग्रंथ 'केरल क्षेत्रीय हिन्दी साहित्य का इतिहास' अधिकारी विद्वानों से तैयार करवाया गया है । जहाँ तक केरल में हिन्दी-लेखन की बात है, यह निर्विवाद रूप में कहा जा सकता है कि उन्नीसवीं शती में महाराजा स्वातितिरुनाल ने हिन्दी-लेखन का जो बीजारोपण किया था, उसे बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में स्वर्गीय वासुदेवन पिल्लै ने पल्लवित तथा उत्तरार्द्ध में डा. चन्द्रशेखरन नायर ने पुष्पित किया । स्वर्गीय वासुदेवन पिल्लै हिन्दी के सशक्त लेखक थे, किन्तु असामयिक मृत्यु के कारण वे हिन्दी को उतना साहित्य नहीं दे सके, जितना वे देना चाहते थे । पर स्वातंत्र्योत्तर युग में डा. चन्द्रशेखरन नायर के रूप में केरल माता ने एक सशक्त हस्ताक्षर को राष्ट्रभारती केलिए भेंट किया, जिनके आगमन से केरल क्षेत्रीय हिन्दी-लेखन की दिशा में अभूत पूर्व गति दिखाई पड़ी । डा. नायर बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं । वे एक साथ कवि, नाटककार, एकांकीकार, कहानीकार, निबंधकार, समीक्षक एवं पत्रकार हैं । उनकी सी सृजनशील प्रतिभा केरल के अन्य किसी साहित्यकार में नहीं देखी जा सकती है । यही नहीं, अपनी विशाल साहित्य-संपदा के कारण वे अखिल भारतीय स्तर के लेखक बन सके हैं । अतः स्वातंत्र्योत्तर-युग को 'चन्द्रशेखरन नायर-युग' की संज्ञा चरितार्थ होगी । वास्तव में डा. नायर केरल के साहित्य-संत हैं और हिन्दी केलिए उनका योगदान अपने-आप में एक शोध का विषय है । पर दुख की बात है कि पूर्वाग्रहों से पीडित केरल के शोधकर्ताओं ने उनका समुचित मूल्यांकन नहीं किया ।

सही मूल्यांकन निष्पक्षता एवं तटस्थ दृष्टि की अपेक्षा रखता है । इसलिये समिति ने यह उचित समझा कि पुस्तक मलयालम-भाषी विद्वानों से न लिखाकर,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी भाषी विद्वानों से लिखायी जाय। केरल प्रदेश के हिन्दी साहित्य का इतिहास वहाँ से मीलों दूर के हिंदी भाषियों से लिखाना अवश्य ही दुष्कर एवं कष्ट साध्य कार्य है। समिति को पूरी आशा थी कि इस महत्कार्य में केरलवासी हिंदी साहित्यकारों का सक्रिय सहयोग प्राप्त होगा। अतः समिति ने अपनी योजना की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए केरल के साहित्यकारों से यह आग्रह किया कि वे अपनी रचनाओं की प्रतियाँ तथा परिचय-पत्र प्रेषित कर हमारी योजना में सहयोग प्रदान करें। पर बड़े दुख की बात है, कुछ मनस्वी साहित्यकारों को छोड़कर शेष ने मौन साध लिया। उनके पूर्ण सहयोग के अभाव में समिति को सामग्री-संचयन में अनेक पुस्तकालय छानने पड़े और पैसे खर्च करके रचनाएँ खरीदनी पड़ीं। हाँ, केरल के कुछ उदारचेत्ता मनस्वी साहित्यकारों जैसे डा. चंद्रशेखरन नायर, डा. सरलादेवी, डा. गोविंद शेनाय, श्री पी. जी. वासुदेव, डा. पी. के. कुञ्ञिरामन, डा. एन. आर. एलेडम, डा. वेल्लायणि अर्जुनन्, श्रीमती एस. तंकमणि अम्मा, डा. एच. परमेश्वरन, श्रीमती पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, श्रीमती पद्मिनी मेनन, श्री एम. गणेश अय्यर, आदि ने अपनी कृतियाँ भेजकर समिति को पूर्ण सहयोग प्रदान किया, जिनके सहयोग के अभाव में प्रस्तुत ग्रंथ इतने प्रामाणिक रूप में प्रकाशित नहीं हो पाता था। तदर्थ समिति इन महानुभावों के प्रति अत्यन्त आभारी है। इनमें भी डा. चंद्रशेखरन नायर तथा डा. सरलादेवी ने स्वयं सहयोग देकर तथा दूसरों से सहयोग दिलाकर हमारी योजना को पूर्ण सफल बनाने में उत्साहित एवं प्रेरित किया, जिसके लिये वे साधुवाद के पात्र हैं।

समिति को पुस्तकों की समीक्षाएँ प्रस्तुत करने केलिये उत्तरभारत के गण्य-मान्य लगभग बीस समीक्षकों का सहयोग प्राप्त हुआ, जिनके इस सहयोग एवं सद्भावना केलिये समिति अत्यन्त आभारी है। इस बृहत् ग्रंथ का संपादन अपने-आप में एक महत् शोध-उपलब्धि है और इस कार्य को डा. भीमसेन निर्मल, प्रोफेसर गोपालजी भटनागर, डा. यज्ञप्रसाद तिवारी तथा श्री क्षेमचंद्र सुमन ने बड़ी योग्यता एवं कुशलता से संपन्न किया, जिस कारण यह ग्रंथ बड़ा प्रामाणिक बन गया। संपादक-मंडल ने पुस्तक-संपादन में तटस्थ दृष्टिकोण को अपनाया, जो इसकी सबसे बड़ी विशेषता है। दूसरे, केरल प्रदेश के छोटे-बड़े लगभग समस्त हिंदी लेखकों तथा सन् 1976 के अंत तक प्रकाशित समस्त कृतियों को इस इतिहास में सम्मिलित करने का श्लाघनीय प्रयास किया। समिति संपादकमंडल के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती है। केरल के शीर्षस्थ लेखक डा. चंद्रशेखरन नायर ने समिति के अनुरोध को स्वीकार कर इस ग्रंथ की भूमिका प्रस्तुत की है, जिसके लिये समिति उनके प्रति अत्यन्त कृतज्ञ है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अंत में किरण प्रकाशन के अधिकारी हमारे मित्र एवं परमहितैषी श्री कामता प्रसाद जी के प्रति समिति अपना आभार प्रदर्शित करती है, जिन्होंने बड़े उत्साह के साथ इस ग्रंथ के प्रकाशन का भार अपने ऊपर ले लिया और अल्प समय के अन्दर सुन्दर साज-सज्जा के साथ इसे प्रकाशित किया। अगर श्री कामता प्रसाद जी का सहयोग समिति को नहीं प्राप्त हुआ होता तो संभवतः यह ग्रंथ तुरन्त प्रकाशित नहीं होता। अतः समिति उनके इस योगदान को कभी विस्मृत नहीं कर सकती।

भविष्य में इसी ढंग पर तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश एवं कर्णाटक प्रांत के हिंदी साहित्य के इतिहास भी पृथक् ग्रंथों में प्रकाशित करने में समिति दृढ़ संकल्प है। समिति को अपनी योजनाओं को कार्यान्वित करने केलिए उत्तर-दक्षिण के उत्साही सहृदय साहित्यकारों का सहयोग बराबर मिलता रहा और आशा है, भविष्य में भी सज्जनों, सहृदयों के वरदहस्त प्राप्त होते रहेंगे।

श्रीराम नवमी,
29-3-1977

डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै
मंत्री
दक्षिणांचलीय साहित्य समिति
गांधीनगर, हैदराबाद-500 380

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमिका

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति ने केरलीय हिंदी साहित्य का इतिहास प्रस्तुत करते हुए एक ऐतिहासिक अपेक्षा की पूर्ति की है। 'केरलीय हिन्दी लेखकों का हिन्दी साहित्य को योगदान' विषय पर अनेक लेख एवं ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। लेकिन उन लेखों तथा ग्रंथों में, लगता है, पूर्वाग्रह का स्वर उठा हुआ है। प्रस्तुत विषय पर दो-चार शोध-प्रबन्ध भी प्रकाश में आये हैं। वे भी काल-परिधि की दृष्टि से आधिकारिक नहीं प्रमाणित हुए हैं। उनके रचनाकाल तक मुद्रित अनेक केरली लेखकों की बहुचर्चित रचनाओं का उल्लेख तक उनमें नहीं आया है। इसके कई कारण हो सकते हैं। शोधकारों ने प्राप्त सामग्री पर काम किया है। पर, जहाँ तक शोध-प्रबंधों का सम्बन्ध है, उनका प्रामाणिक रहना अत्यंत जरूरी है। सबसे बड़ा अयुक्तिक कार्य यह रहा कि उन्होंने, केरल के बाहर रहते हुए हिन्दी साहित्य की महत्ती सेवा करने वाले लेखकों को अपनी शोध-परिधि में लाकर उन्हें भी स्थान नहीं दिया। इस प्रकार वे सब पूर्व-प्रकाशित लेख एवं ग्रंथ अपूर्ण हैं।

दूसरी त्रुटि यह है कि उन लेखों में मुख्य स्वर पुस्तक-सूचीकार (Catalogue Printer) का है। पुस्तकों के नाम एवं रचनाकार का सामान्य परिचय देने मात्र से किसी 'देन' का सही परिचय अथवा इतिहास प्राप्त नहीं होता। प्रत्येक ललित साहित्य का अपना एक परिप्रेक्ष्य होता है। रचनाकार की सृजन-मनोभूमि को अंगीकार देकर ही किसी 'देन' पर कुछ लिखा जा सकता है। केरलीय हिन्दी-लेखकों केलिए भी यह परिप्रेक्ष्य उनके लेखन को स्पर्श करता है और रंग चढ़ा देता है। परिप्रेक्ष्यता के आयाम को मानने पर हिन्दी-भाषी हिन्दी-लेखकों और अहिन्दी-भाषी हिन्दी-लेखकों में पर्याप्त अन्तर दिखाई पड़ता है, जो अपने-अपने पृष्ठाधार की मजबूती से जनित है। राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक विसंगतियाँ, धार्मिक परिकल्पनाएँ, राजनैतिक विडंबनाएँ आदि लेखकों की वैयक्तिक अनुभूतियों को रूपायित करने में प्रभावकारी हैं, जो प्रतिभाशाली रचनाकारों को हिन्दी-अहिन्दी के भेद-भाव को माने बिना भी प्राणवन्त कर देती हैं। इस इतिहास के अध्ययन से यह धारणा बद्धमूल हो गयी है कि केरलीय हिन्दी-लेखकों में सृजनशील प्रतिभा के धनी अधिक नहीं हैं। जितने मिलते हैं वे भी उपर्युक्त विवेचना के अपवाद स्वरूप नहीं मिलते।

इस ग्रंथ में काव्य-सृजन प्रकरण के अन्तर्गत केरलीय साहित्य को कालगत विभाजन-रेखा के अधीन लाने की ओर इशारा तो किया गया है। मुझे लगता है कि उन्नीसवीं शताब्दी को 'स्वातितिरुनाल युग' कहने में अत्युक्ति नहीं होगी। श्री वासुदेवन पिल्लै अपने युग के श्रेष्ठ हिन्दी-समर्थक रहे थे। वे अच्छे लेखक, सभा-संस्थापक, राष्ट्र-भाषा प्रचारक, सम्पादक और सांस्कृतिक कार्यों के संचालक रहे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
थे। अपने जीवनकाल में उन्होंने हिन्दी भाषा और उसके साहित्य के प्रचार-प्रसार में जो निष्ठापूर्ण कार्य किया था, उसके बराबर किसी ने उस काल में नहीं किया था। ललित साहित्य के प्रणयन में भी वे दक्ष रहे थे. हालांकि उनके साहित्य का समुचित संग्रह तो नहीं किया गया है। फिर भी केरल में हिन्दी की श्रीवृद्धि को उनका योगदान प्रशंसनीय है। इसलिए बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध को मैं वासुदेवन पिल्लै-युग मानता हूँ। उसका यह तात्पर्य नहीं है कि उनके समकालीन कार्य-कर्ताओं एवं लेखकों का महत्व कम करके देखना चाहिए। मुख्यता इस बात को दो जानी है कि श्री वासुदेवन पिल्लै अपने समय में उत्तर और दक्खिन की अनेकों पत्रिकाओं में लिखते रहे हैं और स्वयं अपनी पत्रिका द्वारा लेखकों को लिखने की प्रेरणा देते रहे हैं।

स्वातंत्र्योत्तर रचना-शिल्प का आकलन करने का दायित्व तटस्थ समीक्षकों तथा इतिहासकारों को है। सौभाग्य की बात है कि दक्षिणांचलीय साहित्य समिति ने स्वातंत्र्योत्तर केरलीय रचनाओं पर समग्रतः पर्यवेक्षण कराया है और संपूर्ण रचना-प्रक्रिया के आयाम का सर्वेक्षण कराकर विधात्मक विभागों में इतिहास प्रस्तुत किया है। इसमें इतिहास-रचना के तथ्यों का समुचित पालन किया गया है। इसके लेखकों-सम्पादकों ने सृजन-मनोभूमि के उत्स को प्रधानता दी है और केरल के समसामयिक हिन्दी-साहित्य को वैज्ञानिक ढंग से इतिहास-बद्ध करके हिन्दी-जगत को दिखाया है। मैं हिन्दी के सृजन-साहित्य को अहिन्दी-हिन्दी के दायरों में प्रतिबद्ध करके देखना नहीं चाहता। पंजाबी भाषी हिन्दी-लेखक और मलयालम-भाषी हिन्दी-लेखक दोनों हिन्दी के लेखक हैं, जैसे यशपाल, मोहन राकेश, अमृता-प्रीतम, रांगेय राघव आदि हिन्दी के लेखक बने हुए हैं। पर, आज रमेशचौधरी आरिगपूड़ी, कुट्टन पिल्लै, बालशौरि रेड्डी, चन्द्रशेखरन नायर आदि दक्खिन के अहिन्दी-भाषी हिन्दी-लेखक तो हैं! महीपसिंह और गुरुमुखसिंह जीत हिंदी के सशक्त कहानीकार हैं, पर वे भी पंजाबी-भाषी हिंदी-लेखक हैं! पता नहीं, किस शुभ भविष्य में ये भी हिंदी-लेखकों की श्रेणी में अपना नाम जुड़वा देने में समर्थ होंगे।

केरल के नवयुवकों में प्रतिभा का अभाव कभी महसूस नहीं हुआ है। आज भी हैं प्रतिभा-धनी युवक और पहले भी था। पर, हिंदी में सृजन-साहित्य का इतना दारिद्र्य क्यों हुआ? कई बार इसके कारण के मूल में जाकर सोचने के संदर्भ मिले हैं। कारण तो ढूंढ निकाले गये हैं। उनमें प्रमुख कारण है, कई प्रतिबंधों का सामना करके भी जो लिखते हैं उन्हें प्रोत्साहन न दिया जाना और उनके प्रति उपेक्षा-भाव दिखाया जाना। जो हिंदी में लिखते हैं वे अपनी-अपनी मातृभाषा के लेखक नहीं माने जाते, हालांकि वे मातृभाषा में भी रचना-निर्माण करते हों, इसे दूसरे कारण के रूप में हम ले सकते हैं। फिर तो अहिंदी-भाषी-लेखक की रचना को उजाले में लाने वाला हिंदी का सद्भावी प्रकाशक कौन रहता है? अन्त में हिंदी के ठेकेदार लेखक हिंदीतर प्रदेश के हिंदी-रचनाकारों को अंगीकार दें, यह तो विडम्बना है। वे लिखेंगे और ये उनके साहित्य को पढ़ेंगे और वाह-वाही देंगे। यही जो बहुत पुरानी परम्परा चलती आ रही है उसे कैसे तोड़ा जा सकता है?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ज़माना बदल गया है। हिन्दी यदि समग्र भारतवर्ष की भाषा मानी-जानी है, तो उसके लेखक कन्याकुमारी से लेकर काश्मीर तक के प्रदेशों से निकल आवें। इनमें प्रांतीय भेद-भावना नहीं होनी चाहिये। भेद-भाव हो सकता है उत्तम-अनुत्तम रचनाओं के आधार पर। आज केवल यौन-विकृतियों के चितेरे ऐसे बहुत से जाने-माने हिंदी-लेखक हैं, जो देशीय एवं सामाजिक भावना के दरिद्र हैं और स्वयं अपने गन्दे लेखन के बल पर साहित्यकार के स्थान को बनाये रखते हैं। अनेक संस्कृतियों, आचार-विचारों, धार्मिक-साम्प्रदायिक गुत्थियों में जकड़े हुए एक बड़े भूखण्ड जैसे विशाल राष्ट्र की जनता केलिए किस प्रकार का साहित्य रचना चाहिए, इसका इन्हें बिलकुल ज्ञान नहीं है। आज जहाँ मनुष्य अपनी सर्वोच्च सदाशयता-समत्वभावना के साथ अग्रसर होता जाता है, वहां मनुष्य संकीर्ण, विनाशक, पाशविक चिन्तन-जटिलता को भी लिए चलता है। इस प्रकार साहित्य की विषय-दिशाएं अनन्त-व्यापी होती जाती हैं। पर खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि हिंदी का साहित्य किसी-किसी के हाथों पड़कर दुर्गन्ध-मलिन होता जाता है। हिंदीतर भाषा-भाषी हिंदी-लेखक समकालीन चेतना की अभिव्यक्ति करने में जागरूक हैं। उन्हें देश और देशीय संस्कृति से विशेष ममता है। भारत के वैभिन्य की मणियों को एकता के सूत्र में गूंथ लेने की उनकी उत्कट अभिलाषा है। उन्हें अब भी गाँधीवादी चेतना के मूल में सच्ची मानवीयता का संस्पर्श अनुभूत होता है। वे चिरागतले वाले अंधेरे में रहते हुए आलोक के आस्वादन की चेष्टा करते हैं। संक्षेप में हिंदी की जड़ता के निरंतर आवर्तन के स्थान पर अन्य भारतीय भाषाओं के हिंदी-लेखक नव चेतना की आकांक्षा में आगे बढ़ते हैं। उन्हें कष्ट इस बात का है, कि वे साधनहीन हैं और अब भी अपेक्षित प्रोत्साहन से वंचित हैं। उनकी उदार एवं शुद्ध कारयित्री प्रतिभा को एकत्रित करके देश-हितकारी एवं जनमंगलदायी साहित्य का निर्माण करने का न तो राष्ट्र-वादी नेताओं से कोई योजना-बद्ध कार्य चलता है, न स्वयं उन्हीं के यत्न से ऐसा कुछ होता है। परस्पर जानने और समाहित रूप से यत्न करने का सत्प्रयास उनमें नहीं है, यह भी एक विड़म्बना है।

हिंदीतर प्रदेशों के शताधिक लेखकों ने राष्ट्र-निर्माण के मार्ग में अपना-अपना योगदन दे दिया है। केरल में भी कतिपय निष्ठावान साहित्यिक व्यक्तियों द्वारा यह वाङ्मय-पूजन हुआ है। इनकी अर्चना का फल नकारात्मक नहीं होगा। भविष्य में हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास इनके पूजा-पुष्पों को भी स्वीकृत करके ही रचा जायेगा।

केरलीय लेखकों के हिंदी साहित्य का इतिहास सामने है। इसे देखकर अनुमान कर सकता हूँ कि इसके निर्माण के पीछे कितने भारी प्रयत्न तथा कष्ट का अनुभव हुआ होगा। लगता है, समिति ने अपना इतिहास-लेखन सौ फीसदी प्रामाणिक बनाने का प्रयास किया है। वस्तुतः इसके रचयिता-कार्यकर्ता प्रशंसा तथा साधुवाद के पात्र हैं। भविष्य में इस प्रामाणिक ग्रंथ का उपयोग अनेक शोध-छात्रों को प्राप्त होगा। और हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास तैयार करते समय इसकी उपादेयता और भी सिद्ध होगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मुझे, दक्षिणांचलीय साहित्य समिति की इस मूल्यवान रचना को समूचे हिंदी और अहिंदी क्षत्रों के राष्ट्र-भाषा-प्रेमियों एवं विद्वानों के समक्ष समर्पित करते हुए बड़ी प्रसन्नता होती है।

महात्मागांधी कालेज,
त्रिवेन्द्रम, केरल–695 004
दिनांक 27–3–77

एन. चन्द्रशेखरन नायर
(प्रोफसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभाग)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुक्रम

- काव्य-सृजन 13
- नाटक 28
- लघु नाटक 43
- एकांकी 51
- कहानी-लेखन 73
- निबंध-साहित्य 85
- आलोचना-साहित्य 97
- विविधा 131
- अनुवाद 145
- संस्थाएँ तथा पत्रिकाएँ 159
- केरल के प्रमुख हिन्दी साहित्यकार 168
- मलयालम-इतर भाषा-भाषी केरल के साहित्यकार 186
- प्रकाशित प्रमुख कृतियाँ 187

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काव्य-सृजन

प्रचलित विचारधारा के अनुसार हिन्दी उत्तर-भारत की भाषा है और दक्षिण भारत में उसके प्रति उपेक्षा-भाव ही परिव्याप्त है। पर सच्चाई इससे निश्चय ही भिन्न है। दक्षिणी-प्रदेशों, और विशेषकर केरल में, हिन्दी-पठन-पाठन एवं साहित्य-सृजन की अच्छी खासी परम्परा है। दोष है तो हिन्दी भाषा-भाषियों और हिन्दी-साहित्य के इतिहास-लेखकों का, जिन्होंने उन अहिन्दी-भाषी लेखकों के कृतित्व का समुचित अभिनन्दन एवं मूल्यांकन नहीं किया।

मलयालम-भाषी हिन्दी-लेखन की सुदीर्घ परम्परा में, विशेषकर पिछले पचास वर्षों में, साहित्य की विविध विधाओं का स्पर्श किया गया है तथा अनेक कृती और कृतियाँ ऐसी हैं, जिनका विषयगत गाम्भीर्य तथा अभिव्यक्तिगत सशक्तता हिन्दी के श्रेष्ठ लेखकों तथा रचनाओं के समकक्ष है। ऐसी स्थिति में साहित्यिक अभिलेखों में उनका उल्लेख न होना हिन्दी-जगत की कृतघ्नता ही कही जाएगी, यद्यपि केरलीय हिन्दी लेखक यश-कामना से प्रेरित होकर, नहीं अपितु हिन्दी के प्रति गाढ़ अनुराग तथा व्यापक राष्ट्रीय भावना से अभिप्रेरित होकर हिन्दी भाषा में अपनी अनुभूति को वाणी देते रहे हैं।

केरल में हिन्दी-लेखन का अध्ययन दो प्रकार से किया जा सकता है—कालगत एवं विधागत। काल अथवा युग की दृष्टि से पहले दो विभाग किए जा सकते हैं—उन्नीसवीं-शताब्दी तथा बीसवीं शताब्दी। तदुपरान्त बीसवीं शताब्दी के साहित्य को दो खण्डों में विभाजित कर सकते हैं—स्वातंत्र्य पूर्व और स्वातंत्र्योत्तर। इस प्रकार क्रमशः तीन युग होंगे—

(1) उन्नीसवीं शताब्दी

(2) बीसवीं शताब्दी—स्वातंत्र्य पूर्व

(3) बीसवीं शताब्दी—स्वातंत्र्योत्तर

विधागत अध्ययन के अन्तर्गत प्रत्येक विधा को लेकर उसके अन्तर्गत आने वाले साहित्य का क्रमागत अध्ययन किया जा सकता है। विभिन्न विधाओं में लेखन के समग्र रूप का आकलन करने की दृष्टि से विधागत अध्ययन अधिक समीचीन होगा। उसके अन्तर्गत कालगत अध्ययन तो समाहित होगा ही।

काव्य-सृजन—

स्वातितिरुनाल के गीत—केरल में हिन्दी-कविता-लेखन (वस्तुतः हिन्दी-लेखन) का सूत्रपात् त्रावणकोर के महाराजा स्वातितिरुनाल के हिन्दी गीतों से माना जा सकता है। 16 अप्रैल 1913 ई. को जन्म लेकर मात्र छत्तीस वर्ष की आयु में दिवंगत हो जाने वाला यह महान् कलाकार बहुभाषाविद्, संगीतज्ञ एवं नृत्यकलाविद्

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

था। उनके हिन्दी गीतों की जानकारी हिन्दी जगत को बहुत बाद में हुई। सबसे पहले सन् 1916 ई. में उनका सम्पादन और प्रकाशन मलयालम लिपि में श्री चिदम्बर वाध्यार द्वारा 'स्वातितिरुनाल संगीतकृतिकल' नामक ग्रन्थ में हुआ। देवनागरी लिपि में वे सन् 1935 में 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' में तथा बाद में 'पुस्तकाकार' प्रकाशित हुए। 'केरलीयों की हिन्दी को देन' शीर्षक शोध-प्रबन्ध में डॉ. जी. गोपीनाथन् ने महाराजा के हिन्दी गीतों का सम्पादन किया है।

महाराजा स्वातितिरुनाल के हिन्दी-कृतित्व की आधारभूमि बहुत कुछ धार्मिक है और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने हिन्दी के भक्ति काव्य का विधिवत् अध्ययन किया था। इस अध्ययन के फलस्वरूप उनका व्यक्तित्व भक्ति-भावना से ओतप्रोत हो गया था तथा भक्ति से आविष्ट होकर उनका हृदय कोमल-मधुर गीतों में तरलायित हो उठा है। स्पष्ट ही उनके गीतों पर हिन्दी भक्ति काल का प्रभाव तो अवश्य पड़ा है, पर वे अनुकरण मात्र नहीं हैं। उनमें कवि की अपनी अनुभूति रूपायित हुई है, उनका अपना हृदय बोल उठा है। डॉ. जी. गोपीनाथन का कथन इस संदर्भ में उद्धृत करने योग्य है—"उनके लिए हिन्दी में काव्य-रचना करना केवल विनोद की बात नहीं थी, उनके लिए यह बहुत ही आस्था और तत्परता की बात थी, साथ-साथ आत्माभिव्यक्ति का प्रश्न भी।"[1]

स्वातितिरुनाल के हिन्दी गीतों में सरस्वती-स्तुति, शिव-स्तुति, राम-वन्दना, कृष्णलीला-वर्णन, पद्मनाभ-स्तुति आदि समाहित हैं। त्रावणकोर के राजकुल के कुलदेवता पद्मनाभ तो वस्तुतः कवि के समस्त साहित्य के केन्द्रबिन्दु ह' हैं। वन्दना चाहे सरस्वती की हो, चाहे शिव; राम या कृष्ण की हो, कवि ने अपने आराध्यदेव पद्मनाभ प्रभु को प्रायः प्रत्येक छंद में स्मरण किया है, जिससे उनके प्रति कवि का असीम भक्ति-भाव मुखर होता है—

तेरो रे रूप भयो सब, विद्या सुरनर चरण मनाई।
पद्मनाभ प्रभु चरण सरोरुह सेवक के मन भाई।।

◆ ◆ ◆

पद्मनाभ चरणदास कामित फल पावै।

◆ ◆ ◆

काटो मेरे दुरिद फंद पद्मनाभ-पद रे।

◆ ◆ ◆

माता कौसल्या करत आरती, निज मन वांछित पायो।
राम पद्मनाभ प्रभु फणि पर शायी त्रिभुवन सुख करि आयो।।

हिन्दी के भक्त-कवियों की भाँति स्वातितिरुनाल ने आराध्यदेव की महानता

1. केरलीयों की हिन्दी को देन, पृ. 69

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एवं भक्तवत्सलता तथा अपनी दीनता का उल्लेख करते हुए प्रभु-चरणों में आत्म समर्पण का भाव व्यक्त किया है। कृष्ण लीला-वर्णन में प्रभु-विजय, रूप-वर्णन, बाल-लीला, वंशी-माधुर्य राधा-कृष्ण-अनुराग, बियोग-वेदना आदि प्रसंग हैं, जो हिन्दी के कृष्ण-भक्ति-काव्य की परम्परा में हैं।

उदाहरणार्थ—

सुमरण कर जदुनाथ हरि के।
वास कियो जिन धर्म दरी के।।
एक क्षण में केते पतित सिधारे प्यारे।
पीपा तारे सुदामा तारे बेस्वा तारे अजामिल न्यारे।।···

◆ ◆ ◆

मोर पिंछ कटि काछनी राजे कर—
मुरली उर माल लसे।

◆ ◆ ◆

मैं तो नहिं जाऊं जननी जमुना के तो तीर।
इतनी सुन के मात जसोदा पूछति मुर हर से
क्यों नहिं जावत धेन चरावन बालक कह हमसे।
कहत हरी सब ग्वालिन मिल हम मींजत घन कुच से···

◆ ◆ ◆

महीपाल प्यारे तेरे बाँसुरी की धुन मेरो
मनहर लीनो दुख दीनो नंदनंदन।
मुरली से कीन्हो तीनों लोक कू अधीनो रे···

◆ ◆ ◆

भई लो पिया चाँदनी रात अब रहियो मोरे साथ।
बिजरी से पीत डुलाऊँ, भुज में भुजाहि मिलाऊँ।
सब फल हार बनाऊँ, मन भर भर भूषण पाऊँ।
तन मो अबीर लगाऊँ अँगिया के कोर खुलाऊँ

◆ ◆ ◆

अब तो बैरागिण भई
आली मैं तो अब तो बैरागिण भई।
सेज सिंगार कछू नहिं भावै
सुख सब भूल गई।[1]

---

1. सभी गीतांश 'केरलीयों की हिन्दी को देन' पुस्तक में स्वातितिरुनाल के गीतों (सम्पादक : जी. गोपीनाथन) से उद्धृत।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वातितिरुनाल के ये गीत निश्चय ही हिन्दी भक्ति-काव्य-परम्परा की सम्पदा हैं। इनमें सूरदास की सहृदयता भी है, और मीरा की ललक भरी भक्ति भी। संगीत तत्व तो सर्वत्र परिव्याप्त है। कृष्ण-काव्य की परम्परा का सच्चा निर्वाह करते हुए उन्होंने ब्रजभाषा को ही अपनी अभिव्यक्ति का माध्यन बनाया। यों उसमें खड़ी-बोली का पर्याप्त पुट है। उर्दू के 'महबूब' और 'गाफिल' जैसे शब्द भी यत्र-तत्र छिटके हैं। कहा जा सकता है कि स्वातितिरुनाल के गीतों में भाव और शिल्प का कणिकांचन योग है।

बीसवीं शताब्दी : स्वातंत्र्यपूर्व काव्य-सृजन—महाराजा स्वातितिरुनाल के गीतों के बाद केरल में हिन्दी काव्य तथा अन्य लेखन की दृष्टि से एक लम्बा अन्तराल है। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में केरल में हिन्दी प्रचार आन्दोलन के साथ हिन्दी के अध्ययन और लेखन की ओर उन्मुखता हुई। इस दिशा में 'दक्षिण भारत-हिन्दी प्रचार सभा' तथा उसके द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी प्रचारक' पत्रिका का योगदान उल्लेख-नीय है। स्वातंत्र्य-पूर्व काल में किसी केरलीय हिन्दी लेखक का काव्य-संग्रह तो प्रकाशित नहीं हुआ, किंतु 'हिन्दी प्रचारक' और 'हिन्दी-मित्र' में उनकी फुटकर हिन्दी कविताओं के नमूने अवश्य देखे जा सकते हैं। श्रीमती लक्ष्मी कुट्टि, श्रीमती भारती, श्रीमती पी. अम्मिणी, टी. के. गोविन्द, विमल केरलीय आदि की कविताएँ उक्त पत्रिकाओं में सुरक्षित हैं। वह युग राजनैतिक और सामाजिक क्रान्ति का युग था। सम्पूर्ण भारतीय जन-मानस स्वातंत्र्य-प्राप्ति की तीव्र कामना से आन्दोलित था। पराधीनता के बंधनों में छटपटाने की पीड़ा और स्वतंत्रता पाने के लिए कुछ भी कर गुजरने का आवेश उस समय भारतीय मात्र के मन में समाया था।

जागृति के इन क्षणों में सामाजिक विसंगतियों की ओर भी ध्यान गया और विशेषकर नारी-स्वातंत्र्य के स्वर गूंजे। युग-चेतना को वाणी देती हुई मैथिलीशरण गुप्त की भारत-भारती जिस समय उत्तर-भारत में जन जागरण कर रही थी, केरल के हिन्दी कवि भी युगबोध से अछूते नहीं थे। श्रीमती लक्ष्मीकुट्टि के 'पिञ्जरबद्ध पक्षी' (गद्य गीत) के स्वर में स्वर मिला कर मानो प्रत्येक भारतीय कह रहा था—

"मैं कितना चाहता हूँ कि मैं अपने पंख फैलाकर उनके साथ विशाल-आकाश में उड़ूं, मधुर गीत गाऊँ, डाल-डाल पर बैठूं और देश-देशान्तर में जाकर सुन्दर-सुन्दर फूलों का आस्वादन करू। पर यहाँ पर अपने पंखों को समेट कर बैठना पड़ रहा है।...

स्वतंत्र पक्षी होकर स्वतंत्रता के राग अलापने के लिए मैं कितना लालायित हो रहा हूँ। पर मेरी परतंत्रता के बंधन कितने कठिन हैं! स्वतंत्रता मेरा स्वप्न है, बन्धन मेरा आधार... ।"[1]

1. केरलीयों की हिन्दी को देन—जी. गोपीनाथन—पृ. 83

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समाज के दलित वर्गों के उद्धार का स्वर भी जैसे उत्तर-भारत की हिन्दी-कविता में मुखर था, वैसे ही इन कवियों की कविताओं में भी। अछूतोद्धार और नारी-जागरण का संदेश देने वाली निम्नांकित कविताएँ उत्तर-भारतीय हिन्दी कवियों की ही रचनाएँ प्रतीत होती हैं—

'क्या नारी तुम हो अबला ?
दिखला दो अपने को सबला।…
जागो नारी, जागो नारी
क्रान्ति मचाओ जग में भारी
काँप उठें सब अत्याचारी… ।'[1] (पी. अम्मिणी)

◆ ◆ ◆

विभो ! तुम्हारे दर्शन को हम
मन्दिर में जब जाते हैं
उन निष्ठुर लोगों से हा हा !
दूर भगाए जाते हैं।
नाममात्र के छूतों से हम
बुरी तरह पिस जाते हैं।…[2] (टी. के. गोविन्द)

स्वातंत्र्यपूर्व युग में तत्कालीन भारतीय जन-जीवन को मूर्त्त करने वाली कविताएँ ही प्रायः लिखी गयीं। किंतु विमल केरलीय की 'प्राणाम्बु' जैसी रचनाएँ भी प्राप्त होती हैं, जिनमें कबीर जैसा दार्शनिक चिन्तन है। उदाहरण के लिए—

यह कुंभ यहाँ रह जाता है
यह अम्बु कहाँ बह जाता है,
पहले इसमें था जलभर
टपक रहा छेदों से बाहर ।…
मूल्य नहीं क्या कुछ भी इसका
आवेगा कब वह दिन किसका
हा ! अब न कहा वह जाता है[3]

स्वातंत्र्योत्तर काव्य-सृजन—स्वातंत्र्यपूर्व काल की केरलीय कवियों की हिन्दी रचनाएँ संख्या में बहुत कम हैं किंतु ये इस तथ्य को अवश्य उजागर करती हैं कि उत्तर-दक्षिण में भावनात्मक एकता की पूरी-पूरी सम्भावनाएँ रही हैं। स्वातंत्र्योत्तर भारत में तो केरल में हिन्दी-लेखन का यह क्रम अधिकाधिक गतिशील होता गया,

---

1. केरलीयों की हिन्दी को देन, पृष्ठ 83
2. वही, पृष्ठ 84
3. वही, पृष्ठ 85

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और पी. नारायण 'नरन', पं. नारायणदेव 'केरलीय', वासुदेवन पिल्लै 'दक्षिणी', डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर तथा डॉ. पी. वी. विजयन जैसी प्रतिभाएँ उभरीं। इन कवियों की रचनाएँ केरल से प्रकाशित होने वाली लगभग एक दर्जन पत्रिकाओं,—हिन्दी मित्र, ललकार, राष्ट्रवाणी, केरल ग्रन्थालोकम, केरल भारती आदि—में प्रकाशित होती रही हैं। पुस्तकाकार रचनाएँ—'आरती' (देव केरलीय), 'हिमालय गरज रहा है' (एन. चन्द्रशेखरन नायर), 'कथ्य और तथ्य' (डॉ. विजयन) तो इनी-गिनी हैं। वी. के. दामोदर प्रसाद, कृष्णन कुट्टि, गीता पुष्पशा आदि की कविताएँ भी यत्र-तत्र प्रकाशित होती रही हैं। काव्य के उच्च मूल्यों के निकष पर चाहे ये कविताएँ खरी न उतरें, पर उनकी रचना के पीछे उच्च राष्ट्रीय मूल्य अवश्य हैं!

देवकेरलीय : 'आरती'—देव केरलीय यों स्वतंत्रता-प्राप्ति से पूर्व के कवि हैं, पर 'हिन्दी कौमुदी' नाम से लिपिबद्ध उनका पूर्व संग्रह प्राप्य नहीं है तथा 'समय-समय पर मन में उठे भावों को रूप देने के प्रयास' के प्रतिफल के रूप में 'आरती' नामक उनका एक काव्य-संग्रह 1960 में प्रकाशित हुआ है, जिसमें 1957 के बाद की कविताएँ संकलित हैं। 'आरती' के गीतों की पृष्ठभूमि लेखक के शब्दों में इस प्रकार है—"सन् 1961 में मेरे जीवन में कड़ुवी और मीठी कई घटनाएँ घटीं और उनसे मेरे दिल को बड़ा आघात लगा। पंत जी के अनुसार 'आह से उपजा होगा गान' की तरह तब से कभी-कभी कुछ लिख लेता हूँ। उन्हीं कविताओं का एक छोटा सा संग्रह 'आरती' के नाम से प्रकाशित हो रहा है।"

कवि के जीवन में मीठी-कड़वी जो भी घटनाएँ घटी हों, 'आरती' गीतों में वे प्रायः आशा, उल्लास और आश्वासन का स्वर लेकर ही उतरी हैं। सृष्टि के नियम एवं विधि के विधान जटिल और बलवान हैं। विश्व में विविध प्रकार के द्वन्द्व अनन्त-काल से चल रहे हैं, कपट तंत्र के पट-परिवर्त्तन के रूप में जीवन का अविरल नर्त्तन निरन्तर हो रहा है, पर उन सब के बीच भी मानव विषपायी शंकर की तरह अजेय बना आगे बढ़ता जाता है। मानव की इस दुर्दम्य जिजीविषा के समक्ष अखिल प्रकृति को नतशिर होना होगा। कवि ने इस प्रकार के ओजस्वी भावों को 'आरती' में वाणी दी है।

वस्तुतः आरती के गीत वैविध्यपूर्ण हैं। विविधता विषयगत भी है और शिल्पगत भी। अपनी जन्मभूमि केरल के यशोगान से प्रारम्भ करके कवि देव-'केरलीय' कहीं 'नींद छोड़ जाग जाग', 'करो परिश्रम करो परिश्रम', 'चल, चल रे युवक वीर, त्वरित गति चरण धर' जैसे उद्बोधन गीत गाता है, कहीं अपने पुलकित प्राणों का उल्लास बिखेरता है—

पुलकित मेरे प्राण
निकली मधुमय तान।
निरखी प्रियतम झांकी,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्यारी मधुरितु आई, कोयल पंचम बोली
मन की लतिका झूली…(मधुमय तान, पृ. 30)

◆ ◆ ◆

आज मुदित मुदित प्राण
मदिर मदिर मधुर प्राण
नयन मिलित रागलीन
अखिल भुवन प्रणयलीन। (मधुगीत, पृ. 36)

◆ ◆ ◆

आज रसीला जीवन लगता
आज मदालस भाव उमड़ता
आज छबीला है यह उपवन
आज फबीला है यह तन-मन। (मानसी, पृ. 56)

उल्लास के इस आवेग में ही कवि यह प्रश्न पूछता है—

सुमन जब मधु पूर्ण हो तब
माँगना मधु पाप है क्या ?
खोल वातायन उषा जब
मुस्कुराती लास्य करती,
खोल अपने नयन मादक
झाँक लेना पाप है क्या ?

इन मधुसिंचित प्रसंगों के अतिरिक्त कवि कहीं आलम्बन के रूप में प्रकृति-चित्रण करता है (तटाक-तट), कहीं जीवन को दार्शनिक के रूप में देखने लगता है (द्वन्द्व, तंत्र, संसार), कहीं बापू, जवाहर का स्मरण और प्रशस्ति करता है और कहीं हिन्दी की अपेक्षित प्रगति न होने से क्षुब्ध होकर 'हिन्दी का झण्डा ले हम उत्तर को आएँगे' शीर्षक रचना में सोत्साह कहता है—

राष्ट्र का शृंगार होगा, एक राष्ट्रभाषा द्वारा
भावात्मक एकता भी तभी बन जाएगी,
धर्म निरपेक्ष राज्य, भारत हमारा देश
जातिगत भावना से गरिमा डूब जायगी।
व्यक्ति से समाज बड़ा, समाज से बड़ा स्वराज्य
अहंता का लोप होगा, ज्योति जग जाएगी,
वसुधा कुटुम्ब भाव, घर घर रोज बढ़े
भासमान भारत की कीर्त्ति जग छाएगी।

'आरती' के गीत कवि की निजी अनुभूतियों के सहज उच्छलन हैं। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि उनकी रूपरेखा समकालीन हिन्दी काव्य की गतिविधियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के समानान्तर न होकर छायावाद या छायावाद पूर्व की कविताओं जैसी है। भाषा यों पर्याप्त शुद्ध है, पर कहीं कहीं 'पौ फट गया' (पृ. 6) जैसे प्रयोग अखरते हैं। उर्दू शब्दों का प्रयोग (फरमाया-पृ. 7, मशगूल–पृ. 12) भी प्रायः बेमेल हैं।

वासुदेवन पिल्लै : 'केरल सतसई'

हिन्दी की सतसई-परम्परा में नूतनतम कड़ी स्वर्गीय वासुदेवन पिल्लै द्वारा संकलित 'केरल सतसई' है। श्री पिल्लै केरल में हिन्दी प्रचार में अग्रणी रहे तथा काव्य-सृजन के क्षेत्र में भी उनका योगदान अविस्मरणीय है। 'राष्ट्रवाणी' पत्रिका में उनकी काव्य-रचनाएँ प्रकाशित होती रही हैं। खेद की बात है कि काल के असामयिक क्रूर प्रहार ने 'केरल सतसई' के उनके संकल्प को पूर्णता तक नहीं पहुँचने दिया। केवल साढ़े तीन सौ दोहे ही रचे जा सके।

'केरल सतसई' (अप्रकाशित) केरल के जन्म, नामकरण, प्रकृति-सौन्दर्य, पर्व, सांस्कृतिक परम्पराओं, उपलब्धियों आदि का एक सामान्य ज्ञानकोश है। जननी वध के पाप के प्रक्षालन हेतु परशुराम द्वारा सिरजी गयी इस पुण्यवती धरती के 'केरल' और 'मलयाल' नामों का रहस्य कवि ने निम्नांकित दोहे में स्पष्ट किया है—

केर-करों से लालिता, 'केरल' है अनमोल।
पर्वत-सागर बीच है, इसीलिए 'मलयाल ॥'[1]

मला (पर्वत) एवं आषि (समुद्र) के बीच स्थित यह 'मलयाल' प्रदेश प्रकृति के अनन्त वैभव से परिपूर्ण है। शीतल, मंद, सुगंध युक्त पवन तन-ताप का हरण करता है तो रवि-किरणें अविरल वर्षा के सन्ताप से मुक्ति दिलाती हैं। गगनचुम्बी नारिकेल वृक्ष फलों की भेंट लेकर सभी के स्वागतार्थ खड़े हैं। केरल-धरती हरी घास के वस्त्र में सरिताओं की जरी लगाकर सानंद विश्राम कर रही है। नारिकेल-कुञ्जों में सारिकाएँ कलनाद कर रही हैं। प्रकृति-नटी की यह मनोरम लीलाभूमि है। 'तिरुओणम्' पर्व के समय प्रकृति-वर्णन के कुछ उदाहरण निम्नांकित हैं—

वृक्ष, लता, फल, फूल से शोभित सारा देश।
मानो जननी प्रकृति ने, खूब सजाया वेश ॥
वर्षा के उपरान्त अति स्वच्छ, सुकोमल, स्निग्ध।
केरल-भू प्रिय आगमन देख रही है मुग्ध ॥
पुष्करिणी में कमल-कुल विकसित आभापूर्ण।
नृप के दर्शन हित मनो सर दृग आकीर्ण ॥[2]

केरल प्रदेश भावात्मक एकता का एक ज्वलंत उदाहरण है। हिन्दी प्रचार भी सर्वाधिक व्यापक एवं आत्मीय रूप से वहाँ हुआ है। यों विश्व-संस्कृति का अनूठा केन्द्र ही उसे माना जा सकता है—

---

1. वासुदेवन पिल्लै स्मृतिग्रंथ 2. वही पृष्ठ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संस्कृत भाषा योग से केरल को आसान ।
हिन्दी पढ़ना हो गया, यह है भाग्य-विधान ।।
केरल के संस्कार में मिला विश्व संस्कार ।
जैसे गहन समुद्र में नदियाँ मिलीं अपार ।।[1]

केरल सतसई एक विवरणात्मक काव्य है। उसमें क्रमबद्ध रूप से केरल सम्बन्धी विषयों को लिया गया है तथा एक प्रकार की प्रबन्धात्मकता उसमें है। अतः विहारी के दोहों की तरह उनके दोहे पूर्णतया पूर्वापर प्रसंग मुक्त नहीं हैं तथा (कदाचित् एक दोहे पर एक अशर्फ़ी का प्रलोभन न होने के कारण) 'नावक के तीर' की तरह चुटीले नहीं हैं। किन्तु भाषा के सौष्ठव एवं शुद्धता, अलंकारमयता एवं सहज भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से ये दोहे कवि वासुदेवन पिल्लै की काव्य-क्षमता के परिचायक हैं। सबसे बढ़कर प्राकृतिक सांस्कृतिक दृष्टि से केरल का समग्र चित्र अंकित करने की दृष्टि से—यद्यपि कवि के असामयिक निधन से यह स्वप्न पूर्ण नहीं हो सका—'केरल सतसई' (जितनी भी वह लिखी जा सकी है) का महत्व अक्षुण्ण है।

एन. चन्द्रशेखरन नायर : 'हिमालय गरज रहा है'

आधुनिक हिन्दी साहित्य-सृजन के क्षेत्र में जयशंकर प्रसाद का जो स्थान है, केरलीय हिन्दी-लेखकों में वही स्थान श्री एन. चंद्रशेखरन नायर को दिया जा सकता है। प्रसाद ने जिस प्रकार विविध साहित्यिक विधाओं में अपनी प्रतिभा का प्रकाशन किया, वैसे ही श्री नायर ने कविता, कहानी, नाटक, एकांकी आदि अनेक विधाओं में सृजन किया है। यह बात अवश्य है कि यदि प्रसाद के साहित्यिक व्यक्तित्व में उनका कवि सर्वाधिक मुखर है तो श्री नायर के साहित्यिक व्यक्तित्व में अधिक मुखर रेखाएँ उनके नाटककार की हैं। किन्तु नायर जी का साहित्य-सृजन इतना प्रभूत और व्यापक स्तर पर है कि अन्य प्रकार की रचनाओं की तुलना में काव्य-सृजन सीमित होने पर भी कई दृष्टियों से विशिष्ट है।

डॉ. नायर ने लगभग पचास फुटकर कविताओं के अतिरिक्त 'हिमालय गरज रहा है' नामक एक खण्डकाव्य हिन्दी जगत को दिया है। फुटकर कविताओं में कुछ योजना-बद्ध लेखन भी है, जैसे चिरंजीवियों (अश्वत्थामा, बलि, व्यास, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य, परशुराम) पर लिखी गयी कविताएँ। इन चिरंजीवियों के व्यक्तित्व की सूक्ष्म रेखाओं को कवि ने शब्दों में उजागर किया है। दानवराज बलि ने सत्यदेवता के इंगित पर अपना सर्वस्व विसर्जित करने का जो उदाहरण रखा, वह कवि के मर्म को छू जाता है—

कभी सुना ?
कभी देखा ?

1. वासुदेवन पिल्लै स्मृतिग्रंथ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नाटक कपटता का ऐसा बड़ों का,
पर क्या !
हुआ छोटा
अनन्त, अप्रमेय, अखण्ड
भगवान भी नाटा
मात्र बावन अंगुल का गात्र ।
और वहाँ भी हुई विजय सत्य की—
विश्व सम्मोहनमय दान की
नित्य जागरित कर्तव्य की ।

श्री नायर का एक अपना जीवन-दर्शन है, जो उनकी समस्त रचनाओं में अभिव्यक्त हुआ है। वे परम्परागत भारतीय सांस्कृतिक आदर्शों में गहन आस्था रखते हैं तथा उनका विश्वास है कि हमारे सांस्कृतिक उच्चादर्श चिर पुराण होने पर भी चिर नवीन हैं। वर्तमान वैज्ञानिक युग में मनुष्य भौतिक समृद्धि और विभवों के पीछे व्याकुल होकर दौड़ लगा रहा है तथा उसके आत्मिक विकास की गति अवरुद्ध हो गया है। ऐसे में उसकी आत्मिक शांति और मानसिक स्थैर्य के लिए प्राचीन मानवीय आदर्श ही उपयोगी हैं। चिरन्तन मानवीय आदर्शों को आत्मसात् करने वाले बापू और नेहरू का अभिनंदन कवि बड़ी भावुकता के साथ करता है—

हम धन्य हैं, हमारी जननी
मातृभूमि धन्य है कि हमने
अपनी ही आँखों
मानव के ही रूप तुम्हें देखा है ।

'हिमालय गरज रहा है' राष्ट्रीय भावना से अनुप्रेरित काव्य-ग्रंथ है। राष्ट्रीय भावनाओं के ओजस्वी कवि दिनकरजी की 'मेरे नगपति मेरे विशाल' कविता जैसे आवेश और हुंकार के दर्शन इसमें होते हैं। वस्तुतः दिनकर की 'परशुराम की प्रतीक्षा' की रचना के पीछे जो प्रेरक परिस्थितियाँ थीं, वही 'हिमालय गरज रहा है' के सृजन की प्रेरणा रहीं। पंचशील के सिद्धान्तों की उद्घोषणा करने वाले देश चीन का भारत पर आक्रमण एक 'शौक' था, जिसने राष्ट्र नेता जवाहरलाल नेहरू और भारतीय जनता को मानो सोते से चौंका दिया। हमारी परम्परागत मान्यताओं की व्यावहारिकता पर एक विराट् प्रश्नचिह्न लग गया है। यह विश्वासघात उस हिमालय की छाती पर हुआ, जो युगों-युगों से मानव-जीवन के विकास-क्रम का साक्षी रहा है, जिसने मनुष्य को उसकी प्रारम्भिक दशा में देखा था और जो आज तक की उसकी 'करनी' देखकर क्षुब्ध है। पर हिमालय इस तथ्य का भी साक्षी है कि इस धरती पर ऐसे प्राणियों ने भी जन्म लिया, जो अपने सत्कर्मों के कारण देवों से भी बढ़कर पूज्य रहे। विशेषकर भारत में तो ऐसे महान व्यक्तियों की एक सुदीर्घ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परम्परा है। हिमालय के मुख से कवि ने भारत की उदार मानवतावादी परम्पराओं का यशोगान कराया है। इस देश में वीरों की कमी कभी नहीं रही; पर यह देश किसी अन्य देश पर आक्रमण करने कभी नहीं गया। हाँ, आक्रमण और अन्याय का प्रतिरोध करने में भी वह पीछे नहीं रहा—

मुझे याद है भारत ही इक
जनपद, जिसने सर न झुकाया
डरकर अन्यायी के आगे
सतत अहिंसा उसका नारा।

यही परम्परा आधुनिक युग में भी यथावत् रही, जब महात्मा गांधी सदृश वीरों ने अन्याय, क्रूरता और दमन का प्रतिरोध निःशस्त्र आन्दोलन द्वारा किया। गांधी-महिमा का बखान हिमालय के माध्यम से कवि ने इन शब्दों में किया है—

नव्य चेतना भर भर कर चिर
पुण्यधरा को कर्मोन्मुख कर
युग स्रष्टा ने सदियों पीड़ित
जाति को किया अति गर्वोन्नत।
भौतिकता की तूती बोले
विज्ञान ग्रहान्तर गमन करे
युगान्तर कर डाले लालसा
तब भी गांधी मार्ग चलेगा।

उदार मानवीय परम्पराओं वाले इस देश पर चीन का आक्रमण हिमालय के अन्तर को आक्रोशवेष्टित कर देता है और हिमालय गरजकर उसे चुनौती देता है कि यहाँ चन्द्रगुप्त, भीष्म पितामह, गाण्डीवधारी अर्जुन, राणा प्रताप, शिवाजी, वेलुत्तम्पी जैसे वीर तुम्हारे आक्रमण को विफल कर देने को प्रस्तुत हैं। जननी जन्म-भूमि पर अपने प्राणों को समर्पित करने को प्रस्तुत रहने वाले जवाहरलाल सम्प्रति इस देश की वलगाओं को अपने हाथों में लिए हैं, जिन पर कभी तुम भी श्रद्धा-सुमन बरसाते थे। कन्फ्यूशियस के देश वालो! तुम्हें वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, शंकराचार्य, तुलसी, कम्बर, रवीन्द्र के इस देश पर आक्रमण करने में लज्जित होना चाहिए—

पावन विश्व महाकवियों का
यह जन्म देश है, जग जिनका
भक्ति भाव से प्रणमन करता
रुको, झुका दो अपना माथा।

अतः यदि तुम्हें आक्रमण करना ही है तो प्रेम का आक्रमण करो क्योंकि प्रेम ही मनुष्य का सबसे बड़ा बल है, जिससे यह अपने अस्तित्व को बनाये रख सका है।

तदनन्तर हिमालय भारतीय कृषकों-श्रमिकों को सम्बोधित करता है और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उनका प्रशस्ति गान करता हुआ उन्हें सजग करता है कि युद्ध के इस काल में उनका बहुत महत्वपूर्ण दायित्व है। यों संग्राम एक रोग है, जो मनुष्य की बर्बरता और पशुत्व का प्रतीक है, पर वह कभी-कभी धर्म बन जाता है। अतः कृषकों-श्रमिकों को भी यह युद्ध लड़ना होगा। युद्ध के लिए उन्हें बन्दूकें उठाकर युद्धक्षेत्र में नहीं जाना होगा, अपितु अधिकाधिक श्रम करके देश की आन्तरिक स्थिति को संभाले रहना होगा।

हिमालय यह सन्देश प्रसारित कर मौन हो जाता है और उसकी गुञ्जायमान ध्वनि से ऐसा लगता है जैसे—

विगत रञ्जित ऐतिहासिक
धर्म कर्मों के पथों को
लाँघकर युगधर्म सम्मुख
मुस्कराते आ खड़ा है।

'हिमालय गरज रहा है' काव्य को खण्डकाव्य की संज्ञा दी गयी है। इसको सर्गों में नामकरण के साथ विभाजित तो नहीं किया गया है, किन्तु इसके तीन खण्ड स्पष्ट दिखाई देते हैं। इनके अतिरिक्त चार छन्दों का एक समापन खण्ड है। 'श्रद्धांजलियाँ' शीर्षक कविता, जो प्रारम्भ में प्रस्तुत की गयी है, मंगलाचरण-स्वरूप है। 'श्रद्धांजलियाँ' प्रासंगिक रूप से राष्ट्र नेता जवाहरलाल नेहरू की स्मृति में प्रस्तुत हैं। तीन अनाम सर्गों में प्रथम में 'प्रपितामह हिमवान' का महत्व-गायन है, दूसरे में हिमालय द्वारा भारत की उज्ज्वल सांस्कृतिक परम्पराओं की याद और आक्रामक चीन की भर्त्सना है, तीसरे में हिमालय द्वारा कृषकों-श्रमिकों को सम्बोधन है। समापन-खण्ड में हिमालय के मौन रह जाने तथा युगधर्म के सम्मुख आ खड़े होने की बात कही गयी है।

'हिमालय गरज रहा है' केरलीय हिन्दी-लेखकों द्वारा प्रस्तुत एकमात्र खण्ड-काव्य है। इसमें डॉ. नायर ने उत्तर-दक्षिण के सभी तथाकथित भेदभावों को विस्मृत कर भारत राष्ट्र की वंदना की है और अभूतपूर्व भावात्मक एकता का परिचय दिया है। वस्तुतः इसमें डॉ. नायर की उदार राष्ट्रवादी भावनाएँ अभिव्यंजित हुई हैं। जैसाकि पहले कहा जा चुका है, डॉ. नायर का मूल दृष्टिकोण राष्ट्रीय विचारधारा से ओतप्रोत है और 'हिमालय गरज रहा है' में जो क्षोभ और आक्रोश है, वह किसी राष्ट्रवादी के हृदय पर हुए आघात की ही अभिव्यक्ति है।

'हिमालय गरज रहा है' आक्रामक के प्रति भारत की आत्मा के आक्रोश का एक जीवनस्मारक है तथा केरलीयों की हिन्दी को एक विशिष्ट देन है।

डॉ. विजयन : कथ्य और तथ्य

केरलीय हिन्दी काव्य-सृजन के क्षेत्र में 'कथ्य और तथ्य' में संकलित डॉ. विजयन की कविताएँ एक नवीनधारा का परिचय देती हैं। इनमें कितने 'आँखिन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की देखी' को अंकित किया है। कवि ने 'आत्मकथ्य' में कहा है कि "कथ्य और तथ्य" में मैंने अपने जीवन के भोगे हुए क्षणों को, जीवन-परिवेश में दृष्टिगत तथ्य तथा साक्षात्कृत सत्य को यथासम्भव वाणी देने का प्रयत्न किया है।" वस्तुत: डॉ. विजयन ने व्यंग्य का पैना शस्त्र हाथ में लेकर इन कविताओं में चतुर्दिक प्रहार किये हैं। शिक्षा-जगत से सम्बद्ध होने के कारण कवि उसके भीतरी खोखलेपन से परिचित है और 'परीक्षक', कुद्ध छात्र', 'शोधछात्रा', 'विशेषज्ञ' 'विधाता', 'सर्वज्ञ,. 'चुनाव की लड़ाई', 'एकलव्य', 'शिक्षक' शीर्षक कविताओं में यह खोखलापन उजागर हुआ है। प्राकृतिक उपमानों के माध्यम से कवि क्रुद्ध छात्रों का बड़ा सटीक अंकन किया है—

सन् सन् कर आते हैं
उनचासों पवन,
क्रुद्ध
अतृप्त युवा पीढ़ी
क्रुद्ध छात्र
होहल्ला मचाकर
परीक्षा भवन से जा रहे हैं…
खड़े हैं डरे हुए कंपित तरुपादप
नहीं,
ये परीक्षा के निरीक्षक
छात्रों के आक्रमण से भीत।

'शोधछात्रा' शीर्षक कविता में शीतल, मंद, सुगन्धित वासन्ती पवन की समता आधुनिक शोध-छात्रा से की गयी है।

पुष्कल ग्रंथ भार
ढोकर कोमल कर
सुवासित शोध छात्रा सी
शोध करती
युवजनों का
युवमनों का
आती वासन्ती वायु
मन्द-मन्द।

'विशेषज्ञ', 'विधाता' और 'सर्वज्ञ' कविताओं में अनेकों ऐसे आधुनिक आचार्यों के आडम्बर का पर्दाफाश होता है, जिनकी कथनी और करनी में अन्तर होता है, जो वैष्णव-भक्ति के विशेषज्ञ होते हैं तथा मुर्गे का माँस खाकर वैष्णवी दया पर घण्टों भाषण करते हैं, जो परीक्षाओं की उत्तर-पुस्तिकाओं का बिना देखे परीक्षण करते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं तथा मूर्ख चरणदास चेलों को प्रथम श्रेणी देकर विद्रोही स्वाधीन चिन्तक छात्रों को पराजित करते हैं तथा जो नवीन ज्ञान का अर्जन करने से कतराते हैं। ऐसे ही एक—

सर्वज्ञ हैं
पण्डितवर ज्ञानेश्वर पाण्डे ।
ज्ञान तो लेते नहीं
देते ही रहते हैं ।
नूतन ग्रन्थों के चिर वैरी
आचार्यवर कहते हैं—
'नया साहित्य ! !
इसमें क्या रखा है पढ़ने को ।'

शिक्षा के अतिरिक्त जीवन के अन्य क्षेत्रों में व्याप्त अनीति, आडम्बर और भ्रष्टाचार को भी कवि की पैनी व्यंग्य दृष्टि ने छोड़ा नहीं है। ऐश्वर्यवैभव में चलती, कर्मविरत राजनीति के प्रति कवि का आक्रोश इन शब्दों में अभिव्यक्त हुआ है—

'क्या भारत माता ऐसी है
जो घूमती नित्य इम्पाला में
खाती है 'अलका' का भोजन
जीती नित सुख, भोग में ?'—
ऐसा सोचता हुआ लौटा मैं
सामने खड़ा था भिखारी,
भारत-पुत्र,
जूठे पत्तल की चाह में
कुत्ते सब चले गये थे ।

'आज का भारत' कविता में कवि ने अपनी अमृतमयी भारतीय संस्कृति का परित्याग कर पश्चिमी सभ्यता की विष ज्वाला से दग्ध भारतीयों को व्यंग्य की पैनी छुरी से झिंझोड़ा है। एक मॉडर्न होटल का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

राक्षस की भाँति यह सोता है दिन भर
और साँझ हो जाने पर
शतशत बल्बों के तृष्णा भरे नयनों से
घूरता है चारों ओर।...
मादक तरल द्रव पीने की चाह से
विरल वसना पीनस्तनी 'कैबरा नर्तकी' की
छाया का सुख-स्पर्श पाने के मोह से
रजनी के जागरण का मदिरोत्सव मनाने को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

धनिक वणिक, तस्कर व्यापारी,
बड़े-बड़े अफसर आते हैं यहाँ नित ।

'संध्या' शीर्षक कविता में कवि ने संध्या को मेघ-जलयान से उतरी एक सुन्दरी 'पश्चिमीवामा' के रूप में चित्रित किया है, जो निराला की 'संध्या-सुन्दरी परी' को मात करती हुई दिखाई देती है—

कन्धे तक फैले
सुनहरे केशजाल,
अधरों में लिपिस्टिक की लालिमा,
घूमने निकला है
कोचिन के समुद्र तीर ।
छोड़ रही
सिगरेट की धूमराशि
बार-बार
घनीभूत धूमराशि
फैली बन अँधियारी;
उसी में खो गयी
वामा वह मतवाली ।

डॉ. विजयन की उक्त व्यंग्य कविताएँ अत्यंत सशक्त हैं । अनेक कविताओं में व्यंग्य को उभारने में प्रकृति को पृष्ठिभूमि बनाया गया है, जिनमें कवि की बिम्ब-रचना-क्षमता के फलस्वरूप प्रकृति के सजीव चित्र तो उभरते ही हैं, कवि का अपना अभिप्रेत व्यंग्य भी अचूक बाण की तरह लक्ष्योन्मुख हो जाता है । समाज के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त विषमता और आडम्बर को व्यंग्य की नोक से कवि ने सफलतापूर्वक उघाड़ा है और उसके बीच से कवि का युगबोध और भारतीयता में अखण्ड विश्वास मुखर होता है । व्यंग्य के लिए कवि का भाषा पर जो अधिकार चाहिए, वह डॉ. विजयन का है । भाषा और छन्द पर ऐसा नियंत्रण हिन्दी के अत्यंत समर्थ कवि निराला की याद दिलाता है । समग्रतः ये कविताएँ केरलीय हिन्दी काव्य-सृजन के क्षेत्र में एक नयी ताजगी का परिचय देती हैं इन्हें 'डॉ. विजयन की काव्य-प्रतिभा का नवांकुर' कहा गया है, जिसके पल्लवित-पुष्पित होने की अनन्त संभावनाएँ हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नाटक

'काव्येषु नाटकं रम्यं' के अनुसार नाटक सर्वाधिक रमणीय रचना है। केरल में भी इस रमणीय विधा को विकसित करने का प्रयास किया गया, परन्तु विकास-क्रम का अध्ययन करने पर अब तक प्रकाश में आने वाली प्रायः कम रचनाएँ रही हैं। मौलिक लेखन तो समग्रतः बहुत कम हो सका।[1] हिन्दी साहित्य का अवलोकन करने पर यह असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि नाटक का परम्परागत विकास भारतेन्दुकाल से मिलने लगता है। इससे पहले रासलीला, रामलीला, पारसीक थियेटर ही जनता के मनोरंजन के साधन बने हुए थे।[2] भारतेन्दुकाल के नाटकों में विस्तृतता को प्रश्रय प्राप्त होता था, इसलिये उनमें गहराई एवं विशदता कम होती थी। हिन्दी के मौलिक नाटक की स्थिति गद्यकाल के द्वितीय उत्थान तक अस्वस्थ रही। बंगला से हिन्दी अनुवाद प्रारम्भ हो गये थे, इसलिये घिसी-पिटी पद्धति को प्रकाश में आने का अवसर मिलने लगा था। प्रयाग और काशी की नाटक मंडलियों के लिये रंगशाला के अनुकूल दो एक छोटे-मोटे नाटक लिखे गये, परन्तु साहित्यिक प्रसिद्धि न पा सकने के कारण उनका उत्थान गौण ही बना रहा।[3]

केरलीय हिन्दी लेखकों के प्रयास का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि इस दिशा में प्रायः स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद ही उनका योगदान प्रकाश में आ सका। स्वतंत्रता पूर्व यह परम्परा नहीं मिलती है भले ही मलयालम में वे सधे नाटक प्रस्तुत कर सके हों। मलयालम साहित्यकारों द्वारा प्रस्तुत हिन्दी के नाटकों पर मलयालम नाट्य परम्परा का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। मलयालम रचनाकार ही हिन्दी नाटक का रचनाकार होता था, इसलिये वह अभिव्यंजनात्मकता उनकी लेखनी से उतर जाती है और कथन-व्यवहार में दिखाई पड़ जाती है। हाँ, यह अवश्य कह सकते हैं कि केरल के हिन्दी नाटककार का अभ्युदय, इतिहास-परक है न कि समाजपरक। इतिहास के द्वारा केरलीय नाटककार समाज की संस्कृति प्रस्तुत करता है। सच तो यह है कि उनका रचना-संसार इतिहास से जुड़ कर चलता है। केरल के कई पुरुषों के विस्मृत गौरव का स्मरण दिलाना वे अपना कर्तव्य समझते हैं। सामाजिक नाटकों में भी उनका अपना इतिहास निर्मित दिखलाई पड़ता है। वर्तमान को अतीत परक बनाने की चेष्टा केरलीय हिन्दी नाटककार की सशक्त चेष्टा प्रतीत होती है।

डॉ. जी. गोपीनाथन ने केरल की हिन्दी नाटक-परम्परा को 1958 से माना

---

1. केरलीयों की हिन्दी को देन—डॉ. जी. गोपीनाथन्, पृ. 105
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास—डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ. 174
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास—रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 469

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है । उनके अनुसार—"सन् 1958 में त्रिवेन्द्रम में एक हिन्दी नाटकोत्सव हुआ था जिसमें चार नाटक पुरस्कृत हुये । 'प्रेमस्मारक', 'शिक्षित की ओर', 'हम भाई-भाई हैं' और 'वीर केरल' । इनमें से एक भी नाटक प्रकाशित नहीं हुआ । एक सम्पूर्ण मौलिक हिन्दी नाटक 'सेवाश्रम' प्रकाशित करने का श्रेय श्री एन. चन्द्रशेखरन नायर को है ।"[1] इस प्रकार गोपीनाथन के कथन के आधार पर प्रथम प्रकाशित मौलिक नाटक 'सेवाश्रम' ही है । इससे पूर्व लिखित नाटक प्रकाशित नहीं हो सके थे ।

सेवाश्रम :

सेवाश्रम मई सन् 1968 में पहली बार प्रकाशित हुआ था । सन् 1958 में पुरस्कृत नाटकों के समय से ठीक दस वर्ष बाद यह कृति प्रकाश में आयी थी । वह 'कुरुक्षेत्र जागता है' एकांकी का परिवर्द्धित रूप है, जिसे लेखक ने प्रस्तावता में स्पष्ट कर दिया है ।[2] स्वतंत्रता के आस-पास का काल संक्रमण काल माना जा सकता है, क्योंकि विदेशी सत्ता के समापन एवं स्वदेशी सत्ता के सूर्योदय का यह समय परिवर्तन का समय था । इसलिये भारतीय इतिहास को सन् 1947 के आस पास का समय अत्यन्त महत्वपूर्ण समय हो गया ।[3] अतएव लेखक ने इस काल को ही अपना विषय-क्षेत्र चुना और सफलतापूर्वक उस चयन को नाटकीय रूप प्रदान कर सका । रोचकता एवं प्रभावात्मकता दोनों दृष्टियों से इस कृति ने अपना विशेष स्थान बनाया है ।

प्रस्तुत नाटक देशप्रेम के गीत गाती स्त्रियों की मधुर ध्वनि-लहरी से प्रारंभ होता है । संपूर्ण नाटक तीन अंकों से सम्बद्ध है । प्रथम अंक के पाँच दृश्य, द्वितीय अंक के पाँच दृश्य तथा तृतीय अंक के चार दृश्य नाटक के विकास के सोपान हैं । इन सभी के सहारे दर्शक उद्देश्य की प्राप्ति करते हुये हर्षातिरेक की अनुभूति करते हैं । नाटक की कथावस्तु बहुत विस्तृत नहीं है, परन्तु काल स्वरूप की दृष्टि से 'सेवाश्रम' विस्तार-प्राप्त कृति हो गयी है । राजा अंग्रेजों से मिलकर अपनी सत्ता की सुरक्षा करना चाहता है । विदेशी अंग्रेज उसकी सहायता से अपनी कुत्सित कामना को सफलीभूत देखना चाहते हैं । फलतः राष्ट्र को विध्वसक साधनों द्वारा क्षत-विक्षत करने-करवाने में किसी प्रकार का संकोच नहीं करते हैं । बिन्दु और महारानी राजा को विदेशी नीति के प्रति सजग रहने के लिये कहते हैं, परन्तु वह प्रारम्भ में सत्ता-प्राप्ति के मोह में कुछ भी नहीं समझ पाता है । अनावश्यक, पत्नी माया देवी के प्रति, सन्देह व्यक्त करता है और उससे अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है । जब अंग्रेजों की कूटनीति से वाकिब हो जाता है तो उचित मार्ग पर

1. केरलीयों की हिन्दी को देन—डॉ. जी. गोपीनाथन्, पृ. 105
   राजकमल प्रकाशन, संस्करण 1963 ई. ।
2. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, प्रस्तावना, पृ. 5
3. वही, प्रस्तावना, पृ. 1

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाता है। अपने ही आदमी गप्पू के मारे जाने के बाद उसकी आँख और खुल जाती है और तीसरे अंक के प्रथम दृश्य से उसमें विचार-परिवर्तन मिलने लगते हैं। अंत में अनंग से माया के अनुचित सम्बन्ध के विषय में जो उसकी भ्राँति थी, वह भी समाप्त होती है और अपने किये पर पश्चाताप करता है। गर्वनर बनने से इंकार कर देता है। सेवाश्रम में रहकर जनता की सेवा करने का संकल्प करता है। इस प्रकार नाटक समाप्त होता है।

कथावस्तु की दृष्टि से नाटक लघु आधारों पर आश्रित है, परन्तु उद्देश्य की महत्तर योजना के कारण वह एक विशिष्ट नाटक बन गया है। चारित्रिक सौन्दर्य की ओर दृष्टिपात करने पर राजा, बिन्दु, मायादेवी, महारानी और मालती नामक पात्र ही प्रमुख हैं। राजा को छोड़कर सभी पात्र, युगीन-परिवर्तन में विश्वास करते हैं। राजा को इस परिवर्तन के अनुसार परिवर्तित होने के लिये प्रेरणा प्रदान करते रहते हैं। अंत में राजा अपनी भावना को देश की सेवा के अनुकूल बना लेते हैं। बिन्दु और महारानी के चरित्र का मूल्यांकन एक साथ करने पर वे दो प्रकार की जिम्मेदारियों को निर्वाह करते हुये अलग-अलग दिखाई पड़ते हैं। बिन्दु, राजा और जनता की पारस्परिक दूरी समाप्त करने में सफल होता है, तो महारानी राजा और माया को सन्निकट लाने में सफल होती है। चारित्रिक सौन्दर्य के अनुसार उद्देश्यगत सफलता देखी जा सकती है। हाँ, मालती अवश्य प्रेम की विभूति होते हुये भी, प्रेमी के बचाव में अपना जीवन समाप्त कर देती है। वह भी वीरतापूर्ण ढंग से, न कि कायर सरीखे। बिन्दु के प्रति उसकी आसक्ति है, किन्तु उसके देशप्रेम के प्रति उसको और भी आसक्ति है। वह उसे ही सर्वस्व मानकर चलती है, किन्तु अपने इस मानने को प्रत्यक्ष होने नहीं देती है। उसके लिये मर जाती है, किन्तु प्रेम की जलती हुई अग्नि की एक लपट भी बाहर नहीं होने देती है। उसके व्यक्तित्व में जयशंकर प्रसाद की देवसेना और मालविका के समुचित गुण विद्यमान हैं।

पृथक-पृथक चरित्रों का मूल्यांकन करने पर यह निःसंदेह रूप से कहा जा सकता है कि लेखक ने, अपने उद्देश्य की सार्थकता राजा के व्यक्तित्व में सन्निहित कर दिया है। राजा के परवर्ती परिवर्तन में गांधी जी के हृदय-परिवर्तन के सिद्धान्त की छाया आभासित होती है। प्रत्येक व्यक्ति का जीवन उतार-चढ़ाव लिये होता है। राजा का जीवन भी उतार-चढ़ाव का जीवन है। वह सच्चे मानव के रूप में नाटक में प्रतीत का विषय बना रहता है। माया देवी के प्रति प्रारंभ में वह संदेह करता दिखाया गया है जो एक मानवीय चरित्र के गुण के अन्तर्गत आता है। कोई भी व्यक्ति अपनी पत्नी के प्रेम को, दूसरे द्वारा प्राप्त करते देखकर वही सोचता, जो राजा सोचता है और जिसके सोचने के कारण ही संदेह में पड़ा रहता है। यदि वह बात पहले ही जान गया होता कि मायादेवी अपनी ही कवितायें अनंग नामक कवि के नाम से छपवाती है तो शायद माया और अनंग के अनुचित सम्बन्ध पर कभी भी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संदेह न होता। नाटककार ने इसी रहस्य के द्वारा नाटक को गतिशील बनाने में सफलता प्राप्त की है।

राजा सत्ता के लोभ में व्यक्तिगत महत्व को भुला बैठता है। परंपरा की गरिमा को गर्व की आँधी में उड़ा देता है। बिन्दु तक पर उसकी आस्था नहीं रह जाती है, और उसे उपदेश देने वाला व्यक्ति मानकर, झिड़कने में संकोच नहीं होता है—"बिन्दु तुम जाओ। मैं अब कोई उपदेश सुनना नहीं चाहता। हमारे रास्ते अलग-अलग हैं। तुम अपने रास्ते जाओ। तुम्हारे उपदेशों की भी जरूरत नहीं।"[1]

अपने स्वत्व-प्राप्ति की कामना के कारण वह आक्रोश से जलता दिखलायी पड़ता है। यह आक्रोश बिन्दु से बात करते समय प्रकाश में आ गया है—"…भारत में अनेक प्रकार के वैभिन्य को तुम मानते हो तो राजशासन के साथ ही महत्व की कल्पना क्यों नहीं कर सकते? शासन का अधिकार राजा से छीन लेने में ही बड़प्पन देखते हो।"[2]

राजा के व्यक्तित्व में खीझ, झुंझलाहट, कुण्ठा, संशय एवं पश्चाताप की झलक समयानुकूल देखी जा सकती है। वह तीसरे अंक के प्रथम दृश्य से अपनी इन स्थितियों से उबरा हुआ दिखलाई पड़ता है, जहाँ से जनसेवा अपना लक्ष्य बना लेता है और विदेशियों की राजनीतिक चालों से भली भाँति परिचित हो जाता है। उसका यह उत्तर एक भारतीय राजा के गौरवपूर्ण व्यक्तित्व को उजागर करता है—"……तुम्हें पता नहीं तुम किसके सामने खड़े हो। क्या तुम्हारी आशा है कि हम सब कुछ सहेंगे। याद रखो, तुम्हारे जैसे म्लेच्छ मनुष्यों को हम यहाँ पैर नहीं रखने देंगे।"[3] जिस विदेशी के प्रति वह इतना वफादार बना हुआ था, उसी को इस प्रकार का उत्तर वह पहली बार देता है। अंत तक वह काफी उदार और दयालु बन जाता है। उसके प्रारंभिक व्यक्तित्व और अंतिम व्यक्तित्व की तुलना करने पर यह ज्ञात हो जाता है कि उसके जीवन की कहानी कठोरता से लेकर वीतरागी कोमलता तक में, विकास की यात्रा पूरी करने वाली, कहानी है। माया के दुखी हृदय को सांत्वना देते हुये वह कहता है—"देवी धैर्य धारण करो। पूरा आराम करना है। मालती देवी ने जो आत्मबलिदान कर दिया है, वह स्त्री-जाति की महान त्याग-भावना के लिये ज्वलंत उदाहरण है।"[4]

उसकी वीतरागता का अंतिम प्रमाण वहाँ देखने को मिलता है, जहां केन्द्र सरकार द्वारा गवर्नर नियुक्त कर दिया जाता है, लेकिन वह उस पद को इसलिये नहीं स्वीकार करना चाहता है कि गवर्नर और राजा के पद समान होते हैं। वह

---

1. सेवाश्रम—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर पृ. 51
2. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 65
3. वही, पृ. 73 4. वही, पृ. 90

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राजा बनकर रहने की स्थिति का अनुभव कर चुका है और अब और अधिक यांत्रिक जीवन की विवशता की विभीषिका वह नहीं देखना चाहता है, अपितु नवयुग की अनोखी ज्योति का दर्शन करके सेवाश्रम में जनकल्याण करना चाहता है।[1]

राजा के प्रायश्चित से नाटक की कथावस्तु में संवेदनशीलता आ गयी है। राजा को अपने किये पर ग्लानि होती है, क्योंकि अभी तक वह जो कुछ करता रहा उसका कारण थी लोभ से उत्पन्न अज्ञानता। मायादेवी जैसी पत्नी को भी भूल जाता है। अज्ञान के अंधकार में न देख सकने वाली उसकी आँखें अपने व्यक्तित्व के अंग को भी भूल जाती हैं। माया देवी के व्यक्तित्व के प्रति उत्पन्न उसके संदेह में यही संभावना दृष्टिगोचर होती है। स्वयं अपनी स्थिति को स्वीकार करता है—"मनुष्य जब अंधा हो जाता है तब वह क्या नहीं कर सकता। अंधकार में मनुष्य पिशाच बन जाता है। मुझे कैसा मोह व्याप रहा है। इस संसार में मैं अब जीवित हूँ। मुझे धिक्कार है।"[2]

राजा के चरित्र-निर्माण में लेखक की राष्ट्रीय एवं उपयोगितावादी भावना का समन्वित प्रतिफलन देखा जा सकता है। डॉ. नत्थन सिंह ने इसी सन्दर्भ में टिप्पणी करते हुये लिखा है—"इस कृति की रचनादृष्टि राष्ट्रीय तथा उपयोगितावाद के तत्वों से अनुप्राणित है। पतनशील सामन्त राजा को नवीन अहिंसक क्रान्ति का केतन लेकर जनता की जड़ता निवारण हेतु नेतृत्व सँभालते दिखाना इसी उद्देश्य-पूर्ति का परिणाम है।"[3]

राजा सन् 1947 के आस पास के समय के शासक का प्रतिनिधित्व करने वाला पात्र है, इसलिये उसकी संक्रमित मनोवृत्ति का द्विविधात्मक उद्घाटन हुआ है। वह भारत के देशी नरेशों के शासनान्त की स्थिति का समग्र रूप से संवाहक दिखलाया गया है, जिसके जीवन की परिवर्तित दशा का उल्लेख प्रकारान्तर से नाटककार ने कर दिया है। राजा की चारित्रिक संरचना के सम्बन्ध में यहाँ लेखक ने स्वतः स्पष्ट कर दिया है,[4] अतएव परिवर्तन-मूलक विश्लेषण करने पर, यह कहना अनुचित न होगा कि वह दोहरे संस्कारों से जकड़ा स्वतंत्रोन्मुखी व्यक्ति है। स्वाधीनता का विरोधी, किन्तु विदेशी का समर्थक होकर भी, स्वतंत्रता की आकांक्षा के संस्कार उसके अचेतन में छिपे रहते हैं, तभी तो बाद में जनसेवा की पताका फहराने वाला व्यक्ति बन जाता है। उसके ये ही अचेतन-धर्मी बीज वृक्ष का रूप प्राप्त करते हैं और अचेतन से प्रकट होकर नवचेतन की ज्योति प्रकीर्ण करते हैं। राजा के इस

1. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 93
2. वही, पृ. 83
3. देवयानी (भूमिका)—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 9
4. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 6 (पुरोवाक्)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चरित्र-योजना द्वारा ही लेखक युगभावना की विजय के संकल्प को साकार रूप प्रदान कर पाता है।

बिन्दु राजा का मित्र एवं देश का सेवक है। इसका प्रयोग नाटककार ने 'स्कंदगुप्त' के बंधुवर्मा की तरह किया है, परन्तु 'स्कंदगुप्त' के बंधुवर्मा की परिस्थिति और योजना से, 'सेवाश्रम' के बिन्दु की परिस्थिति और योजना की तुलना करने पर काफी भिन्नता दिखलाई पड़ती है। बिन्दु बंधुवर्मा की तरह नाटक के नायक के सह-नायक रूप में प्रयुक्त हुआ है। जहाँ बंधुवर्मा स्कंदगुप्त के लिये प्राण देकर अपनी वीरता का परिचय देता है, वहीं बिन्दु विदेशियों का दमन करने का प्रयास और राजा को मार्ग पर लाने का प्रयत्न साथ-साथ करता है। वह अपने उद्देश्य की सफलता अपनी आँखों देखता है, लेकिन बंधुवर्मा स्कंद की लहराती विजय-पताका को अपनी आँखों से नहीं देख पाता है। हाँ, दोनों की, नायक के प्रति की जानेवाली सेवावृति एवं त्याग की भावना द्रष्टव्य है।

बिन्दु एक अच्छा मित्र, सच्चा स्वामिभक्त, कुशल राष्ट्रनायक, उदार जन-सेवक एवं निःस्वार्थ प्रेमी है। उसकी मित्रता राजा से है, जिसके प्रति शुभ-मार्ग प्रशस्त करना अपना उत्तरदायित्व मानता है। वह ग्रामीण जनता के हृदय का हार है। राजा की, संकट की घड़ी टालने में उसका महत्वपूर्ण योगदान है। वह नहीं चाहता है कि राजा और जनता की दूरी का लाभ उठाकर विदेशी राज्य करें। राजा को संकेत की भाषा में यही बतलाता है—"असमय पर सो जाने की आदत अच्छी नहीं है।"[1] वह राजा को विदेशी से सावधान रहने की सलाह देता है।[2]

राजा के साथ वह मित्रवत व्यवहार ही नहीं रखता, अपितु स्वामी की तरह उनको मानता है और उनकी आज्ञा की कद्र करता है। उनके स्वागत के लिये, क्रुद्ध जनता तक को, संबोधित करता है। जनता राजा के क्रियाकलाप से खिन्न है, इसलिये राजा को तिरस्कृत करना चाहती है, तथापि बिन्दु उसमें आस्था रखने के लिये कहता है—"महाराज के कारण देश को बड़ी क्षति पहुँची है। ठीक है, मैं उसे उनकी विवशता ही मानता हूँ। फिर भी वे हमारे हैं। युग-युग से उनके पूर्वज महापुरुषों से इस देश का सम्बन्ध है।"[3]

वह नागरिकों को समझाता है और भविष्य में उनसे होने वाले लाभ का व्यावहारिक उपयोग बतलाता है।—"अगर ऐसे प्रतापशाली व्यक्ति अपनी शक्ति और सहानुभूति के साथ किसी क्रियात्मक कार्य में प्रवृत्त हो जाये तो देश के लिये इससे बड़ा लाभ हो सकता है।"[4] इतना ही नहीं, राजा के विरुद्ध भेजी गयी सरकारी सेना का सामना करने के लिये भी अपनी कुशाग्र बुद्धि द्वारा जनता को तैयार कर लेता

---

1. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 32
2. वही, पृ. 52 3. वही, पृ. 61 4. वही, पृ. 62

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है ।[1] जनता एक स्वर से उसके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग का स्वागत करती है । उसकी जनसेवा स्तुत्य है, इसीलिये सभी नागरिक उसे ही अपना प्रतिनिधि चुनने की परस्पर कामना व्यक्त करते है—"मुझे महात्मा बिन्दु जी से बड़ी आशा है । उन पर विश्वास रखा जा सकता है । अगर सरकार अपना मध्यस्थ चुन लेगी तो हम अपने लिये बिन्दु जी को क्यों न चुने ।"[2] समग्रत: वह राजा और ग्रामीणों के बीच सामंजस्य स्थापित करने वाली प्रमुख कड़ी है । एक ओर, राजा को जनहित के लिये प्रेरित करना तथा अपनी शक्ति और धन का उपयोग करने की सलाह देना, दूसरी ओर ग्रामीणों में राजा के प्रति विश्वास जागृत करना, उस समान धर्मी व्यक्ति द्वारा ही संभव था । द्वितीय अंक के पाँचवें दृश्य में उसके इस प्रयास की महत्ता प्रतिपादित मिलती है, जिस प्रकार जनता के हृदय में उसने पूज्य स्थान बना लिया है, उसी प्रकार राजा भी उसके उपकारों से अभिभूत हो गया है । वह उसकी सेवा और त्याग-वृत्ति से अवगत होकर ही सदैव अपने साथ रखने की चेष्टा करता है—"ना, तुम अब मुझे छोड़कर नहीं जाओगे । तुम्हारी तपस्या पूरी नहीं हुई है । यद्यपि सेवा और प्रेम प्रतिदान नहीं चाहते फिर भी वे अलग नहीं रह सकते । तुमने···मेरे लिये सब कुछ सह लिया । तुम्हारी सहायता का प्रत्युपकार मैं क्या कर सकता हूँ ।"[3]

वह देश-सेवा के कारण अपनी ओर आकर्षित मालती से दो बात करने का भी अवसर नहीं निकाल पाता है । दूसरे अंक के चौथे दृश्य में मालती उसे और वह मालती को देखता है, किन्तु बातचीत नहीं हो पाती है । इसलिये नाटककार ने उसके हृदय के प्रेम के स्तर को छूने का प्रयास तो किया है, किन्तु उसके व्यक्तित्व से जोड़ नहीं सका, जिसका कारण बिन्दु की व्यक्तिगत व्यस्तता ही कही जा सकती है । लेखक मालती को उसके प्रति आसक्त दिखाकर भी उसे अनासक्त बनाये रखता है, जो आस्वादक के लिये अंत तक खटकने वाली बात प्रतीत होती है ।

मायादेवी राजा की पत्नी है । इस देवी का चित्रण यथार्थवादी धरातल पर हुआ है ।[4] वह द्विविधापूर्ण व्यक्तित्व वाली संपूर्ण नारी है । एक ओर जनता के प्रति सहानुभूति करती हुई जनसेविका के रूप में प्रकट हुई है, तो दूसरी ओर अपने पति के प्रति अनन्य निष्ठा रखने वाली पत्नी है । उसको अनावश्यक ही अपने पति के संदेह का शिकार होना पड़ता है । वह एक कवयित्री है । राजा के प्रेम में रचित अपनी कवितायें अनंग नामक कल्पित कवि के नाम प्रकाशित करवाती है । अनंग की कविताओं की प्रशंसा करते वह थकती नहीं और उन्हें ही अपना आदर्श मानती है ।

---

1. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखर नायर पृ. 63
2. वही, पृ. 70
3. वही, पृ. 75
4. आधुनिक हिन्दी साहित्य को अहिन्दी लेखकों का योगदान—डॉ. विलास गुप्ते, पृ. 200, वितरक—हिन्दी प्रचारक संस्थान, पिशाचमोचन, वाराणसी—1

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसलिए राजा उससे असंतुष्ट हो जाते हैं और अनंग के साथ उसके अनुचित सम्बन्ध का आरोप लगाते हैं। वह अपने कविगत गुण को प्रकट नहीं करना चाहती है। वह अन्तर्मुखी व्यक्तित्व की महिला है, इसलिये कवयित्री नाम से प्रकाश में आने की वह चेष्टा नहीं करती है। यह रहस्य तभी खोलती है, जबकि आश्रम में लगायी गयी आग से उसका शरीर झुलस जाता है और वह स्वयं को अंतिमक्षण के सन्निकट महसूस करने लगती है। वह प्रेम-विभोर होकर उस समय अपने राजा से सब कुछ कह देना चाहती है। राजा के गले में हाथ डाले अपना हृदय खोलकर रख देती है—"आप जानते थे कि मैं कविता लिखती थी। मुझमें उसका चसका बढ़ गया। मैं आपके प्रेम में उन्मत्त बन गयी। कविता मुझसे निःसृत होती गयी। अब मुझे आश्चर्य लगता है, वे कवितायें मैं कैसे लिख सकीं। मैंने उन्हें अनंग के नाम से प्रकाशित किया।"[1]

माया एक उदार हृदया जनसेविका है। वह सेवाश्रम की व्यवस्था में हर प्रकार का सहयोग प्रदान करती है। गरीब हरिजन की लड़कियों की शिक्षा-दीक्षा के लिये वह अपने पिता द्वारा प्राप्त राशि, मालती को देने का वचन देती है—"राशि की चिन्ता मत करो। मालती मेरे पिता ने परसों कुछ रकम मेरे लिये भेज दी है। उसका सदुपयोग भी होगा।"[2]

वह परिवर्तन के युग की पहचान रखती है। संक्रमण काल में व्यक्तिगत प्रभुत्व समाप्त करने का अभियान चल रहा है। ऊँच-नीच के भेदभाव को मिटाकर परस्पर सहयोग-भावना के विकास की आँधी में घमंडी प्रभुओं की जड़ हिल जायेगी। प्रभुत्व का नामोनिशान मिट जायेगा और सवर्ण कहलाने वाले मिल-मालिकों को हरिजनों की चाकरी करनी पड़ेगी।"[3]

वह पतिव्रता धर्मपत्नी है। पति की सुन्दरता के सामने दुनिया की सुन्दरता उसे फीकी दिखलायी पड़ती है। अपने प्रेम पर भी उसका अदम्य विश्वास है। कभी उसकी मुस्कान के सामने उसका राजा लोट-पोट हो जाता था। क्षण भर भी अलग नहीं करना चाहता था, परन्तु आज क्यों उसे उपेक्षित समझने लगे हैं, इसका उसे हार्दिक कष्ट है इसलिये पूछती है—"मेरे प्रभु जब हँसते थे चाँद भी लज्जित हो जाता था। फीका पड़ जाता था। मुझ से वे एक क्षण भी अलग रहना नहीं चाहते थे। मेरी एक मुस्कराहट पर वे लोट-पोट हो जाते थे।···प्राणनाथ मैंने क्या अपराध किया।"[4] वह पति द्वारा दिये गये आभूषणों को नहीं उतारती है। उसके शुभ गुणों के सामने स्वर्ग की विभूति भी वह नगण्य मानती है।"[5]

---

1. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन् नायर, पृ. 86
2. वही, पृ. 19
3. वही, पृ. 20
4. वही, पृ. 23
5. वही, पृ. 47

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मायादेवी के चरित्र की मनोवैज्ञानिक संरचना समस्त नारी जाति की संरचना कही जा सकती है। लेखक की संरचना की सृष्टि की महत्ता का मूल्यांकन करते हुये देखा जाय तो डॉ. नत्थन सिंह का यह उद्गार तथ्यपरक प्रतीत होने लगता है—"कथा-वस्तु और पात्र-योजना से अधिक महत्वपूर्ण है नाटक की रचना दृष्टि।"[1] मायादेवी जैसे विशिष्ट पात्रों के संदर्भ में नाटककार की रचना-दृष्टि पैनी और संदेशपूर्ण हो गयी है। माया के निर्माण के माध्यम से उसने सतत विकासमान संस्कृति का पोषण और ह्रासोन्मुख सभ्यता का विरोध व्यक्त किया है। उस स्वच्छ हृदया पात्रा के द्वारा संवृत्ति और विवृति के बीच फँसी नारी के संघर्षपूर्ण जीवन की अभिव्यक्ति करता है। वह अनावश्यक संदेह के गर्त में गिरी होने के कारण अपने को असंयमित पाती है। जो पहले अपने राजा का स्वागत विनम्रता और मुस्कान से करती थी, आज वही जोर से बोल पड़ती है। जो कभी अपने पति का स्मरण करके उन्मादिनी हो जाया करती थी, वही उसी पति के सामने संयम और मर्यादा को खोकर जोर से क्यों बोलने लगी है, इसका उसे तत्काल पश्चाताप होता है—"स्वामी आपका स्मरण करके मैं उन्मादिनी बन जाती थी। पर आपसे इस प्रकार अविनय करने की कल्पना तक नहीं करती थी। कर नहीं सकती थी। क्षमा कीजियेगा, मैं बराबर जोर से बोल पड़ती हूँ। छिः मुझे यह क्या हो रहा है।"[2]

वह सौभाग्य की मूर्ति, राजा की उपेक्षा से दो अंकों तक दुःखी बनी रहती है। तीसरे अंक में ही राजा की उपेक्षापूर्ण दृष्टि से उसे मुक्ति मिल पाती है। वह राजा के अनुकूल बनने का प्रयास करती है और बनी रहती है; परन्तु संदेह का निवारण हृदय देकर भी नहीं कर पाती है, इस बात का कष्ट उसे और विपत्ति में डाले रहता है।[3] अग्निदाह में झुलसी वह छटपटा रही है, परन्तु गरीब हरिजन बालिकाओं को नहीं भुला पाती है। वह उनके नृत्य देखने की कामना करती है—"माता जी मेरा अंतिम आग्रह है, उन बालिकाओं को बुलाये। वे मेरे सामने नृत्य करे।"[4]

आश्रम के जीवन को ही स्वर्गिक जीवन मानने वाली माया, दयालु हृदय की है। उसका दयार्द्र हृदय जगह-जगह छलक पड़ा है। मालती, माधुरी सबके प्रति उसकी सहानुभूति व्यक्त हुई है—

1. "मालती इस आश्रम के प्राण थी। इतनी उदारता और इतना प्यार किसमें मिलेगा।"[5]
2. "माधुरी कितनी रूपवती थी। हाय उसका जीवन अंधकार में डूब गया।"[6]

---

1. पुकार—डॉ. नत्थन सिंह, (सेवाश्रम-समीक्षा) जनवरी फरवरी अंक 72, पृ. 115-116। 2. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 24
3. वही, पृ. 82 4. वही, पृ. 80
5. वही, पृ. 90 6. वही, पृ. 92

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समग्रत : मायादेवी के चरित्र में लेखक ने नवजागरण के प्रात:काल में उठती नारी के चरित्र का चित्रण किया है। उसमें भावना और विचार दोनों दृष्टियों से उत्थान का उत्साह भरने का प्रयास किया गया है, जो सफलता पूर्वक सम्पन्न भी हुआ है।

माया के साथ मालती का चरित्रांकन कम महत्वपूर्ण नहीं होगा। मालती के जीवन की कहानी और भी दुखद दिखलायी पड़ती है। वह सबके लिये होती है, किन्तु स्वयं किसी की नहीं बन पाती है। वह प्रेमिका भाव से बिन्दु को अपनाती है, किन्तु हृदय की प्रेमाग्नि को प्रकट करके नहीं, अपितु सँजोकर रखे हुये शान्त भाव से जल करके। डॉ. जी. गोपीनाथन ने उसके प्रेम और बलिदान की तुलना जयशंकर प्रसाद के "चन्द्रगुप्त" नाटक की मालविका के प्रेम और बलिदान से की है।[1] इतना ही नहीं मालती की सेवा-दृष्टि भी चन्द्रगुप्त की मालविका की तरह परिष्कृत और निर्मल है। मालविका जहाँ आहतों की सेवा का प्रबन्ध करने में उत्साहित दिखती है—"अच्छा चलो कुछ नवीन आहत आ गये हैं, उनकी सेवा का प्रबन्ध करना है।"[2] वहीं मालती सेवाश्रम की संचालिका के रूप में शिक्षा-दीक्षा भी देती है और दीन-दुखियों की रक्षा का भार भी वहन करती है। चन्द्रगुप्त को देखते ही मालविका का हृदय उसके सौन्दर्य से अभिभूत हो जाता है—"स्नेह से हृदय चिकना हो जाता है। परन्तु बिछलने का भय भी होता है। अद्भुत युवक है।"[3] मालती भी बिन्दु के सौन्दर्य से अभिभूत हो जाती है—"कैसा तेज है, क्या ही प्रताप है, मैं इस प्रकाश पुंज के सामने अपने को भूल जाती हूँ।"[4]

मालविका चन्द्रगुप्त के लिये सब कुछ करने के लिये तत्पर दिखती है—"चन्द्रगुप्त के लिये सब कुछ करूँगी।"[5] और करती भी है। चन्द्रगुप्त के शयन-गृह में उसके परिच्छद को पहनकर स्वयं लेट जाती है। घातक, चन्द्रगुप्त समझकर उसकी हत्या कर देते हैं। इस प्रकार अपने प्राण देकर अपने प्रेमी के प्राण बचाने की लालसा से उसे जो सुखानुभूति होती है,[6] उससे कम मालती बिन्दु के प्राण बचाने की लालसा से सुखानुभूति का अनुभव नहीं करती है।[7] वह तो विदेशी को घायल करके अपने प्राण का उत्सर्ग करती है। वस्तुत: दोनों के बलिदान में प्रेम के अमरत्व की झलक विद्यमान है।

---

1. केरलीयों की हिन्दी को देन—डॉ. जी. गोपीनाथन्, पृ. 105
2. चन्द्रगुप्त—जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 122, सोलहवीं-आवृत्ति, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद। 3. वही, पृ. 108
4. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ 68
5. चन्द्रगुप्त—जयशंकर प्रसाद, पृ. 141 6. वही, पृ. 169
7. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन् नायर, पृ. 60-61

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रेम नारी के लिये वरदान होता है। मालती के यौवन की उमंग हिलोरें लेती उस सरिता की तरह है, जो मचल-मचल कर अपने हृदय की हलचल शान्त करने का उपक्रम करती है। वह बिन्दु के एक दृष्टिपात से आकर्षित हो जाती है, तभी तो मन को समझाते हुये प्रसाद जी के "स्कंदगुप्त" की देवसेना की तरह कहती है—"जब से आँखों ने इस मन से कुछ गुनगुनाकर सुनाया तब से इसकी यह गति हो गयी है। हाय रे आशा तू कहाँ इसे लिये आती है? मगर तू अंधी है। मैं तुझे अच्छी तरह जानती हूँ। तूने मेरे मन पर एकाधिकार कर लिया है। पर समझ ले यह बात हमेशा छिपी रहेगी। छिपी रहनी चाहिए। अगर किसी को पता लगे कि इस स्त्री का दिल किसी पुरुष से उलझ पड़ा है…तो वह अच्छा नहीं रहेगा।"[1]

वस्तुतः स्कंदगुप्त की देवसेना का अन्तर्द्वन्द्व भी कुछ इसी तरह है, तभी तो वह भी अपनी कल्पना को सो जाने के लिये कहती है—"हृदय की कोमल कल्पना! सो जा। जीवन में जिसकी संभावना नहीं, जिसे द्वार पर आये हुये लौटा दिया था, उसके लिये पुकार मचाना तेरे लिये क्या अच्छी बात है?"[2] मालती और देवसेना दोनों में प्रेम का अन्तर्द्वन्द्व है भले ही अन्य दृष्टियों से उनमें एकरूपता न हो। देवसेना का प्रेमी स्कंद प्रकट में मन की भावना की अभिव्यक्ति भी कर लेता है, परन्तु मालती का प्रेमी इसके प्रति पूर्णतः उदासीन लगता है, जिसमें उसकी व्यस्तता बहुत ज्यादा कारण बन गयी है। भावुकता में मालती "चन्द्रगुप्त" की मालविका की तरह है, परन्तु आन्तरिक संघर्ष में "स्कंदगुप्त" की देवसेना की भाँति प्रतीत होती है।

मालती बिन्दु को अपना देवता मानती है। वह इस बात को जानती है कि मैं तो उसे प्रेम करती हूँ, लेकिन उसे क्या पता कि मैं उसकी प्रेमिका हूँ। तथापि, प्रेम का संसार उसके चरणों पर समर्पित करने में वह जरा भी नहीं हिचकती है। वह तो चाहती ही नहीं कि प्रेम की अभिव्यक्ति प्रेमी से करूँ।[3] बल्कि उसकी शक्ति को अजेय बनी रहने की कामना करती है। अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध की राधा की भाँति "प्यारे जीवें जग हित करें, गेह चाहे न आवें"[4] का विचार रखती है। वह प्रिय को जनहित में लगा देखना चाहती—"देश आपको पुकारता है। आप अपनी सेवा उसे दे दें। मैं दूर खड़ी-खड़ी देखा करूँगी, प्रार्थना करूँगी, मेरे देवता की शक्ति

1. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन, नायर पृ. 60-61
2. स्कंदगुप्त—जयशंकर प्रसाद, पृ. 146 संस्करण-1973 ई.।
3. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखन् नायर, पृ. 68
4. प्रियप्रवास—अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, पृ. 253, नवम संस्करण, षोडस सर्ग।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अजेय हो ।[1] वह प्रेम को, निज के समर्पण और बलिदान द्वारा कृतकृत्य करती है । "प्रेम नारी का स्वरूप है ।"[2] यह स्वरूप मालती द्वारा भी प्रकाशित हो गया है ।

महारानी का चरित्र उन्मुक्त हृदय की नारी का चरित्र है । उसमें रूढ़िगत विवशता और परम्परागत मोह नहीं दिखलाई पड़ते हैं । वह भारतीय संस्कारों वाली महिला है । विदेशी के साथ शराब पीते राजा के प्रति घृणा व्यक्त करती है ।[3] वह ममता और कल्याण दोनों गुणों से सम्पन्न माँ है ।[4] वह उदार माँ की तरह पुत्र की पत्नी के प्रति विश्वस्त है ।[5] उसे दुखी देखकर प्रसन्न रहने का पाठ पढ़ाती है और विवश देखकर मार्ग-निर्देशन करती है ।[6] वह मानव मात्र की सेवा को सभी सुखों के कारण मानती है ।[7] वह कभी नहीं चाहती है कि उसका पुत्र स्वार्थ के वशीभूत होकर विदेशियों के चंगुल में फँसे और क्रांतिकारी बने ।[8] वह अपने पुत्र को भी समय के अनुसार परिवर्तित होने की शिक्षा देकर मार्ग पर लाती है । जनहित को प्रश्रय देने वाली राजमाता की सद्परामर्श का ही यह फल होता है कि राजा जनकल्याणोन्मुख होता है । वह माया और राजा को भी सन्निकट लाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है, क्योंकि राजा के मन की भ्रान्ति के निवारणार्थ उसका प्रयास जारी रहता है और इधर माया के प्रति सान्त्वना और सम्मान की दृष्टि बनी रहती है ।

प्रमुख पात्रों के अतिरिक्त विदेशी, गप्पु, मजदूर और किसान रामू आदि पुरुष-पात्रों का उपयोग भी यथेष्ट हुआ है । मुख्य कथा और सहकथा के संतुलन को बनाये रखने एवं उन्हें प्रगतिशीलता प्रदान करने के लिये इन पात्रों की अपेक्षा महसूस होने लगती है । स्त्री पात्राओं में कान्ती, माधुरी और नौकरानी के चरित्र से नाटकीय प्रयोजन अच्छी तरह सिद्ध किया जा सका है । समग्रतः चारित्रिक पक्ष की सफलता नाटक को उच्च स्थान प्रदान करती है, क्योंकि "सेवाश्रम" की नाटकीय संरचना चरित्र पर ज्यादा आधारित है, कथावस्तु या घटना पर कम ।

"सेवाश्रम" की संवाद-योजना बहुत सुन्दर है । सरलता और स्पष्टता उसकी प्रमुख विशेषता है । रंगमंचीय संकेतों की समुचित व्यवस्था की गयी है, इसीलिये अभिनेयता सम्बन्धी कोई कमी नहीं पायी जा सकती है । गीतों के व्यवहार से

---

1. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 68
2. हिन्दी-नाटक—डॉ. बच्चन सिंह, पृ. 81, द्वितीय संस्करण, लोक भारती प्रकाशन—इलाहाबाद–1
3. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 30
4. वही, पृ. 31
5. वही, पृ. 47
6. वही, पृ. 56
7. वही, पृ. 54
8. पुकार—डॉ. नत्थन सिंह (सेवाश्रम समीक्षा) पृ. 115–116

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वाभाविकता को बल मिला है। गीतों की प्रयुक्ति यथोचित स्थानों पर हुई है। वे प्रसंग और परिस्थिति से जुड़े हुये हैं। तीसरे अंक के दूसरे दृश्य के प्रारंभ का गीत अत्यधिक सामयिक बन गया है। संवेदनशीलता को उभड़ने और सांसारिक असारता को व्यक्त करने की आत्मसातिक प्रक्रिया नाटक को प्रभावपूर्ण बना देती है। पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है, अतः विशिष्टता कायम करने के स्थान पर नाटक को सामान्य बनाने की सफल चेष्टा सराहनीय है। गप्पू के मुख से निःसृत यह वाक्य नाटककार की भाषागत सजगता को समझने के लिये पर्याप्त होगा—"शमझ लिया हुजुर। परसों रात को दो बजे।"[1] 'समझ' के स्थान पर 'शमझ' की प्रयुक्ति सार्थक है। उसके उच्चारण पर ध्यान देते हुये लेखक ने अपनी सूक्ष्मावलोकन-वृत्ति का परिचय दे दिया है, जो किसी भी लेखक के लिये अनिवार्य होती है।

"कुरुक्षेत्र जागता है" का परिवर्द्धित रूप "सेवाश्रम" परिवर्तित होकर प्रकाशित हुआ है। मात्र परिवर्द्धन को ही लेखक ने महत्व नहीं दिया है, अपितु परिवर्तन को भी महत्व प्रदान किया है। "कुरुक्षेत्र जागता है" की माया की मृत्यु के एकांकी का अंत दुखद हो गया है। "सेवाश्रम" में माया की सुरक्षा पर उसने ध्यान दिया है, इसलिये अंत दुखद न होकर सुखद हो गया है। बीच में "सेवाश्रम" में लगी अग्नि से उसका शरीर झुलस गया है और मरणासन्न अवस्था तक पहुँची हुई दिखाई गयी है, लेकिन अंततः वह बच भी जाती है और अपने पति के प्रेम को पुनः प्राप्त करने में सफल भी होती है।

वीरदलवा वेलुत्तंपी—वेलुत्तंपी केरल की द्वितीय हिन्दी नाट्य रचना है, जिसका प्रकाशन 1972 में हुआ। डॉ. एन. रामन नायर की यह कृति केरल के इतिहास-पुरुष दलवा वेलुत्तंपी के वीर-व्यक्तित्व पर अवलंबित भारतीय संस्कृति की महत्ता और केरल के वीरों की परंपरा के चमकते नक्षत्र की कहानी प्रस्तुत करती है। डॉ. जगदीश गुप्त ने इस कृति का अभिनन्दन इन शब्दों में किया है—"राष्ट्रीय भावना से अनुप्रेरित यह नाटक केरल के इतिहास और संस्कृति के जीवन की पृष्ठभूमि में उस व्यापक संघर्ष की पार्श्व-छवि अधिकारिक रूप में प्रस्तुत करता है।"[2]

वेलुत्तंपी तिरुवितांकूर के महाराजा बालराम वर्मा के मंत्री थे, जिन्होंने भारत के उद्धार के लिए अपनी आहुति प्रसन्नता के साथ कर दी थी। उनके भाई पद्मनाभन् और उनकी माता लक्ष्मी कोत्तमा ने भी भारत माता को स्वतंत्रता के लिये अपने-अपने जीवन को तृण की भाँति त्याग देने में संकोच नहीं व्यक्त किया। इस प्रकार वेलुत्तंपी के पारिवारिक उत्सर्ग आज भी न केवल केरल वासी के लिये,

---

1. सेवाश्रम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 49
2. वीर दलवा वेलुत्तंपी (दो शब्द)—डॉ. एन. रामन नायर, पृ. 7, गीता प्रकाशन कोचीन–25, केरल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपितु समग्र भारत के निवासियों के लिये प्रेरणा की वस्तु बना हुआ है। इस गौरव गाथा को अभिनेय बनाने के लिये नाटककार ने प्राय: 15 प्रमुख पात्रों का संयोजन किया है। सम्पूर्ण तीन अंकों से सम्बद्ध है। पहले अंक में चार दृश्य, दूसरे अंक में तीन दृश्य तथा तीसरे अंक में 6 दृश्यों का प्रयोग किया है। इस तरह यह नाटक कुल तीन अंकों और तेरह दृश्यों वाला नाटकीय गरिमा से सम्पन्न हो गया है। पात्रों का आधिक्य अवश्य है, तथापि प्रयोजन-सिद्धि से सभी संयुक्त हैं, इसलिये किसी पात्र की अतिरिक्तता नहीं प्रतीत होती है।

वेलुत्तंपी, नाटक का नायक है। वह वीर योद्धा एवं न्यायप्रिय मंत्री है। अंग्रेजों के हाथ मरना उसे पसंद नहीं। इसलिये विवश होकर अपने हाथ अपनी हत्या कर लेता है। उसका हृदय उत्साह और कोमलता से भरपूर है। देश-रक्षा के लिये जहाँ अपना उत्सर्ग करता है, वहीं विलासिनी के प्रति उसके अदम्य प्रेम की झांकी भी देखने को मिल जाती है—"विलासिनी मुझे रुलाओ मत। आखिर वीर का भी हृदय तो होता है।··· ··विलासिनी तुम देवी हो।"[1] अपनी प्रेमिका विलासिनी के विचारों का आदर करता हुआ वह उसके अंतिम क्षण पर उसका पाणिग्रहण करता है। वह मातृ-भक्त है। कभी अपनी माँ को रोते नहीं देख पाता है। उसकी पूजा वह भारत माता की तरह करता है। अन्यायी को दण्ड देने में कितना कठोर है, इसका परिचय दूसरे अंक के द्वितीय दृश्य से मिल जाता है।

महाराजा बालराम वर्मा कम उम्र के शासक हैं। इसलिये अवस्था के अनुसार विलासिता की मात्रा भी उनमें अधिक है। उन्माद के कारण राज-काज के प्रति व्यक्त उनकी उदासीनता प्रारम्भ में जयशंकर प्रसाद के नाटक "ध्रुवस्वामिनी" के रामगुप्त की याद दिलाती है। शकों से घिरे दुर्ग की सूचना प्रतिहारी जब रामगुप्त को देता है तो वह उसे डाँट देता है और कहता है—"दोनों ओर से घिरा रहकर शिविर और भी सुरक्षित रहेगा।" प्रजा के प्रति अनिच्छा व्यक्त करते हुये विलासिनी के रूपलावण्य पर मोहित महाराजा का उत्तर कुछ इसी प्रकार का है—"कोई परवाह नहीं तुम जाओ। विलासिनी को बुला लाओ। बाकी सब बाद में देखा जायेगा।" परन्तु बाद में विलासिनी की प्रेरणा से वह प्रजा के हित की ओर उन्मुख होता है, जिससे उसकी वीरता पर दाग लगने से बच जाता है।

कुंचुकुट्टिपिल्ला, वेलुत्तंपी का वीर सहयोगी है। वह उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक योद्धा एवं राष्ट्रभक्त की भाँति कार्य करता है। पद्मनाभनत्तंपी, वेलुत्तंपी का भाई एवं राष्ट्रभक्त है। देश-सेवा में वह भी समर्पित हो जाता है। कुंचनीलन-पिल्ला, विलासिनी का मामा है। प्रारंभ में यह षड़यंत्रियों का साथ देता है, परन्तु दूसरे अंक के दूसरे दृश्य से वह तंपी के अनुकूल हो जाता है। मेकाली, सुब्बरायन,

---

1. वीर दलवा वेत्तंलुपी, डॉ. एन. रामन नायर, पृ. 40

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शंकर नारायणन चेट्टी, मेजर पद्मनाभन पिल्ला, मान्तूतरकन वेलुत्तंपी के प्रतियोगी हैं, जिनके द्वारा अन्त तक षड़यंत्र रचा जाता रहता है और वेलुत्तंपी को परास्त करने का प्रयत्न किया जाता रहता है। परन्तु अन्त में वेलुत्तंपी विजयी होता है तथा उसके त्याग के सामने सभी श्रद्धानत हो जाते हैं।

नारी पात्राओं में लक्ष्मीकोच्चमा वीरपुत्र तंपी की वीर माता हैं। वे तंपी जैसे पुत्र को उत्पन्न करके अपने को धन्य मानती हैं। देश की रक्षा के लिये इस वीर माता का परिवार समर्पित हो जाता है, यही उसके लिये गौरव की बात है। विलासिनी रूपवती वीर रमणी है। वह वीरता की मूर्ति और सुन्दरता की देवी है। उसकी सुन्दरता से अभिभूत बालराम वर्मा अपनी मर्यादा खो बैठता है, परन्तु वह ऐसी स्त्री है जो राजभोग की अपेक्षा देशभक्ति को वरेण्य समझती है। वह जो प्रतिज्ञा करती है उसका पालन करने के लिए तत्पर दिखती है। प्रजा के कल्याण के प्रति राजा को सबसे पहले वही उन्मुख करती है। उसे प्रेम है तो राष्ट्रभक्त दलवा वेलुत्तंपी से, इसलिये उसकी रक्षा हेतु अपनी जान की परवाह नहीं समझती। अपने जीवन के उत्सर्ग द्वारा वह एक ओर राष्ट्रभक्ति का परिचय देती है तो दूसरी ओर प्रेम के गौरव को ऊँचा उठाती है। वह अन्त में भी मात्र एक अभिलाषा व्यक्त करती है, वह है—वेलुत्तंपी के द्वारा अपने पाणिग्रहण की अभिलाषा, जिसकी प्रतिपूर्ति देखकर धन्य हो उठती है और अपने प्राण छोड़ती है।

यह नाटक भावनापरक एवं प्रेरणावर्द्धक है। केवल आधिकारिक कथा होने के कारण प्रवाहमयता आ गयी है। प्रतिपक्ष द्वारा नाटक में गतिशीलता तथा संघर्षात्मकता प्रविष्ट हुई है। भाषा संस्कृतनिष्ठ एवं तत्सम् शब्दावली से युक्त है। रंगमंचीय निर्देशन नाटक को अभिमंचन के सारल्य तक पहुँचाने में सहयोग प्रदान करते हैं। समग्रतः कह सकते हैं कि अब तक उक्त मात्र दो ही मौलिक नाटक केरल के हिन्दी साहित्यकारों द्वारा प्रकाश में लाये जा सके हैं। परन्तु भाषा और भाव की दृष्टि से वे बेजोड़ रचनाएँ साबित हो गयी हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहास में इन दोनों रचनाओं की विशिष्टता स्वीकार्य है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लघु नाटक

नाटक और एकांकी के अतिरिक्त केरल में एक नयी विधा का प्रयोग डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर ने पहली बार किया वह है—लघु नाटक की विधा। यह नाटक और एकांकी के बीच की विधा कही जा सकती है। चन्द्रशेखरन ने कुरुक्षेत्र जागता है, द्विवेणी, बदला, युगसंगम, देवयानी जैसे महत्वपूर्ण लघु नाटकों[1] का निर्माण किया है, परन्तु रचना-दृष्टि, कलात्मक-विस्तार एवं लक्षण-सीमा के अनुसार देखने पर युग-संगम और देवयानी को छोड़कर शेष अन्य कृतियाँ (सेवाश्रम नाटक नहीं) एकांकी के विकास के अन्तर्गत रखी जाने योग्य हैं', इसलिये प्रस्तुत पंक्तियों के लेखक ने उनका परिचय एकांकी के अन्तर्गत दे दिया है। युग-संगम और देवयानी के स्वरूप का विश्लेषण करने पर भी यह ज्ञात हो जाता है कि रचनाकार की आस्था किसी नयी विधा को तलाश पर टिकी है। अतः एकांकी के विकास के साथ लघुनाटक जैसी विधा के विकास की दिशा का अध्ययन करना अनिवार्य प्रतीत होने लगता है।

युग-संगम—'युग-संगम' का प्रकाशन 1964 ई. में हुआ। यह पौराणिक चरित्रों पर आधारित युग-विकास प्रस्तुत करने वाला लघुनाटक है। सतयुग से कलियुग तक के अवतारों की विशिष्टता के सन्दर्भ में अनेक ज्वलंत प्रश्नों के उत्तर दिये गये हैं। पात्रों के नाम इस बात के सूचक हैं लेखक युगप्रवाह को एक विकास-प्रवाह के रूप में प्रस्तुत करना चाहता है। प्रत्येक युग का संगम होता है और पूर्व युग की छाया आगामी युग में प्रतिबिम्बित होती है। श्रीराम, श्रीकृष्ण, लक्ष्मण, अर्जुन, गाँधी इसके प्रमुख पात्र हैं, जिनके अतिरिक्त बलि, शुक्राचार्य, दुःशला, दानव, भृत्य, कृष्ण के दो भाई आदि गौण पात्र हैं।

कथा का प्रारम्भ पाताल लोक के राजा बलि के विशाल भवन से होता है जहाँ वामन के छल के सम्बन्ध में वार्तालाप हो रहा है। वे दोनों बातचीत के दौरान कृष्ण की चातुरी, मोहिनी मूर्ति, बल आदि का भी उल्लेख करते हैं। इतने में शुक्राचार्य प्रवेश करते हैं, जो कृष्ण के कलियुगी अवतार को कष्ट का अवतार कहते हैं। वे पृथ्वी परसे सत्यनिष्ठा के समापन की परंपरा कृष्ण द्वारा बलि को छले जाने के दिन मानते हैं।[2] दूसरा दृश्य नाटकीय अभिनय के आधार पर चित्रित है जिसमें

1. प्रायः नायर ने अपने प्रकाशित संकलनों में लघुनाटक शब्द का ही प्रयोग किया है, एकांकी का नहीं।
2. "भगवान, आपने जिस दिन बलि की सत्यनिष्ठा का अपमान किया उसी दिन से धरा पर से सत्य के प्रति निष्ठा उठ जाने लगी है।" युग-संगम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृष्ठ 13.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राम-लक्ष्मण पात्र के रूप में विद्यमान हैं।

लक्ष्मण कलियुग में असत्यता वृद्धि का आधार वामन अवतार को बतलाते हैं, इसीलिये वर्णभेद और राजनीति में असत्य का बोलबाला होता गया है। द्वापर युग के कौरवों को भी भगवान द्वारा परम्परा से विरासत में असत्य प्राप्त हुआ था। राम मानव की भाँति प्रिया रहित कातर रूप में प्रदर्शित हैं। उन्हें बीच-बीच में सीता की छाया दिखलायी पड़ती है। उन्हें स्वयं से घृणा होती है। उन्हें महसूस होने लगता है कि सीता उन्हीं से घृणा करने लगती है। शंबूकबध, बालि का छिपकर बध करना, सीता के निष्कासन से लगा पाप आदि जघन्य दृश्य उन्हें दिखलायी पड़ते हैं। वे अपने इन अपकृत्यों से घबड़ा जाते हैं तथा भविष्य की विषाक्त राजनीति का दर्शन करते हैं—"हाय, भविष्य में राजनीति का क्षेत्र छल और प्रवंचना की यंत्रणा से विषाक्त हो जायगा।[1]

तृतीय दृश्य का प्रारंभ निराशा और दुख से होता है। कुरुक्षेत्र युद्ध में कृष्ण ने जीता है, परन्तु संतोष नहीं है। वे अपने हृदय की निराशा का उल्लेख अर्जुन से करते हैं। कुरुक्षेत्र युद्ध के बाद अधर्म का साम्राज्य विस्तार-सा होता प्रतीत होने लगा। अश्वत्थामा प्रतिहिंसा की अग्नि में हजारों निरपराध सैनिकों तथा अर्जुन के वंश को जला देते हैं; जिस शान्ति के लिये कृष्ण कुरुक्षेत्र का कर्तृत्व अपने हाथ में लेते हैं, शान्ति तो दूर रही उल्टे अशान्ति का वातावरण पल्लवित होने लगा। कौरवों और पांडवों की एक मात्र बहन दुःशला के प्रवेश से दृश्य मर्मान्तक एवं करुण बन गया है।

चतुर्थ दृश्य, कलियुग का है जिसमें गांधी जैसे अवतार पुरुष को ही रक्षा की व्यवस्था की अपेक्षा है। इस दृश्य में अन्य मजहबों के प्रति अवतार पुरुष गांधी के आदर्श तथा हिन्दू धर्म के प्रति निष्ठा व्यक्त हुई है। गांधी स्वयं कहते हैं—"भारत आज अनेक मजहबों के लोगों से भरा है। हिन्दू मात्र का अधिकार यहाँ कैसे चल सकता है; हिन्दू होने के नाते मैं भी अपने को धन्य मानता हूँ। हिन्दू धर्म सनातन और व्यापक है, वह अन्य धर्मों को अपने अन्दर आत्मसात कर सकता है। मगर वह किसी धर्म का शत्रु कैसे हो।"[2] गांधी निष्काम कर्म के पक्षपाती तथा मानवता-प्रेमी हैं। प्रार्थना मण्डप में उन्हें तीन गोलियाँ खानी पड़ती है। राम-नाम के उच्चारण के साथ उनका शरीरान्त होता है।

पाँचवाँ दृश्य नाटक का अंतिम दृश्य है। बलि, शुक्राचार्य, कृष्ण एवं पहले दृश्य के दोनों युवक इस दृश्य के पात्र हैं। दोनों युवक कृष्ण के भाई हैं। बलि उन्हें अपने पिता वसुदेव और माता देवकी के दर्शन के लिये भेजते हैं। जब उन्हें यह

1. युग-संगम—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 70
2. वही, पृ. 26

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ज्ञात होता है कि हम 6 भाई कृष्ण के ज्येष्ठ भाई हैं तो विस्मयजनक प्रसन्नता होती है। दोनों युवक बलि द्वारा प्राप्त संरक्षण के प्रति प्रसन्न एवं अनुग्रहीत होते हैं। यह दृश्य अन्य दृश्यों की अपेक्षा दार्शनिक संवादों का दृश्य बन गया है। उपदेश को अवांछनीय महत्व मिल गया है। इन कथनों के गर्भ में जो सार है वह महत्वपूर्ण तो है, परन्तु प्रयोग अनावश्यक है—"मेरा अनुमान है मनुष्य में विस्मरण को शक्ति अधिक मात्रा में होती है। इसकी आड़ में वह स्वार्थ का शिकार होने का बहाना करता है।"[1]

इस लघुनाटक का चरित्रगत विश्लेषण करने पर यह कहा जा सकता है कि लेखक ने चरित्र-वैविध्य को महत्व दिया है। नाटककार बौद्धिक युग के शुभारम्भ का संकेत कृष्ण के चरित्र में पाता है। कृष्ण कहते हैं—"प्यारे बौद्धिक युग का प्रारम्भ हुआ तब अवतार पुरुष को भी उस योग्य रहना चाहिये। महाभारत का नायक होने के कारण अन्य अवतारों की अपेक्षा मुझमें विविध व्यक्तित्व पाया जा सके। मेरे बहुरंगे व्यक्तित्व की व्याख्या आने वाले युगों में ही पुष्ट होती जाएगी।"[2] राम, कृष्ण, गांधी सभी के चरित्र का निर्माण मानवीय स्तर पर हुआ है। वे अपने अनुचित कर्मों के प्रति क्षोभ एवं घृणा व्यक्त करते हैं। उन्हें पश्चाताप होता है। लेखक प्रकारान्तर से यह व्यक्त करता है कि हिंसा और असत्य कभी अच्छे नहीं होते हैं, भले ही उनका प्रयोग सत्य की प्रतिष्ठापना के लिये किया गया हो। धर्म की स्थापना[3] के लिये भी यदि हिंसा का उपयोग होता है तो शुभकर बात नहीं। हिंसात्मक वृत्ति सिद्धान्त अथवा व्यवहार दोनों दृष्टियों से गलत है। इसीलिये राम और कृष्ण को उपदेश कर्ता बना देता है। वे हिंसा और असत्य को सकारण अपनाते हैं और दुखद परिणाम प्रकाश में आ ही जाता है।

युग-संगम द्वारा लेखक भारतीय संस्कृति के मर्मोद्‌घाटन का प्रयास करता है। भारतीय संस्कृति में सत्य को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है परन्तु उस सत्य की मर्यादा के लिए सर्वोच्च आदर्श का अवतार किसी अन्य युग में नहीं हो सका, सिवाय कलियुग के। लेखक युग-संगम द्वारा सत्ययुग से लेकर कलियुग तक के सत्य की गति का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। उसकी दृष्टि में—"जितना महत्व सत्ययुग में सत्य का होना था, उससे भी अधिक सत्य की व्याख्या एवं प्रयोग गांधी द्वारा असत्ययुग कलियुग में हुआ है।[4] लेखक ने अपनी इसी दृष्टि की प्रतिष्ठापना के लिए दार्शनिक भाषा का सहज प्रयोग उपयुक्त समझा है। इस लघु नाटक की कथा और शिल्प कसा हुआ और चुस्त है। चार युगों की सत्यपरक व्याख्या का साकार रूप एक

---

1. युग संगम—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 30 2. वही, पृ. 12
3. धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे—गीता, श्लोक 8, अध्याय 4.
4. लेखक के पास डॉ. एन. चन्द्रशेखरन द्वारा प्रेषित पत्र-दिनांक 7–12–76 से।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मंच पर प्रस्तुत किया गया है, इसलिये भारतीय संस्कृति के सन्दर्भ में यह नाटक अनादि काल के संघर्ष की परंपरा को उजागर करने वाला सिद्ध होता है, जिसमें आधुनिक मूल्यों के संघटक विद्यमान मिलते हैं। प्रत्येक युग में भारतीय संस्कृति के सत्य का विघटन हुआ है, जबकि संघटन क्रमशः होना था। ये मानव-मूल्य, जिनकी खोज गांधी जी ने की और हम जिनके प्रतिफलन से अभिभूत हुये हैं, अनेक संघर्षों के बाद प्राप्त हुये हैं, सहज रूप में नहीं। अतएव उनको सुरक्षित रखने की दिशा में हमारा योगदान होना चाहिये, अन्यथा वे पुनः बिखर जायेंगे, इस बात की ओर संकेत करना लेखक का उद्देश्य प्रतीत होता है, ताकि हमारी संस्कृति चिरकालीन विकसनशील संस्कृति मानी जाती रहे। संवाद, नाटकीय-प्रयोजन और रसनिष्पत्ति की दृष्टि से यह लघुनाटक सराहनीय बन गया है।

देवयानी—देवयानी एक पौराणिक रचना है। इस कृति का प्रकाशन 1970 में हुआ था। देवकुमार कच विद्यार्जन के लिये शुक्राचार्य के आश्रम में आया था। यौवन के उन्माद से विह्वल गुरु की पुत्री देवयानी कच पर मुग्ध हो जाती है। वह उसके प्रेम को पाने के लिये दुखी है, परन्तु विद्यार्जन से पूर्व कच विवाह के बंधन से मुक्त रहना चाहता है। कच को असुर मार डालते हैं, परन्तु शुक्राचार्य अपने मंत्र-बल से उसे जीवित कर लेते हैं। असुर-वर्ग पुनः उसे मार डालता है और उसके शरीर को चूर्ण बनाकर मदिरा में मिलाकर शुक्राचार्य को पिला देता है। देवयानी बहुत दुखी हो जाती है। गुरु पुन: उसे मंत्रबल से जिला देते हैं। कच भीरु है जबकि देवयानी निर्भीक है। विद्यार्जन ही देवयानी के प्रेम में बाधा डालता है इसलिये क्रोधित होती है और कच को समस्त विद्या भूल जाने का अभिशाप देती है। कच स्वर्ग में देवयानी के प्रेम के कारण विक्षिप्त घूमता रहता है। देवयानी का विवाह ययाति से हो जाता है। देवयानी के भरे हुये यौवन और अप्रतिम सौन्दर्य की भोग की लालसा से ययाति, कामुकी शर्मिष्ठा के पुत्र पुरु से यौवन दान लेते हैं। कुछ समय बाद पुरु को वह वापस कर देते हैं। पुरु को ही ययाति अपना उत्तराधिकारी घोषित करते हैं जिसका शुक्राचार्य विरोध करते हैं।

ययाति शर्मिष्ठा से भी प्रेम करते रहे इसलिये देवयानी को पत्नी के रूप में उनसे जितना प्रेम चाहिए उतना नहीं मिल पाता है। फलतः शुक्राचार्य, देवयानी के पिता ही, देवयानी को कच से परिणय के लिये कहते हैं। परन्तु देवयानी पतिव्रता धर्म का पालन करते हुये अपने पिता से याचना करती है कि उसे भी बुढ़ापा दे दें। वह पुरु को शासन करने योग्य बतलाती है और पिता से ययाति के प्रति क्रोध न करने की प्रार्थना करती है। पुरु अपने ज्येष्ठ भाई यदु को राजा बनाना चाहता है। तदर्थ देवयानी और शुक्राचार्य दोनों से निवेदन करता है। अंशतः शुक्राचार्य पुरु के त्याग एवं निस्पृह भाव पर प्रसन्न हो जाते हैं। वह पुरु के साथ बाहर चले जाते हैं। देवकुमार कच का आगमन उस समय होता है, जबकि देवयानी एकान्त भावमग्न

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बैठी रहती है। यहीं वह अपने प्रेम का उद्घाटन भी करता है। साथ लाये पुष्पहार को देवयानी के चरणों में समर्पित करना चाहता है, तभी ययाति आ जाते हैं। ययाति अपने पुत्र पुरु के त्याग, पितृभक्ति, उदारता की प्रशंसा करते थकते नहीं। वह कच के नैसर्गिक प्रेम की भी प्रशंसा करता है। देवयानी अपने पति के मन की बात समझ लेने पर भी कच को वरण नहीं करती। इस प्रकार वह प्रेमी कच और पति ययाति दोनों की दृष्टि से गरिमा प्राप्त कर लेती है।

देवयानी कल्पना मिश्रित पौराणिक लघुनाटक है। वस्तुतः यह अपनी पूर्णता और प्रभावात्मक शक्ति के कारण लघु नाटक-जगत में सर्वश्रेष्ठ निकला है। देवयानी के चरित्र में लेखक भारतीय नारियों की परम्परा का निर्वाह करने में पूर्णतः सफल हुआ है। देवयानी नारी-जीवन की सफल अभिव्यक्ति है, जिसमें कुण्ठा और संत्रास नहीं दिखायी पड़ता है। वह सर्वत्र उदारमना बनी रहती है। देवकुमार कच के प्रेम, ययाति की सेवा एवं पुरु के उत्तराधिकारी बनने के सम्बन्ध में उसके हार्दिक औदार्य का परिचय मिलता है। ययाति का यौवन गलित हो चुका है, इसलिये उसे इसका आभास है कि पति के रूप में देवयानी जैसी अनुपम सौन्दर्य वाली युवती के योग्य अब मैं नहीं रहा। अब उसके प्रेमी कच ही उसके योग्य है। भरे हुये यौवन की देवी के लिये कच वरदान होगा। अतः देवयानी के अभिव्यक्त प्रेम और कच के आकर्षण का सम्बन्ध जोड़ने के लिए वह प्रयत्नशील होता है। उसे पति के रूप में पत्नी के प्रेमी से कोई ईर्ष्या या जलन नहीं होती अपितु सहर्ष दोनों को परिणय सूत्र में बंधने की सलाह देता है।

जैनेन्द्र कुमार के अनेक नायक ऐसे उदारमना प्रतीत होते हैं, जो अपनी पत्नी के प्रेमियों के लिये कष्ट उठाते हैं। उनमें ऐसी अहिंसात्मकता मिलती है, जो नपुंसकता का पर्याय कही जा सकती है, परन्तु ययाति की स्थिति भिन्न है। उसमें देवकुमार कच की सुख की समता में अपनी वृद्धावस्था-जन्य दुर्बलता का अहसास अधिक है, जिसे मानव-प्रकृति का एक अंक कहा जा सकता है।

देवयानी की कथावस्तु स्वतंत्र भाव-भूमि पर निर्मित है। लघुनाटक में मुख्य कथा को ही स्थान मिलना चाहिये, प्रासंगिक कथा को नहीं, क्योंकि प्रासंगिक कथा की प्रयुक्ति कृति को विविधात्मक बना देती है। युगसंगम में कथागत विविधता के कारण शैथिल्य प्रतीत होने लगता है, परन्तु देवयानी में ऐसी शिथिलता कहीं भी प्रतीत नहीं होती है। उसकी मुख्य कथा को किसी अवान्तर कथा से सम्बद्ध नहीं किया गया। आरम्भ, प्रयत्न, प्रत्याशा, नियताप्ति एवं फलागम आदि पांच कार्यावस्थाओं की खोज करना अनुपयुक्त होगा।[1] क्योंकि लघुनाटक के रचयिता सबको प्रयोग का विषय नहीं बनाता है। रचना की समग्र भूमि को देखने से यह

1. देवयानी-भूमिका—डॉ. नत्थन सिंह, पृ. 15

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बात स्पष्ट हो जाती है कि लेखक निर्बाध गति से आगे बढ़ने के लिये जितना सचेष्ट लगता है, उतना शास्त्रीय लक्षणों के प्रयोग हेतु नहीं। चरित्र के विकास को गतिशील बनाने के लिये वह द्वन्द्व का सहारा लेता है। वह द्वन्द्व मनोवैज्ञानिक एवं स्वाभाविक है न कि पाश्चात्य मोह ग्रस्त, अतएव नाटक के संघर्ष को प्रश्रय प्राप्त हो गया है। उतार-चढ़ाव की दृष्टि से प्रारम्भ, मध्य और अंत रूप द्रष्टव्य है। प्रारंभ में पिता-पुत्री के वार्तालाप का महत्व है, जिसमें नाटक में वर्णित घटनायें अथवा समस्यायें उमड़ गयी हैं। मध्य में देवयानी, शुक्राचार्य और पुरु को एक ओर तथा देवयानी एवं कच कुमार को दूसरी ओर प्रमुख स्थान प्रदान किया गया है। अन्त में ययाति देवयानी और कच के पारस्परिक वार्तालाप एवं सम्बन्ध का प्रभावपूर्ण उल्लेख हुआ है। देवयानी सम्पूर्ण नाटक में छायी है, इसलिये यह नायिका प्रधान हो गया है। नायिका देवयानी, के सामने समस्यायें, क्रमशः उत्पन्न उसी तरह हुई हैं, जिस तरह जयशंकर प्रसाद के नाटक 'ध्रुव स्वामिनी' की नायिका ध्रुव स्वामिनी के सामने उत्पन्न होती है।

लघुनाटक के लिये जिस अनवरता की जरूरत होती है, वह अनवरता इसमें है। इसकी पूर्णता और प्रभावात्मकता उसी प्रकार नाटक के सन्निकट स्थान प्राप्त करने की इसे अधिकारिणी बना देती है, जिस प्रकार निराला की लघु काव्य-रचना राम की शक्ति पूजा को महाकाव्य के सन्निकट स्थान प्राप्त है। वस्तुतः यह एकांकी और नाटक के बीच की रचना है। लघु नाटक होने के कारण बड़े नाटक की भांति आधिकारिक एवं प्रासंगिक कथा के अनुसार इसका विवेचन करना,[1] एक साहस होगा, लेखक के साथ न्याय नहीं। देवयानी की संवेदनशीलता के सामने लेखक का बड़ा नाटक "सेवाश्रम" भी गौण प्रतीत होने लगता है। देवयानी संयोजनशील है अतएव कहीं बिखराव या रचनागत शैथिल्य नहीं है। सर्वत्र रचनाकार की भावना का समादृत स्वरूप विस्तार प्राप्त करता है। विषय, वर्णन-स्थिति, चरित्र-प्रस्तुति योजना, भाषानिर्मित, आदि कोणों से परखने पर देवयानी की प्रवहमयता सराहनीय है। संवाद-योजनायें तो अद्वितीय हैं। अभिनयगत संकेतों की अत्यल्प प्रयुक्ति ने नाटक में प्रवहमयता ला दी है। कथा-निर्वाह और वार्तालाप में स्वाभाविकता को प्रश्रय प्राप्त हुआ है, न कि कृत्रिमता को। ययाति का यह कथन देवयानी के प्रति कितना सीधा और सधा हुआ है—"देवि, तुम भोली भाली हो। मुझे मिली वृद्धावस्था स्वाभाविक है। असंयमित जीवन व्यतीत करने पर पुरुष वृद्ध हो जाता है। असंयमित पुरुष किसी के प्रेम का पात्र नहीं होता। स्वर्ग से भी बढ़कर यह यौवन और सौन्दर्य केवल एक वृद्ध के चरणों पर उसके पति होने के कारण समर्पित करना घोर पाप है।"

---

1. द्रष्टव्य—मेरी पसंद की पुस्तक-देवयानी—डॉ. एन. पी. कुट्टनपिल्लै केरल-ज्योति पत्रिका, अंक सितम्बर-अक्टबर 1975

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देवयानी पवित्र भावना की मूर्ति है । उसकी भावनायें उदात्त एवं श्रद्धेय हैं । उसमें आदर्श का ढोंग नहीं, यथार्थ का चिन्तन है । नारी के त्याग का प्रियतम रूप उसमें विद्यमान है । प्रसाद की ध्रुवस्वामिनी कृति का अंत जहाँ चन्द्रगुप्त के प्रेम-परिणय से होता है, वहीं देवयानी का अन्त पतिव्रत धर्म पालन के साथ होता है । ध्रुवस्वामिनी जहाँ मद्यप क्लीब पति रामगुप्त का विरोध करती है और चन्द्रगुप्त को पति के रूप में वरण करके नारी-समस्या का समाधान प्रस्तुत करती है, वहीं देवयानी भारतीय परम्परा को अक्षुण्ण रखते हुये पिता और पति के द्वारा बल देने पर भी वृद्ध पति को छोड़ने के संस्कार को अर्जित नहीं कर पाती है । उसका तर्क स्वच्छ हृदयवाली और दृढ़ भारतीय नारी का तर्क है—"आर्यपुत्र आप अन्यथा क्यों सोचते हैं । आपने जबसे मेरा वरण किया, तबसे मैं आपकी धर्मपत्नी हूँ ।...... देवकुमार से मेरा मन प्रेमबद्ध था । मगर वह ब्रह्मचारी देवकुमार मुझे छोड़ गया । उसने मेरी प्रेम-याचना को ठुकरा दिया । फिर आप मेरे प्राणदाता बने, जिनके प्रति मेरा सम्पूर्ण समर्पण ही मेरा धर्म रहा । उसका मैंने अब तक पालन किया ।... आगे भी यह मन स्थिर और दृढ़ होकर रहेगा ।"

देवयानी का अन्त जितना सुन्दर है उतना सुन्दर हिन्दी साहित्य के किसी नाटक का शायद ही हो । प्रसाद के नाटक "स्कन्दगुप्त" के अन्त का महत्व इसलिये बतलाया जाता है कि देवसेना और स्कंदगुप्त परस्पर प्रेम करके भी प्रणयसूत्र में बंध नहीं पाते, अतः विजय-श्री स्कंद के हाथ में है तब भी नाटक दुखान्त हो जाता है । 'देवयानी' में देवयानी प्रेमी और पति के हृदय में अपना स्थान समान बनाये रखने में सफल हुई है । कच कुमार और ययाति की संवेदना प्राप्त करने की अधिकारिणी वह अंत तक बनी रहती है । इसीलिये प्रेमी और पति के समानान्तर जो नारी-जीवन स्थिर रहता है, उसको भी एक किनारा मिलता है, जहां दो हृदय से अभिभूत सुख प्राप्त करती हुई देवयानी, प्रेम-विह्वल होकर पति के वक्षस्थल पर गिर पड़ती है । देवयानी का प्रेमी कच कुमार, ययाति और देवयानी के औदार्य से प्रभावित होकर दोनों की वंदना के सिवा दूसरा रास्ता नहीं ढूंढ़ पाता । वह आकर्षणजन्य मालिन्य के अनुभव से मुक्त हो जाता है । शायद ही भारतीय नाटक क्षेत्र में ऐसे नाटक की सृष्टि हुई होगी, जिसमें पति पत्नी के प्रेमी से ईर्ष्या करता न पाया गया हो । यहां प्रेमी और पति के प्रेम का उदार निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है, जिसकी अपेक्षा है ।

इस लघुनाटक की भाषा स्वच्छ एवं सहज है । पात्रगत मनोभावों की चिन्तन प्रक्रिया उलझी हुई नहीं है, इसलिये भाषागत विश्रृंखला कहीं नहीं दिखलायी पड़ती है । संवाद की लघुता अथवा परिधि सराहनीय है । न तो लम्बे हैं और न लघु, अपितु वे मध्य स्तर पर अग्रसारित हैं । यह संवाद कितना स्पष्ट एवं प्रभाव-शाली है—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

"देवयानी—मुझे उससे एक पाठ यह मिला था कि अपमानिता नारी अपनी विवशता में सब कुछ कर सकती है। कुमार, प्रेम का रास्ता कितना कोमल है और साथ ही कितना तंग भी। कभी तो वह मन को स्वर्गानुभूति प्रदान करता है और कभी वह उसे नरक की प्रतिहिंसा की अग्नि में ढकेल देता है।

कचकुमार—देवी यह भी सोचिये कि प्रेम में जहाँ कामना अथवा स्वेच्छा मिल जाती है, तब वह अन्धा बन जाता है। तब फिर उसका बल पाशविक बन जाता है। प्रेम-व्यवहार में यही अविवेक प्रेमी युगलों को विभ्रान्त कर डालता है।

देवयानी—वाह वाह ! प्रेम के ये सिद्धान्त आपने पढ़ लिए ! पर उन दिनों अपने इन सिद्धान्तों का परिचय भी नहीं दिया।"[1]

संवादगत यही सधी योजना देवयानी में सर्वत्र मिलती है। निःसंदेह यह एक महान कृति है।

1. देवयानी—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 79

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एकांकी

केरल के हिन्दी लेखकों का इस दिशा में भी कम योगदान नहीं कहा जा सकता है। सत्य तो यह है कि केरलीयों की हिन्दी एकांकी-परम्परा नाटक-परम्परा की अपेक्षा स्वस्थ एवं प्रौढ़ है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ एकांकी प्रचार प्रसार को गति मिली। फिर भी परम्परा की दृष्टि से यदि विकासक्रम का अध्ययन करते हैं तो यह स्पष्ट कह सकते हैं कि केरल के हिन्दी एकांकी, स्वातंत्र्योत्तर काल में ही प्रकाश में आ सके।[1] युग-माँग इस कार्य को गतिशील बनाने में सहायक सिद्ध हुई। विद्यालयों अथवा संस्थानों में अभिनयार्थ ऐसे नाटकों की मांग होती रही, जिसका प्रदर्शन अल्पतम साधन द्वारा कम से कम समय में किया जा सके। तदर्थ एकांकी के विकास को बल मिला और एकांकी के विविध रूप, यथा—पाठ्य एकांकी, दृश्य एकांकी, ध्वनि एकांकी प्रकाश में आये।

केरल के हिन्दी एकांकी को विकसित करने वाले माध्यमों में आकाशवाणी एवं हिन्दी पत्रिकाओं की मुख्य भूमिका रही। आकाशवाणी केन्द्रों से बड़े नाटकों को प्रसारित करने की गुंजाइश कम रहती है। अतएव उन केन्द्रों के अनुकूल छोटे नाटक प्रश्रय प्राप्त करते हैं। इसी तरह पत्रिकाओं में एक पूर्ण नाटक नहीं प्रकाशित किया जा सकता है क्योंकि अन्य विधाओं को भी स्थान मिलना अपेक्षित होता है। एकांकी लघु विधा है इसलिये कहानी की तरह कम से कम पृष्ठों में प्रकाशन का अवसर प्राप्त कर लेते हैं। केरल के हिन्दी एकांकी के विकास की दिशा में इन दोनों का महत्व अत्यधिक है।

जी. गोपीनाथन ने लिखा है—"……यह कहना पड़ता है कि केरल में हिन्दी रंगमंच तथा उत्साही प्रेक्षकों और निर्देशकों के अभाव के कारण एकांकी-लेखन के क्षेत्र में एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्रीमती लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, श्री के. नारायण जैसे लोगों ने मौलिक कार्य किया है।[2] यहाँ एक बात द्रष्टव्य है, वह यह कि कोई भी लेखक रंगमंच और निर्देशक की जरूरत पूरी करके रचना नहीं प्रस्तुत करता, अपितु वह रचनाकार होता है इसलिये रचना करता है। अभावों के बीच मौलिकता पनपती है, जिसका कारण लेखक का दायित्व-निर्वाह होता है, अभाव नहीं। नायर, अम्मा जी एवं के. नारायणन की रचनायें इस का प्रमाण प्रस्तुत करने में पूर्णतः समर्थ हैं कि वे जिज्ञासु और श्रद्धालु की भाँति अभिव्यक्ति करते हैं। उन्हें स्वयं को प्रकट करने की तृष्णा से ज्यादा कहीं अभिव्यक्ति की भाषा टटोलने की साध है। यही

1. केरलीयों की हिन्दी को देन—डॉ. जी. गोपीनाथन्, पृ. 128 (द्रष्टव्य)
2. वही, पृ. 108

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कारण है कि उनके एकांकी समय, स्थान एवं कार्य की त्रयी में बंध सके हैं। उनकी संपूर्ण कथा सुसम्बद्ध क्रम लिये हुये हैं।

डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर केरल के शीर्षस्थ हिन्दी एकांकीकार हैं। विकास और प्रयोग दोनों दृष्टियों से नायर की कृतियाँ उत्कृष्ट हैं। 'कुरुक्षेत्र जागता है', 'द्विवेणी', बदला (1962 ई.) उनकी मुख्य एकांकी-रचनायें हैं जिनमें भारतीय संस्कृति और समाज के इतिहास की झलक प्राप्त होती है। कलात्मकता और प्रभावान्विति दोनों दृष्टियों से नायर की ये लघु विधायें पर्याप्त सफल सिद्ध हुई हैं। इन सभी एकांकियों में युग-बोध और युगाभिव्यक्ति देखी जा सकती है।

द्विवेणी—'कुरुक्षेत्र जागता है' नायर जी के तीन एकांकियों का संकलन है, जिसका नाम संकलन के प्रमुख एकांकी 'कुरुक्षेत्र जागता है' के आधार पर रखा गया है। 'द्विवेणी' इसमें प्रथम एकांकी है। 'द्विवेणी' एक प्रतीक एकांकी है, परन्तु कथागत स्पष्टता के कारण वह एक व्यवहार-दृष्टि प्राप्त, एकांकी प्रतीत होता है। मानसिक संघर्ष का प्रतिफलन व्यावहारिक जगत में देखा जाता है और इसलिये दो प्रकार के संघर्षों का विवादास्पद स्वरूप प्रत्येक स्थान पर दिखाई पड़ता है। अध्यात्म और विज्ञान की दूरी का चित्रण करना एकांकीकार का लक्ष्य प्रतीत होता है। विज्ञान की भौतिकवादी आँखें अध्यात्म के ज्ञान-नेत्र को समाप्त करने पर लगी हुई हैं। परन्तु अध्यात्म जिस सूक्ष्म पर आश्रित दिखलायी पड़ता है, वह सूक्ष्म विज्ञान के अणु से भी अधिक सूक्ष्म और रहस्यपूर्ण है। शास्त्रपुरुष और धर्मकन्या के परिणय द्वारा लेखक पश्चिम जगत की तटस्थ वैज्ञानिक बुद्धि और मानव कल्याण हेतु तत्पर हृदय का संयोग स्थापित करना चाहते हैं।

प्रतीक नाटक की प्रकृति दृश्य कम, श्रव्य अधिक होती है। आन्तरिक लोक की भावात्मक सृष्टि को मनुष्य के रूप में अवतरण किया जाना, स्वयं में महत्वपूर्ण होने के साथ-साथ आकर्षक भी होता है। 'द्विवेणी' में शास्त्रपुरुष को मोहांध साम्राज्य वादियों के द्वारा दास बना लिया जाता है। उनके प्रिय भाई मन और विवेक भी पश्चिम की साम्राज्यवादी नीति से कुचले गये। विवेक इस बात से विश्वस्त है कि पारस्परिक विश्वास एवं मैत्री के ध्वंस का कारण भीति है। शास्त्र पुरुष की संज्ञा-शून्य अवस्था में हाइड्रोजन बम, और बाल्ट बम तैयार कराये गये। धर्म-कन्या अनेक हिंसा और विध्वंस का कारण शास्त्रपुरुष को समझती है परन्तु भक्ति धर्मकन्या के भ्रम को समाप्त करते हुये कहती है—"' ''यह सारा अनर्थ इसलिये हुआ कि मुट्ठी भर नर-पिशाचों ने उनमें हिंसावृत्ति उत्पन्न कर दी। शास्त्र पुरुष बड़े उदार हैं। वे कभी स्वयं ही नाशकारी नहीं बनते।[1] मानव ने जिस प्रकार शास्त्र

1. 'कुरुक्षेत्र जागता है'—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृष्ठ 26

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पुरुष को हिंसावृत्ति का साधन बना लिया है उसी प्रकार अनुकम्पा, उदारता, सहिष्णुता को भी अपनी ध्वंसात्मक प्रवृत्ति के चंगुल में फंसा लिया है। परन्तु ध्वंस किसी का होता नहीं इसलिये उन सभी मानव निर्मित-कारागारों को समाप्त करने में सफल हुआ। फलत शास्त्रपुरुष मुक्त हुआ और अनुकम्पा, सहिष्णुता आदि धर्मकन्या की सहेलियाँ भी बच निकलीं। भारत भूमि की अध्यात्म ज्योति को प्रकीर्ण करने वाले ऋषि के सामने विज्ञान पुरुष के भाई मन और विवेक तक का तेज विलीन होते हुये दिखाई पड़ता है। विवेक इस बात पर आश्वस्त है कि सर्वनाश के मुँह से प्राणी मात्र को बचाने की क्षमता आज उन पुण्यात्माओं में ही विद्यमान है। शास्त्रपुरुष का तेज भी अध्यात्म पुरुष ऋषि के सामने फीका है। विवेक ही निर्णय देता है—"हम तो इस गर्व में थे कि आपके प्रभाव और निराले व्यक्तित्व के सम्मुख संसार ने सिर झुका लिया है। लेकिन उस महान व्यक्तित्व के सामने आपको भी विनम्र होना पड़ेगा।"[1] मन भक्ति की पुत्री धर्मकन्या की आभा का परिचय शास्त्रपुरुष को देता है। यह भी बताता है कि ऋषि पुरुष धर्मकन्या का परिणय शास्त्रपुरुष से ही करना चाहते हैं, क्योंकि—…"दोनों की भव्य द्विवेणी में मज्जन करके हो संसार शक्ति पा सकेगा।"[2] ऋषि की यह भविष्यवाणी—जब तक सत्ता और गर्व में मेल रहेगा तब तक उत्तम संकल्पों एवं कर्मण्यता को पलायनवादी ही माना जायेगा।[3] वर्तमान मानव के अहं और अस्तित्व की रक्षा के चरित्र का उद्घाटन करती है।

'द्विवेणी' के लेखक ने भावात्मक अभिव्यंजना के सहारे कुण्ठा और विनाश का चित्रण किया है। पश्चिम के विज्ञान पुरुष की सृष्टि ही भय और आतंक का परिणाम है, इसलिये उसके निर्णय में विवेक जैसे नीर-क्षीर पृथक करने वाले तत्व भी कुंठित और निरुपाय हो गये हैं। वे सहयोग प्रदान करने की जगह विश्लेषणवादी नीति से ग्रस्त हैं। अहिंसा और प्रेम की दिव्य आभा का आभास यहाँ के अध्यात्म पुरुष ऋषिगण ही कराते रहे हैं, जिसके कारण आज का संपूर्ण विश्व भारत की गुरुत्व-महिमा स्वीकार करता है। भक्ति के प्रति मानव की श्रद्धा विनष्ट हो गयी है अतः विश्वास प्रेम दया सहिष्णुता अनुकम्पा सभी का विनाश सर्वत्र दिखलायी पड़ रहा है। द्विवेणी में लेखक ने शास्त्रपुरुष की जिस विवशता का चित्रण किया है वही विज्ञानपुरुष की विवशता है और जिसके कारण चारों ओर अंधकार के बादल घिरे हुये हैं। शास्त्र पुरुष मूर्छित हो जाता है। चकाचौंध पैदा करने वाली बिजलियाँ चमकती हैं। ऋषि हाथ में दीप लिये प्रवेश करते हैं, जिनकी दीप-ज्योति के प्रकाश में जेल की कोठरियाँ दिखाई पड़ती हैं और दिखायी पड़ते हैं, सभी बंदी के रूप में

1. कुरुक्षेत्र जागता है—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 30
2. वही, पृ. 31 3. वही, पृ. 36

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विवेक, मन, भक्ति आदि पात्र, अलग-अलग कोठरियों में। यदि मुक्त और स्वस्थ हैं तो ऋषि। अध्यात्म पुरुष।

मानव की विस्फोटक सृष्टि के दुष्परिणाम को दिखाना ही लेखक का मन्तव्य है। वह सच्ची शांति की स्थापना के लिये अध्यात्म पुरुष की उपासना को अनिवार्यतः सुरक्षित रखने की ओर संकेत करता है। वह आज के मानव को उदारतावादी, जनवादी, सहिष्णु धार्मिक एवं श्रद्धालु बनने के लिए प्रेरित करता है, क्योंकि वैज्ञानिक भविष्य असुरक्षित है, भले ही वह सुरक्षा के अनेक साधनों की खोज करता जाय। पात्रगत अंतःसंघर्ष और बाह्य-संघर्ष की समन्विति, एकांकी को प्रवाहपूर्ण बनाती है। भाव की सीमा को ध्यान में रखते हुए पात्रों के चरित्र को अलग-अलग व्यक्तित्व प्रदान किया गया है। विकासात्मक गति की दृष्टि से पात्रगत विविधता उसे अनेक मोड़ों वाला एकांकी बना देती है परन्तु कथा-विन्यास में उलझन कहीं नहीं दिखलायी पड़ती है। भाषा सरल एवं संस्कृतनिष्ठ है। प्रचलित तत्सम शब्दों की प्रयुक्ति के कारण सहज बोधगम्य हो गयी है। ध्वन्यात्मक प्रवाह आद्योपान्त दिखाई पड़ता है। रंग-संकेत ध्वनात्मक संकेत लिए हुए हैं। प्रारम्भ और अंत में काल कोठरियों का प्रदर्शन ही एकांकी को दृश्य स्वरूप प्रदान करता है अन्यथा वह श्रव्य ही है।

बदला—'बदला' एक सामाजिक नाटक है। नीरादेवी देवकीनाथ की पत्नी है। वह एक पुत्र की माँ भी है। देवकीनाथ गर्भवती नीरादेवी के मुंह में कपड़ा ठूंसकर चलती ट्रेन से बाहर फेंक देते हैं। नरेन्द्रदेव नामक व्यक्ति उसे संरक्षण प्रदान करता है। वह अध्यापिका हो जाती है। संयोग से एक दिन सड़क पर देवकीनाथ मूर्छित अवस्था में पड़ा नीरा को मिल जाता है। नीरा उसकी नर्स के रूप में सेवा करती है तथा मृत्यु के मुख से बचाकर जीवन दान करती है। उपकृत देवकीनाथ आभार प्रदर्शन-हेतु नीरा के घर जाता है। नीरा के त्याग एवं गुणों की प्रशंसा करता है। पत्नी के प्रति किये कुकृत्य पर पश्चाताप करता है। वह आत्मग्लानि की अग्नि में जलते हुए अपनी अमानुषिकता के प्रति खेद एवं घृणा प्रकट करता है। चाहता है कि नीरा पुनः उसे अंगीकार करे। नरेन्द्रदेव को जब पता चलता है कि नीरा देवकीनाथ की पत्नी है तो पति के अपराध को क्षमा करने के लिए कहता है। नीरा प्रतिरोध करती है।

कथावस्तु की दृष्टि से यह एकांकी सफलतापूर्वक निर्वाहित है। एकांकी के मानवीय मूल्यों में से सहृदयता, सहिष्णुता, त्याग आदि को प्रश्रय प्रदान किया गया तथा मानव के अशुभ पक्षों—अमानुषिकता, स्वार्थपरता, संकीर्णता आदि को विनष्ट होते दिखाया गया है। प्रत्येक मनुष्य दो पक्षों में जीवित रहता है—शुभ और अशुभ। अशुभ पक्ष उससे निकृष्ट कर्म करवाता है, शुभ पक्ष उत्कृष्ट कर्मों की प्रेरणा देता है। यदि अशुभ पक्ष की प्रबलता के कारण निकृष्ट कर्म हो जाते हैं, तो शुभ-मन किए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुए निक्रिष्ट कर्मों के प्रति उसे कोसता है। भावावेश में कुछ गलत कर जाने वाला व्यक्तित्व सदैव गलत करने वाला नहीं होता है। हिंसक सदैव नृशंस ही नहीं बना रह सकता है। उसके हृदय को त्याग और सेवा द्वारा बदला जा सकता है। गांधी जी की हृदय-परिवर्तन सम्बन्धी धारणा को लेखक ने इस एकांकी में साकार रूप प्रदान किया है। संयोग द्वारा एकांकी को गतिशील और संवेदन शील बनाया गया है। नीरा को ट्रेन से बाहर ढकेल देने वाला देवकीनाथ बूरे दिन देखता है और उसी पत्नी द्वारा जीवन प्राप्त करता है, जिसको कि हमेशा के लिए समाप्त समझ चुका था। वह दैवयोग ही है कि नीरा जीवित बच गयी है और देवकीनाथ की सेवा का अवसर भी प्राप्त किया। नीरा का व्यक्तित्व "आकाशगंगा की छाया में" के शशि के व्यक्तित्व से मिलता-जुलता व्यक्तित्व है,[1] जिसमें प्रेमी से परित्यक्त शशि अंततः प्रेमी की सेवा शुश्रूषा नर्स के रूप में करती है। देवकीनाथ ने 'बदला' में जहाँ नीरा को ट्रेन से बाहर फेंक दिया, वहीं रूपवती शशि के प्रयोगशाला में प्रयोग करते समय घटने वाली दुर्घटना के कारण कुरूप हो जाते ही शिरीष का प्रेम भी झुलस जाता है और स्वार्थी एवं कुंठित प्रेमी की तरह मधु को अपनाता है। देवकी नाथ की तरह पश्चाताप की अग्नि में जलता हुआ शिरीष पागल-सा हो जाता है। वहाँ समस्या उठायी गयी है, पर समाधान नहीं, जबकि 'बदला' में समस्या का समाधान प्रस्तुत कर दिया गया है। 'आकाशगंगा की छाया में' प्रेमी के कुत्सित व्यक्तित्व का चित्रण है, जबकि बदला में पति के कुत्सित व्यक्तित्व के शुभ पक्ष को उजागर किया गया है। एक सामान्य बात दोनों में मिलती है, वह यह कि पुरुष स्वार्थ का पुतला होता है, तो नारी त्याग की मूर्ति होती है। नीरा जहाँ वर्तमान नारी के स्पष्ट व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करती है वहीं शशि समाज के नियमों से दबी नारी का प्रतिनिधित्व करती दिखाई पड़ती है। "कामायनी" के मनु श्रद्धा से नाराज होकर भागते हैं और सारस्वत प्रांत में घायल होकर अपने कुफल को भोगते हैं। वहीं श्रद्धा वहाँ पहुँच कर उन्हें पुनः जीवन देती है तो मुँह छिपाकर पुनः भागते हैं और संयासी का सा जीवन व्यतीत करने लगते हैं। वहाँ भी पुरुष की पलायनवादी स्वार्थ-परस्त भावना का स्वरूपांकन हुआ है। 'बदला' में उस पलायनवाद को समझौता की डोरी से बाँधा गया है। पुरुष देवकीनाथ नारी नीरा को बार-बार अंगीकार करने की चेष्टा करता दिखायी पड़ता है। यहाँ तक कि अंत में वह पुरुष के अहं को भी समर्पित कर देता है। नीरा से क्षमा-याचना करता है।

वर्तमान युग में जहाँ नारी अपने प्रति किये गये पुरुष के अमानुषिक व्यवहार का बदला उसका तिरस्कार करके या उसे अस्वीकार करके लेना चाहती है, वहीं

1. एकांकी संकलन, अ. प्र. सि. वि. वि. रीवा, प्रकाशन, 'आकाशगंगा की छाया में', एकांकी (द्रष्टव्य)।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपने सहज गुण त्याग-सेवा के द्वारा पुरुष को मानवता का पाठ भी पढ़ाना चाहती है। नीरा के आदर्श 20वीं शताब्दी के आदर्श हैं। इसलिये 'बदला' में नारी और पुरुष के अन्तर्विरोधी तथ्यों को प्रकट करके मनोवैज्ञानिक स्तर पर पहुँचने का सफल प्रयास दिखाई पड़ता है। उसमें 'ड्रामेटिक जस्टिस' को प्रश्रय प्रदान किया गया है, तभी तो देवकीनाथ अपने किये के प्रति दुःखी[1] एवं परेशान दिखायी पड़ता है। वह पत्नी से समझौता चाहता है न कि अलग होकर अपनी स्थिति को उद्घाटित होने से बचाये रखना चाहता है। उसे यह ज्ञात है कि जो पत्नी मेरे लिये जीवन दायिनी सिद्ध हुई उसे दया, माया की देवी समझना मेरा कर्तव्य है। मुझे उसकी सेवा और त्याग की कद्र करते हुये पुनः प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिये। उसमें वह अहं नहीं जिससे संवलित होकर भाग जाये, क्षमा-याचना से कतराये, हृदय के पश्चाताप को छिपाये और कुल-मिलाकर नारी को अपने से छोटे व्यक्तित्व का प्राणी समझे।[2] वह तो अपनी अपराध-भावना को उसके सामने खोलकर कहने में सुख पाता है, जिसके कारण उसका चरित्र मुखर हो गया है।

नीरा वर्तमान युग की त्याग और करुणा की देवी है। वह पति को पहचान कर भी यह कहने के लिये आगे नहीं आती कि उसने उसे अपने अमानुषिक व्यवहार से प्रताड़ित किया है। वह संकट में पड़े पति को बचाकर "अन्याय से घृणा करना चाहिए अन्यायी से नहीं" की विचारधारा की सत्यानुयायिनी दिखलायी पड़ती है—"दाता अन्यायी की सेवा करना छोटा काम तो नहीं है।"[3] वह त्याग और सेवा के द्वारा ही अपने पति का हृदय प्राप्त करने की अधिकारिणी सिद्ध होती है। वह सारा कार्य छुपकर करती है क्योंकि उसे श्रेय-प्राप्ति की आकांक्षा नहीं है, अपितु सेवा करने की आकांक्षा है। अपनी सहेली के नर्स के ड्रेस को वह ढूँढ़ लाती है। वह रोगी के वेश में देवकीनाथ को पाकर अपने रक्षक नरेन्द्रदेव से उसको अपना परिचित बताती है। उसके पति होने का रहस्योद्घाटन स्वयं देवकीनाथ के आने पर होता है। वह उसको बदले की भावना से सदैव-सदैव के लिये तिरस्कृत रखना चाहती है, परन्तु अमानवीय स्तर पर नहीं। नरेन्द्र समझाते हुये जब कहते हैं कि—"तुमने उससे बदला ले लिया। अब वह पछता रहा है।"[4] तो वह कहती है—"……लेकिन मैंने कौन-सा अपराध किया है मुझे तो अब मालूम हुआ कि स्त्री जो चाहती है कर नहीं सकती।"[5] नीरा अपनी विवशता को पहचानती है, पर प्रेम को खोती नहीं—"मेरे हृदय में उनको छोड़कर और किसी के लिये इस जीवन में स्थान नहीं हो सकता।"[6]

---

1. कुरुक्षेत्र जागता है—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 50
2. वही, पृ. 49
3. वही पृ. 54
4. वही, पृ. 53
5. वही, पृ. 53
6. वही, पृ. 55

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नरेन्द्रदेव एक सुलझा हुआ व्यक्तित्व है। उसमें दया और कारुण्य है। तभी तो नीरा को संरक्षण प्रदान कर सका। उसके आदर्श मानवता के उद्धार के आदर्श हैं, परन्तु वे खोखले एवं भाव-प्रेरित नहीं हैं, अपितु दृष्टिपरक हैं। वह सबसे बड़ा अपराधी उसे मानता है जो—"अपने अपराध को अपराध न समझ कर उसे आगे भी न्याय सिद्ध करने की चेष्टा"[1] करता है। वह नीरा का कल्याण इसी में देखता है कि नीरा अपने किये पर पश्चाताप करने वाले पति को ग्रहण करे—"......और अब तुम उसे क्षमा करो और अपने पति के रूप में ग्रहण करो।"[2]

एकांकी में संवाद छोटे-छोटे वाक्य में बंधे हैं। इसलिये उसकी अभिनेयता पर किसी प्रकार का प्रश्नचिह्न नहीं लगाया जा सकता है। रंगमंचीय संकेतों के साथ भाव-संकेत भी व्यक्त कर दिये गये हैं, जिसके कारण अल्पावधि में प्रभावशाली ढंग से उसे खेला जा सकता है। भाषा और भाव की सम्यक योजना हुई है, इसलिये उसमें एक प्रवाहमयता सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। कुल तीन दृश्यों में एकांकी समाप्त हुआ है। इसलिये अनावश्यक विस्तार भी नहीं दिखलायी पड़ता है। देशकाल के प्रति एकांकीकार सजग है। अतएव उद्देश्य तक पहुँचने में कहीं अव्यवस्था नहीं दिखलायी पड़ती है। संकलन त्रय का सफलता पूर्वक निर्वाह हुआ है। तथापि नाटक त्रुटिरहित नहीं है। कुछ रंगमंचीय संकेत तथा लाल और मल्लू के प्रसंग त्रुटि पूर्ण हैं जिनका उल्लेख डॉ. विलास गुप्ते ने किया है।[3]

कुरुक्षेत्र जागता है—'कुरुक्षेत्र जागता है' एकांकी की कथावस्तु सात दृश्यों पर आधारित है। यह संकलन का बड़ा एवं प्रमुख एकांकी है, जिसके कारण संकलन का नाम 'कुरुक्षेत्र जागता है' रखा गया। सम्पूर्ण एकांकी दो पक्षों को प्रस्तुत करता है। प्रथम पक्ष के अनुसार कर्नाल के महाराजा राजसिंह और मायादेवी के बीच उत्पन्न खाई का चित्रण हुआ है तथा दूसरा पक्ष देशी रियासतों के विलयन से प्रभावित राजाओं के जीवन को व्यक्त करता है। राजसिंह को मायादेवी के चरित्र पर सुश्री से अनुचित सम्बन्ध का संदेह हो जाता है, फलस्वरूप वे उससे पृथक होने का प्रयास करते हैं, हो भी जाते हैं। मायादेवी का जीवन कष्टपूर्ण हो जाता है। जब अनेक प्रकार की छानबीन के पश्चात राजा विश्वस्त हो जाते हैं, तो उनका हृदय परिवर्तित हो जाता है। वे बिन्दु से कहते हैं—"मुझे मायादेवी से मिलना है। अब एक क्षण भी मैं उससे अलग नहीं रह सकता।"[4] करनाल नरेश राजसिंह तत्कालीन राज्य-व्यवस्था से भी संतुष्ट नहीं हैं। वे समस्त भ्रष्टाचारों का कारण केन्द्रीय शासन को

1. कुरुक्षेत्र जागता है—डॉ. एन. चन्दशेखरन नायर, पृ. 49 2. वही, पृ. 56
3. आधुनिक हिन्दी साहित्य को अहिन्दी लेखकों का योगदान—डॉ. विलासगुप्ते पृ. 207, वितरक: हिन्दी प्रचारक संस्थान, पिशाचमोचन वाराणसी–1
4. कुरुक्षेत्र जागता है—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 96

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मानते हैं। राजमाता द्वारा राजसिंह और मायादेवी के बीच बनी खाई पाटी जाती है। वह राष्ट्र-प्रेमिका के रूप में उन्हें उद्‌बोधित करती है। राजसिंह अपनी स्वार्थ-न्यस्त एवं संकीर्ण विचार-योजनायें निरस्त करके माँ के हाथ से राष्ट्रध्वज स्वयं ले लेते हैं। वे जनता के व्यक्ति बन जाते हैं। त्याग और सेवा उनका पवित्र उद्देश्य बन जाता है। जनता के प्रति उत्पन्न उनकी भ्रांति समाप्त हो जाती है। प्रेम और विश्वास उनका संबल हो जाता है। उन्हें युगों से पीड़ित साधारण जनता के जीवन में ही कुरुक्षेत्र जागता है, प्रतीत होता है। मायादेवी की मृत्यु से करनाल के हृदय को जबरदस्त धक्का लगता है। वे जगे हुये कुरुक्षेत्र को सदैव जगाये रखने के लिये संकल्प करते हैं—"जब कुरुक्षेत्र एक बार जग गया फिर दुर्बल हृदय लेकर क्या करना है।"[1] इस प्रकार एकांकी का अंत होता है।

'कुरुक्षेत्र जागता है' एकांकी समसामयिक परिवर्तन का प्रतिबिंबन करता है। एकांकीकार सर्वोदयी आस्था के प्रति विश्वस्त है। वह राजनैतिक पार्टियों की बहुलता से देश की शान्ति भंग होने की आशंका व्यक्त करता है। कुरुक्षेत्र के चरित्र अखण्ड भारत के निर्माण की योजना बनाते हैं, भले ही उस योजना के पल्लवन में उनका अपना निजी दृष्टिकोण हो; जिसमें स्वार्थ सधनें की संभावना भी निहित हो। राजा करनाल स्वयं 'प्रसाद' के वीतराग 'स्कंद' की तरह नेतृत्व की भूख नहीं रखता है।[2] देश में अनेक पार्टियों की आवश्यकता भी उसे नहीं महसूस होती है। वह अनेक स्वतंत्र दलों में विश्वास नहीं करता है। बिन्दु भी इसी विचार का परि-पोषण करते हुये कहता है—"वे चाहते हैं कि किसी प्रकार की राजनैतिक दलबन्दी की इसमें गुंजाइश ही न हो। देशहित पर सच्ची आस्था रखने वालों का ही दल बन जाये। आपने ही एक बार कहा था न कि सर्वोदय का पवित्र आदर्श भी कहीं कहीं ऐसे लोगों के हाथों में पड़ जाता है जो सेवा का अर्थ ही नहीं जानते और स्वार्थ एवं व्यापारिक मनोवृत्ति के पूरे शिकार हैं।"[3] इन सबके बावजूद 'कुरुक्षेत्र जागता है' के नायक में अपनी शक्ति को प्राप्त करने की भावना भी कम प्रबल नहीं दिखलायी पड़ती है। वह पचास हजार व्यक्तियों को साथ लेकर दिल्ली जाना चाहते है। अपनी सामर्थ्य का प्रदर्शन करना चाहता है। नायर ने इस एकांकी में सामंत-शाही-प्रथा की ह्रासोन्मुख स्थिति का चित्रण किया है। राजशाही के समापन और प्रजातंत्रात्मक शासन-प्रणाली के आगमन के संक्रमण काल का परिचय दोहरे संघर्षों द्वारा दिया गया है। दोहरा संघर्ष इस रूप में कि एक ओर जहां करनाल के राजा

1. कुरुक्षेत्र जागता है—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 99
2. कुरुक्षेत्र जागता है—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 87
"बिन्दु जाकर उनको बता दो कि नेतृत्व की भूख मूझ में नहीं है।"
3. वही, पृ. 88

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राजसिंह जैसे रियासतदार, विलय नीति से भयभीत, सत्ता में बने रहने का प्रयत्न करते हैं, वहीं जनता के सेवक बनने की आकांक्षा भी अंकुरित एवं पुष्पित होती है।

इस एकांकी में कर्तव्य के पथ का बोध कराया गया है। अब स्वयं के गौरवगान के स्थान पर शासक को जनता का सेवक बनना पड़ेगा। जनता अपने अधिकार को जानने लगी है। अपने प्रति कर्तव्य करने वाले का महत्व समझने लगी है, इसलिये उसके प्रति सेवाभाव रखना शासक के लिये अनिवार्य होता जा रहा है। अब नागरिक को अपनी और शासक के सम्बन्ध की जानकारी हो चुकी है। शासक को जनता की भावना का सम्मान करना होगा अन्यथा उसका अनादर ही होगा। संपूर्ण कृति भारत की विकासमान संस्कृति का पल्लवन करती है, जिससे लेखक के भारतीय संस्कृति के उपासक तथा आदर्शवाद के पोषक[1] होने की द्योतना होती है, फलतः मानवीय मूल्य अधिक अच्छी तरह प्रत्यक्ष हो सके हैं।

इस कृति में नारी को पुरुष की अपेक्षा अधिक सजग और स्वतंत्र विचारों वाली होना बतलाया गया है। मां के रूप में राजमाता गांव के उत्थान को प्रश्रय प्रदान करती है और बिन्दु से गांव के विकास की ओर इंगित करती है। यहां लेखक जयशंकर प्रसाद की नारियों की तरह अधिक स्वस्थ मानसिकता का निर्माण कर सका है। वह देश के उत्थान के प्रति अधिक सचेष्ट तथा अपने कर्तव्य के प्रति अधिक जिम्मेदार दिखलायी पड़ती है। राजमाता और बिन्दु परिवर्तन के हिमायती राष्ट्र सेवक हैं। उनमें भावनात्मक एवं विचारात्मक दोनों स्तरों पर नूतन युगबोध दिखलाई पड़ता है। इसीलिये वे इस बात से दुखी हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये जो वर्ग एक भाव से खून पसीना एक करने पर तुला रहा वही स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद एकबद्ध होकर देश की उन्नति नहीं कर रहा है।[2] देश संक्रान्तिकाल से गुजर रहा है इसलिये अहिंसक क्रान्ति द्वारा ही आन्तरिक दोषों का विध्वंस किया जा सकेगा। स्वतंत्रता राष्ट्रीय विकास के लिये है, आन्तरिक टूटन के लिये नहीं। स्वतंत्र होकर भी यदि हम अपनी भावनाओं को समुन्नत रूप देने और कर्म साधन द्वारा बदलने का प्रयास नहीं करते तो निश्चय ही हमारा ह्रास होगा। सत्य की प्रतिष्ठापना के लिये लेखक अपवाद के भय को तिलांजलि देना चाहता है तभी तो कहता है—"अपवाद से डरकर उस साधना का तिरस्कार करना अधर्म है, स्वार्थ है।"[3]

एकांकी में कथावस्तु, संवाद, चरित्र एवं अभिनेयता के सम्यक निर्वाह के कारण रसात्मकता प्रतीत होती हैं। कथावस्तु की अखण्डता उसे प्रभावपूर्ण बनाती है। संवाद छोटे-छोटे हैं, जिसे न तो पढ़ने से ऊब लगती है और न अभिनय हेतु

---

1. कुरुक्षेत्र जागता है—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 107
2. वही, पृ. 71-72
3. वही, पृ. 75

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

याद करने में दिक्कत होती है। कोमलता और ओज को पर्याप्त महत्व मिला है, इसलिये भावना अनुकूल सिद्ध होती है। लेखक शांतिगत क्रान्ति का समर्थक है, इसलिये प्रयत्न और उत्साह के समन्वित पक्ष पर बल दिया गया है। अंत :—संघर्ष से एकांकी को गतिशील बनाया गया। मायादेवी और राजा की दूरी एकांकी और आस्वादक को नजदीक लाती है। संदेह के कारण नारी को यंत्रणापूर्ण जीवन बिताना पड़ता है, पुरुष की ज्यादती उसे कष्ट में डाल देती है। माया और राजा का आंतरिक संघर्ष 'बदला' की नीरा और देवकीनाथ की अपेक्षा संवेदनशील तो कम, लेकिन संघर्षपूर्ण अधिक है।

कुरुक्षेत्र की चारित्रिक योजना में लेखक समसामयिक परिस्थितियों का सहयोग लेता है और सफलतापूर्वक उसका महत्व प्रतिपादित करता है। उसकी भावनाओं का प्रतिफलन, वर्तमान संदर्भों को प्रकट करने के स्तर पर स्थान ग्रहण करता है। कालेज के विद्यार्थियों के चरित्र को लाकर वर्तमान युग की अभिसंशयात्मक वृत्ति का निरूपण किया गया है। नायक के अन्तर्द्वन्द्व द्वारा भावों की टकराहट व्यंजित हुई है। पश्चाताप की अग्नि में जलते राजा का यह वाक्य सामान्य परिस्थिति की ओर संकेत करता है—"हाय, अगर मैं कवि होता तो उसके पवित्र प्रेम पर एक कविता रचकर उसे सुनाता। इस प्रकार उसके प्रति जो अन्याय मैंने किया उसका बदला देता।"[1] राजमाता दो वियुक्त हृदय को जोड़ने वाली कड़ी के रूप में चित्रित है। एकांकीकार समस्या उठाने के साथ समाधान का प्रस्तुतीकरण भी करता है, परन्तु वह समाधान रानी मायादेवी की मृत्यू के कारण अत्यधिक करुण बन गया है। महारानी जो चाहती है वह नहीं हो पाता है। मायादेवी विष खाकर मर जाती है, जिससे एकांकी का प्रभाव और संघर्ष एक बिन्दु पर मिल जाते हैं। यही एकांकी को कोमल बना देता है।

'कुरुक्षेत्र जागता है', की भाषा सरल, स्पष्ट एवं अर्थसम्पन्न है। लेखक होने के साथ एकांकीकार कवि है, इसलिये कहीं-कहीं कवित्वमयी वाणी का प्रवाह देखने को मिल जाता है तथापि भावुकता को विचार से संयमित किया गया है। दर्शन की शक्ति का प्रयोग भाषा को गंभीर बनाने के लिये किया गया है।

पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा—एकांकी की विकासमान धारा की द्वितीय अभिलेखिका श्रीमती पी. लक्ष्मी कुट्टिअम्मा हैं। श्रीमती लक्ष्मी कुट्टि अम्मा हिन्दी प्रचार के क्षेत्र में निष्ठापूर्वक भाग लेने वाली प्रथम शिक्षित महिला हैं। केरल के एकांकी-प्रणेताओं में पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा का एकांकी-लेखन अधिक स्वस्थ एवं प्रभाव पूर्ण है। उन्होंने जितने एकांकियों की रचना की है सबका अभिमंथन हो चुका है। वस्तुतः सांस्कृतिक कार्यक्रमों की माँग के अनुकूल ही उनका लेखन

1. कुरुक्षेत्र जागता है—डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, पृ. 86

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कार्य हुआ है। पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा को एकांकी-विज्ञान का बराबर ध्यान रहता है, इसलिये वे अपने एकांकी में दर्शक की रुचि के अनुसार संप्रेष्य वस्तु-सामग्री प्रस्तुत करती हैं। अभिनेयता और कथोपकथन का सम्यक विचार वे रखती हैं। नाटक और दर्शक के सम्बन्ध को बनाये रखने के लिये वे कितनी पटु एवं सचेष्ट रहती हैं, इसका पता उनकी अभिव्यक्ति से चल जाता है—

"हिन्दीतर प्रदेश के आमंत्रित सदस्य और अतिथि जिनमें अधिकांश हिन्दी भाषा की जानकारी न रखने वाले होते हैं, कथोपकथन की भाषा से अनभिज्ञ होने के करण रसास्वादन से वंचित रह जाते हैं।···रागात्मक वृत्ति को उत्तेजना देने वाले लोकप्रिय ऐतिहासिक नाटक में अभिनयात्मकता अधिक रहे तो कथोपकथन भी दर्शकों को रुचिकर हो जाएगा। चाहे भाषा की जानकारी काफी न हो।"[1]

उन्होंने दक्षिण के वीर चरित्रों की कथा को अपने एकांकियों का विषय बनाया है, जिनका परिचय हिन्दी भाषी जनता कर सकेगी। उनका एक संकलन "तीन एकांकी" नाम का प्रकाशित हुआ है, जिसका प्रथम संस्करण सितम्बर 1967 में निकला था। इस संकलन में "वेलुत्तम्मी की वीर आहुति", "पषश्शिराजा की वीर आहुति" और "भारतीयनारी, तेरी महिमा" शीर्षक एकांकी संकलित हैं। ये तीनों एकांकी प्रेरणा-प्रद एवं स्फूर्तिवद्धक हैं।

वेलुत्तम्पी की वीर आहुति—'वेलुत्तम्पी की वीर आहुति' एक ऐतिहासिक एकांकी है। यह एकांकी तिरुवितांकुर के दलवा (दीवान) पर आधारित राष्ट्रप्रेम से ओतप्रोत है। इसमें वेलुत्तम्पी, पद्मनाभ, अम्बिकादेवी, राधा और मुकुन्द नामक पात्र हैं। वेलुत्तम्पी एकांकी का नायक एवं अम्बिकादेवी नायिका है। वेलुत्तम्पी दलवा केरल का स्वतंत्रता-संग्राम-सेनानी और बलिदानी है। वह मातृभूमि की रक्षा एवं अपने स्वाभिमान का परिचय स्वयं के बलिदान द्वारा देता है। राष्ट्र के प्रति उसका उत्सर्ग भावी पीढ़ी के लिये आलोक-स्तंभ सदृश्य आज भी जगमगा रहा है। उस वीर पुरुष ने केरल भूमि में नवीन चेतना जागृत की। वस्तुतः वह असफल मनोरथ वाला सफल राष्ट्रसेवक था, जिसकी पराजय का कारण अंग्रेजों की धोखा-नीति रही। तब भी वह मनसे पराजित नहीं हुआ और स्वाभिमान के प्रदर्शन द्वारा राष्ट्रसेवा की अंतिम परिणति उस वीर की आहुति से हुई।

दलवा-काल बलिदान का काल था। स्त्री-पुरुष बलिदान की आग में स्वयं को झोंक देने के लिये तत्पर रहते थे। एकांकी की नायिका एवं दलवा की प्रेमिका अम्बिका एक भावुक हाड़-मांस की नारी मात्र नहीं, अपितु राष्ट्र प्रेमिका भी है। वह वेलुत्तम्पी की भाँति अपना बलिदान कर देती है, जिसके द्वारा एक ओर अपने आदर्श-प्रेमी दलवा के प्रेम का मूल्य चुकाती है, तो दूसरी ओर मातृभूमि की रक्षा के

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टिअम्मा (प्रवेश) पृ. 5

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिये समर्पित होकर भारत माता को गौरवान्वित करती है। वह निर्भीक एवं पवित्र हृदया नारी है। देशद्रोहियों के प्रति वह प्रतिक्रिया एवं देशभक्तों के प्रति मंगल कामना व्यक्त करती है।

प्रेम के क्षेत्र में वह सदय युवती है। उसके प्रेम की उदात्तता भारतीय नारी की उदात्तता का प्रतिनिधित्व करती है। वीर हृदया अम्बिका के प्रेम का रहस्य प्रेमी का वीरत्व है। वीर पुरुष वेलुतम्पी को ही वह अपने जीवन का एक मात्र आशा-किरण मानती है, जिसने उसके हृदय-दीप को स्नेह भरकर प्रज्वलित किया—"राधा, वह वीर पुरुष मेरे जीवन की एक मात्र आशा है, जिन्होंने मेरे हृदय-दीप को स्नेह भरकर प्रज्वलित रखा है।"[1]

अम्बिका एक संवेदनशील नारी है। वह अनुभूतिप्रवण सुन्दरी है। समय और परिस्थिति की समझ उसमें विद्यमान है। उसके मानस में प्रेम का सागर हिलोरें लेता प्रतीत होता है। वह अपने प्रेमी के विदा-काल के प्रणय-मिलन को अपनी सहेली से बतलाते-बतलाते कितनी भावुक हो जाती है, द्रष्टव्य है—

"...... जब उन्होंने प्रेस से मेरा हाथ पकड़ कर उन अंग्रेजों से लड़ने के लिये मुझसे विदा ली। हृदय-हृदय का वह मिलन। (लज्जाभाव) ओ, राधा, (राधा को पकड़कर अत्यधिक भावुकता से) वह मेरे जीवन का बसंत था। कोकिल का वह कलगान आनन्द दायक था। (हाथ जोड़कर) हे ईश्वर, हम दोनों के हृदयोद्गार एक दूसरे में समा जावे।"[2]

उसकी यही भावुकता उसे एक सफल प्रमिका सिद्ध कर देती है। वह प्रेमी वेलुत्तप्पी को युद्ध के लिये विदा इसी विश्वास के साथ करती है कि वह देश का हित-साधक है। वह उसके ऊपर अपना सर्वस्व समर्पण करती है—"मेरे जन्म को सार्थक और जीवन को सफल बनाने वाले अपने देव पर मैंने·· (कम्पित स्वर) सर्वस्व अर्पण किया।"[3]

देश द्रोहियों से दलवा की रक्षा के लिये वह महाराज को प्रसन्न रखती है। सेवा की दारुण वेदना सहते हुये भी प्रेमी की रक्षा उसका मुख्य उद्देश्य प्रतीत होता है। प्रलोभन के बीच भी पवित्रता की रक्षा करने वाली यह नारी राजमहल के बंधन में भी वेलुत्तम्पी की मंगल कामना करती हुई, कठोर संयम और व्रतानुष्ठान का उपक्रम पूरा करती है।[4]

अम्बिका स्वाभिमान से जीने वाली नारी है। उसमें धैर्य, ममता, विश्वास, आशा, सब कुछ है। वेलुत्तम्पी के मुंह से निराशाजनक शब्द सुनते ही वह कह पड़ती

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृ. 21
2. वही, पृ. 22
3. वही, पृ. 22
4. वही, पृ. 24

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है—"आप विश्वास रखिये देश की गौरव की रक्षा के लिये बलिदान करना इस देश का व्रत है।"[1]

उसे मात्र कुछ लोगों के बलिदान से उद्देश्य-प्राप्ति की संभावना नहीं दिखती है। वह जानती है कि व्यक्तिशः बलिदान क्षीण शक्ति वाला होता है। शक्ति प्राप्त करने के लिये अपने-अपने बलिदान के साथ सेना भी इकट्ठी करनी पड़ेगी—"बलिदान और आत्मार्पण हम स्त्रियों के लिये भी सरल है। केवल बलिदान से देश की रक्षा नहीं हो सकती···हम अपने विश्वस्त मित्रों को लेकर कहीं बाहर जावें और सेना इकट्ठा कर विदेशी अंग्रेजों को अपनी शक्ति दिखा दें।"[2]

इसका तात्पर्य यह नहीं कि उसे अपनी शक्ति पर भरोसा नहीं। वह तो दलवा जी के साथ स्वयं को समर्पित करने पर कटिबद्ध है—"इस विकट परिस्थिति में आपके हृदय की वीरता प्रज्वलित रखने के लिये आपके द्वारा जलाया यह स्नेह-दीप लालायित है।"[3]

स्वाधीनता प्राप्ति के लिये अम्बिका प्यासी है। वह म्यान से तलवार निकाल-कर युद्ध के मैदान में उतरने के लिये तत्पर है। वह सचमुच एक वीर बाला है। देशद्रोही नीलन पिल्ले की तलवार छीनकर वह अपने प्रेमी की जान बचाने में सफल होती है। वह देश की रक्षा के लिये भगवान पद्मनाभ से प्रार्थना करती है। उसका उज्ज्वल चरित्र भूरि-भूरि प्रशंसा के योग्य है।

प्रेम में विश्वास और स्थिरता का अमूल्य योग होता है। अम्बिका के हृदय में ये दोनों वर्तमान हैं। वह दलवा वेलुत्तम्पी को अपना प्रेम देती है, विश्वास समर्पित करती है। उनके विशाल हृदय को ही वह अपने अंधकार पूर्ण जीवन का एक मात्र प्रकाश मानती है। अम्बिका का प्रेम एकनिष्ठ है। वह प्रिय से मिलने के लिये उत्कंठित है, क्योंकि भावी अनिष्ट की आशंका उसे अशान्त बनाये रखती है। प्रेमी वेलुत्तम्पी दलवा की स्मृति उसे हर क्षण बेचैन किये रहती है—"परन्तु जिस दिन उस वीर पुरुष के प्रथम दर्शन ने मुझे अनुग्रहीत किया (प्रसन्न भाव) तब से वह गंभीर रूप से हर पल मेरे सामने मुस्कराता रहता है।"[4]

अम्बिका केवल प्रथम दृश्य में रहती है। दलवा को विदा करने के बाद वह रंगमंच से गायब हो जाती है और फिर राधा द्वारा उसके बलिदान की याद मात्र तृतीय दृश्य में प्रकाशित होती है। उसकी आहुति आस्वादकों के हृदय की कसक बनकर जीवित रह जाती है। सामाजिक उसको खोजता रहता, लेकिन मिलती है राधा द्वारा उसे यह सूचना—"धन्य है देवी, आपकी आहुति से माता वसुंधरा भी पुलकित होती है।"[5]

---

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृ. 25
2. वही, पृ. 28
3. वही, पृ. 29
4. वही, पृ. 22
5. वही, पृ. 43

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एकांकी के पुरुष पात्र एवं नायक वेलुत्तम्पी का चरित्र आकर्षक एवं प्रेरणास्पद है। वह स्वाभिमानी देशभक्त है। देश की तत्कालीन क्रान्ति के लिये वह दीवान का पद छोड़ देता है।[1] उसके स्वाभिमान और वीरत्व से आकर्षित होकर ही अम्बिका उसे ही अपना प्रेम समर्पित करती है। वह एक सफल प्रेमी है। संघर्ष और विपत्ति के बीच फंसे होते हुये भी उसे अपनी प्रेमिका अम्बिका से मिलने की आकांक्षा बनी रहती है। वह बलिदान के घाट पर खड़ा है, तब भी अम्बिका से अंतिम मिलन के लिये लालायित पहुँच जाता है—"सब कहीं धोखा और संघर्ष विपत्ति और सर्वनाश। कुण्डरा मैदान में जनता के सामने मैंने प्रतिज्ञा की थी या तो बंचिनार की रक्षा नहीं तो उसके लिये बलिदान। अम्बिका मैं तुमसे एक और बार मिलने आया हूं शायद, आखिरी मिलन..."[2]

वह अम्बिका के प्रेम को पाकर अपने को धन्य समझता है। वह कृतज्ञता व्यक्त करता है—"अम्बिका, केवल तुम्ही ने मेरे हृदय में कोमलता और दया का दर्शन किया। मैं अनुगृहीत हूँ। देवी मुझे अब जाना है।"[3]

वह देश का रक्षक एवं बंचिनार का केशरी अथक है। उसके परिश्रम एवं वीरता के कारण ही समस्त भारत पर अंग्रेजों की कूटनीति चलती रही, लेकिन बंचिनार पर नहीं चल पाती है। उसे अपनी शक्ति पर भरोसा और वंश पर गर्व है तभी तो अंग्रेजों के प्रति वह कहता है—"जीते जी मेरा शरीर उनके हाथ नहीं पड़ेगा, जिसमें तलक्कुलम वलियवीड़ु परिवार का रक्त बह रहा है। इस देश की वीर नायर जाति बचपन से ही तलवार से खेलती है, देशरक्षा ही उनके जीवन का धर्म और कर्म है।"[4] यही नहीं वह अपने ऊपर जितना भरोसा रखता है, उससे कम विश्वास अपने आत्मीय जनों पर नहीं करता है। वह दूरदर्शी एवं आत्माभिमानी है। वह देश द्रोहियों के कारण कुफल भोगते भारतवासी की स्थिति से अवगत है। देश में बढ़ती शिथिलता का परिणाम यही है कि देश असुरक्षित है।[5] वह वीरता और प्रेम के समन्वित चरित्र का प्रतिनिधित्व करने वाला आदर्श पात्र है। देश की रक्षा के लिये जहां अपने रक्त चढ़ाने के लिये वह तत्पर दिखता है, वहीं प्रेमिका अम्बिका से दूर होते देखकर भावुक हो जाता है—"देश की रक्षा में, मर्यादा की रक्षा में अपना रक्त भेंट करूँगा। अंबिका, प्रिय अम्बिका-इस जन्म में फिर तुम्हारे दर्शन न होंगे।"[6]

वह परिवार-प्रेमी है। विकट परिस्थितियों के बीच भी उसे अपनी मां, बहन की याद बनी रहती है।[7] वह अपने साथियों और सैनिकों के साथ घुलमिलकर रहने वाला व्यक्ति है। वह पद्मनाभ से उनके कुशल-क्षेम पूछता है। सबकी चिन्ता

---

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृ. 33
2. वही, पृ. 25
3. वही, पृ. 27
4. वही, पृ. 28
5. वही, पृ. 29
6. वही, पृ. 31
7. वही, पृ. 35

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसे रहती है। अत्याचार के दमन के लिये जो नर-केशरी तलवार निकाले खड़ा रहता है वही कुँज कुट्टी पिल्ले की मृत्यु पर आंसू बहाता है। वह वीर और सहृदय दोनों है।[1]

द्वितीय दृश्य के अन्त तक वह विक्षिप्त व्यक्ति सा प्रतीत होने लगता है। वस्तुतः उसके चरित्र को उन्मेषशील बनाने के लिये किया गया यह उपक्रम एकांकी को संवेदन की अतिशयता तक पहुँचा देता है।

राधा अम्बिका की सहेली है। वह अशान्त और हताश अम्बिका को सांत्वना प्रदान करने वाली सहचरी है। निराशा के क्षणों में वह अम्बिका को उसके प्रेमी के स्नेह और विश्वास की पात्रा बतलाती है। उसे राजमहल की पुष्पबाटिका के हर एक पुष्प अपनी सहेली अम्बिका के सर्वांग को सजाने के लिये लालायित प्रतीत होते हैं। सहेली की कामना की पूर्ति के लिये वह प्रार्थना करती है। वह चतुर और समझदार सहेली है। ज्यों ही बाहर झांककर देखने पर पता चलता है कि अम्बिका का प्रेमी वेलुत्तम्पी आ गया है झट बाहर चली जाती है[2] ताकि प्रेमी-युगल उन्मुक्त बात कर सके। वह बाधा न बन सके।

पद्मनाभ और मुकुन्द एकांकी में उपयोगी पात्र के रूप में आये हैं। पद्मनाभ दलवा का अनुज है। उसके प्रयोग से एकांकी गतिशील होता है तथा नायक का चरित्र प्रकाशित होता है। उसकी उपस्थिति द्वारा ही दलवा को संवेदनशील बनाया जा सका है। मुकुन्द का प्रयोग अनावश्यक नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि मुकुन्द और राधा के वार्तालाप द्वारा ही एकांकी की नायिका अम्बिका के उत्सर्ग की सूचना मिलती है। देखने में तृतीय दृश्य अनावश्यक प्रतीत होता है,[3] लेकिन है बहुत आवश्यक।

एकांकी का प्रारंभ ही नायक और नायिका के संवाद से होता है जिसके कारण दर्शक या पाठक को कुछ दूर तक अंधकार में नहीं रहना पड़ता है। अभिनयात्मकता, स्वाभाविकता, कथोपकथन, समय, स्थान, एवं कार्य की एकान्विति की दृष्टि से एकांकी सफल है। अभिमंचन-क्षमता के कारण ही यह सरकारी हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय (ट्रिच्चूर) की छात्राओं द्वारा 1966 ई. में तीन बार खेला गया तथा प्रथम दो दृश्य ध्वनि एकांकी के रूप में कालीकट रेडियो स्टेशन से सन् 1966 में तिरुओणम के दिन प्रसारित हुये। भाषा संस्कृत के परिचित तत्सम शब्दों की प्रयुक्ति से अहिन्दी भाषी जनता के लिये सहज बन गयी है। यह लेखिका का सर्वाधिक प्रभावपूर्ण एकांकी है।

---

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृ. 35 2. वही, पृ. 25
3. आधुनिक हिन्दी साहित्य को अहिन्दी लेखकों का योगदान—डॉ. विलास गुप्ते, पृ. 207 "एकांकी का तीसरा दृश्य अनावश्यक है।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पषश्शि राजा की वीर आहुति—यह पषश्शि राजा के आत्मार्पण पर आधारित ऐतिहासिक एकांकी मालनाड की स्वतंत्रता की रक्षा के लिये पषश्शि तम्पुरान अपना सुख-वैभव छोड़कर वनवासी हो जाता है। वह पहाड़ों पर वास करने लगता है। वह कुरिची जाति को अपना अंतरंग मित्र बनाकर उन्हें युद्धकला सिखलाता है। जिस पहाड़ी पर तम्पुरान रहता है वह राजधानी सा बन जाता है। नृत्य, संगीत, वाद्य और साहित्य की मधुर ध्वनि से वह प्रान्त मुखरित रहता है। माक्कम तम्पुरान की प्रेमिका एवं अम्पुनायर की भांजी है। माक्कम से चन्तुनायर भी प्रेम करने का प्रयत्न करता है लेकिन माक्कम उससे प्रेम नहीं करती है। चन्तु-नायर माक्कम का जीजा है। रात में कैतेरी भवन में निवास करती माक्कम से वह एकान्त में मिलने आता है, जिसे माक्कम अनुपयुक्त समझती है और अनधिकार चेष्टा मानती है। पहले तो वह माक्कम की प्रशंसा करके अपने जाल में फँसाना चाहता है परन्तु जब वह उनके चंगुल में नहीं फँसती तो तम्पुरान की हीनता और अपनी बहादुरी का गुणगान करता है। माक्कम उसे भला-बुरा कहकर बाहर निकलने को कहती है—"चन्तु जीजा · दुर्भाग्य से आप बहन के पति हैं। जीजा की हत्या से मेरी बहन विधवा होगी।······जीजा, यहां से जल्दी जाने में ही आपकी भलाई होगी।"[1] यहीं प्रथम दृश्य समाप्त होता है।

दूसरा दृश्य सांध्यकाल से प्रारंभ होता है। पुरली पहाड़ के एक टीले पर पषश्शि राजा एक दीपक के प्रकाश में कुछ लिखते हैं। उनकी पत्नी कुंजानी केट्टिलम्मा पास बैठी है। केट्टिलम्मा तम्पुरान के कविव्यक्तित्व और हार्दिक कोमलता का गुणगान करती है तो तम्पुरान केट्टिलम्मा की स्वरमाधुरी और प्रेम शक्ति की प्रशंसा करता है। जंगल में तम्पुरान को नीली के सहयोग से काफी लाभ होता है। नीली वेलेस्सली का घमंड चूर कर देती है, अंग्रेजी सेना को तितर-बितर कर देती है। भागे सैनिकों के अस्त्र-शस्त्र हड़प लेती है तथा वेलेस्सली को हमेशा के लिये दहशत में डाल देती है। इसी समय अम्पुनायर आकर, तम्पुरान को, चन्तुनायर द्वारा कष्ट प्राप्त करती माक्कम के विषय में, बतलाता है, फलतः तम्पुरान, जहां नीली से कुरिची सेना के एक भाग को वयनाड पर तथा दूसरे भाग को पुरली पहाड़ पर व्यवस्था के लिये कहता है, वहीं पचास सैनिक कैतरी में माक्कम की रक्षा के लिये भेजने को कहता है। नीली व्यवस्था का आश्वासन देती है।

तीसरा दृश्य वयनाड पहाड़ से प्रारम्भ होता है। दृश्य का प्रारंभ नीली और उसकी माता के वार्तालाप से होता है। नीली उदयवर्मन को अपना शत्रु मानती है, परन्तु उसकी मां इसे भ्रान्ति कहती है। तम्पुरान के प्रति उसकी माँ आशंका व्यक्त करती है। नीली मां के इस अचानक परिवर्तन से विस्मित होती है। नीली की मां

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृ. 58

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसे तम्पुरान की अन्ध-भक्त होने का आक्षेप लगाती है। नीली की मां के हृदय में पषशिश राजा के पतन की अभिलाषा तथा छिनती स्वतंत्रता के बीच अन्तर्द्वन्द्व होता है। वह कुछ भी निर्णय नहीं ले पा रही है। तम्पुरान द्वारा किये गये उपकार को याद करती है तो उसे अपने कृत्य पर क्षोभ होता है। अंततः चन्तुनायर की प्रेरणा से वह विश्वासघातिनी बन जाती है।

चौथा दृश्य पुरली पहाड़ के ऊपर के एक मैदान से प्रारंभ होता है। अम्पु देश की स्वतंत्रता की रक्षा के लिये तम्पुरान के जीवन की रक्षा, प्रथम कर्तव्य मानता है। वह उसे ही वीरता, देशाभिमान, त्याग और स्वतंत्रता का प्रतीक मानता है। नीली की माँ कम्पनी के सैनिकों को पुरली पहाड़ से वयनाड भेज देती है। इसी बीच वीर अम्पुनायर की छाती पर गोली लगी और वह मर जाता है। तम्पुरान अतीव वेदना के साथ आत्मार्पण कर देता है।

सम्पूर्ण एकांकी तम्पुरान और नीली के चरित्र से प्रभावशील बना रहता है। खलनायक के रूप में चन्तुनायर और खलनायिका के रूप में नीली की मां का चरित्र द्रष्टव्य है। माक्कम प्रेम की पुतली है। उसका हृदय साध्वी प्रेमिका का हृदय है। वह तम्पुरान से प्रेम करती है तो उसके अलावा और किसी को अपना प्रेम देना आत्म-सम्मान के खिलाफ बात समझती है। अम्पुनायर तम्पुरान का सहयोगी और माक्कम का मामा है। वह भी देशसेवा के लिये अपनी आहुति कर देता है। केरल के आदर्श संस्कार और पौरुष का समन्वित चित्रांकन नारी और पुरुष दोनों पक्षों के आधार पर एकांकी में किया गया है। हृदय की कोमल वृत्ति और पुरुष वृत्ति दोनों का एक साथ प्रस्तुतीकरण है। अंग्रेजों को देश से निकालने में जितनी महत्वपूर्ण भूमिका पुरुषों की थी उससे कम महत्वपूर्ण भूमिका स्त्रियों की नहीं थी। नीली यदि देशरक्षिका नारी के रूप में चित्रित है तो माक्कम पवित्र व्यक्तित्व वाली नारी के रूप में उल्लिखित है।

अतः अलग पात्रों का मूल्यांकन करने पर तम्पुरान का व्यक्तित्व बहादुर योद्धा का व्यक्तित्व कहा जा सकता है। तम्पुरान एक व्यवस्थित एवं कुशल सैनिक है। वह दूरदर्शी एवं स्वाभिमानी व्यक्ति है। उसकी प्रत्युत्पन्नमति एवं धीरता सराहनीय है। आवश्यकतानुसार वह कुरिची सेना का एक भाग वयनाड पर, एक भाग पुरली पहाड़ पर और पचास सनिक अपनी प्रेमिका माक्कम की रक्षा के लिये तैनात कर देता है। वह हर स्थिति का ख्याल रखता है और तदनुकूल व्यवस्था करता है। उसके चरित्र का उद्घाटन चौथे दृश्य में हुआ है। अम्पुनायर के यह कहने पर कि आप कहीं रक्षा-स्थान में छिपे रहकर प्राण बचाइये वह उत्तर देता है—"अम्पु जब सैनिक देश के लिये आहुति देते हैं, तब मैं ही क्यों जीवित रहूँ। अपमान सहकर जीवित रहने से वीर मृत्यु हमें स्वीकार है।"[1]

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृ. 77

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वह प्रजाहित के लिये पहाड़ को अपना निवास स्थान बनाता है। वह स्वच्छ हृदय का व्यक्ति है। नीली की माँ तक पर उसे अविश्वास नहीं होता है। वह उसके प्रति कहता है—"नारी सब कुछ सह सकती है पर अपमान नहीं। एक क्षणिक दुर्बलता से तेरी माता ने उदयवर्मन और चन्तुनायर का विश्वास किया। उसमें उसका दोष नहीं।"[1] वह देशसेवा के लिये आहुति देना सौभाग्य की बात मानता है। कर्तव्य को प्रमुख सम्बल मानकर चलने वाला तम्पुरान मातृभूमि की रक्षा के लिये दूसरे जन्म में भी इस देश में जन्म लेने के लिये प्रार्थना करता है।

नीली का चरित्र स्त्री-चरित्रों में सर्वाधिक प्रभावपूर्ण चरित्र है। वह तम्पुरान की रक्षा के लिये आद्योपान्त सचेष्ट रहती है। अपने बाहुबल और बुद्धिमत्ता के कारण ही बेलेस्सली के घमंड चूर करने में सफल हुई। वह अपनी माँ की योजना से अशान्त हो जाती है और तम्पुरान के प्रति उत्पन्न अपनी माँ की आशंका को निर्मूल सिद्ध करने का प्रयास करती है। अपनी माँ की कृतघ्नता के कारण उसे भारी धक्का लगता है। घड़ी भर में अपनी दीर्घ कालीन साधना को निष्फल कर देने वाली अम्मा के प्रति घृणा हो जाती है। वह हर प्रकार से विवश दिखती है, परन्तु अपने कर्तव्य से महान बनी रहती है। देशरक्षा के लिये प्राण देने वाले वीर सैनिक और तम्पुरान की रक्षा हेतु उसका जीवन है। प्राण देकर भी तम्पुरान की रक्षा के लिये वह तत्पर रहती है।

माक्कम, चन्तुनायर जैसे जघन्य व्यक्ति की अपवित्र चेष्टा द्वारा भी मलिन नहीं बन पाती है। उसकी एकनिष्ठ प्रेम-भावना, तम्पुरान को अपना आशा-स्थल बनाये रहती है। चन्तुनायर सम्बन्ध में उसका जीजा है, परन्तु कर्म से नीच तथा दुराचारी है। फिर भी वह अपने दुराचार के प्रयोग से माक्कम जैसी नारी को दूषित नहीं कर पाता है। वह सुन्दरी है, इसीलिये तम्पुरान अपना अनुराग-भरा हृदय उसके सामने भेंट कर देता है, तभी तो तम्पुरान जाती, चमेली, केसर जैसे सुगन्ध भरे पुष्पों से उसका सम्बन्ध जोड़कर संदेश भेजता है। प्रिय की धारणा का आदर करते हुये वियोग के दिनों में भी अपनी वेणी को पुष्पों से अलंकृत कर साज-सजावट में लीन रहना चाहती है।[2] महाराजाओं की कृत्रिम विभूतियों से भरे राजमहलों की अपेक्षा अपने प्रेमी तम्पुरान की जंगल की राजधानी ही उसे प्रिय लगती है।[3] आवश्यकतानुसार वह वीरता भी प्रदर्शित करती है। चन्तुनायर की नीचता को असह्य समझकर वह उत्तर देने में नहीं हिचकती है। वह उसकी बहन का पति है, यही उसको खेद है। निर्लज्ज संबोधन द्वारा उसे घृणास्पद एवं नीच प्रकृति का व्यक्ति कहती है। माधव उसे समाप्त करने का उपक्रम करता है, लेकिन वह इसलिये रोक देती है कि वह उसकी बहन का पति है।[4]

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृ. 79
2. वही, पृ. 54
3. वही, पृ. 53
4. वही, पृ. 58

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चन्तुनायर देशद्रोही एवं अंग्रेजों की मिलीभगत का व्यक्ति है। उसका चरित्र कुटिल एवं आचरण अपवित्र है। एकान्त में पाकर माक्कम के चरित्र को दूषित करना चाहता है। वयनाड पहाड़ के समस्त रक्षास्थल वह अंग्रेजों को बता चुका है। कम्पनी से मिलकर पषश्शि किले पर अधिकार करने की योजना बनाता है। नीली की मां के विचार को तम्पुरान के प्रतिकूल बनाने में उसकी भी करामात है। माधव एक वीर सैनिक है। माक्कम के कौमार्य की रक्षा, चन्तुनायर जैसे दुष्ट पात्र से, वही करता है। वह अम्पुनायर और तम्पुरान के प्राण की रक्षा करने वाला साहसी सिपाही है।

समग्रत: एकांकी चार दृश्यों से सम्बद्ध है। घटनाओं का सम्बन्ध अलग-अलग स्थानों से है तथापि उनमें कार्यगत सम्बद्धता है। भावना और विचार के अनुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है। माक्कम और उसकी सहेलियों की पारस्परिक बातचीत श्रृंगार का पुट लिये हुये है। ओजस्वी स्थलों पर भाषा में भी ओज ध्वनित होता है। कैतेरी भवन, पुरली पहाड़ के टीले, वयनाड पहाड़ और पुरली पहाड़ के मैदान का सम्बन्ध कथा के उद्देश्य से जुड़ा है, इसलिये एकांकी में एकान्विति स्वभावत: प्रतीत होती है। पात्रागत मनोविज्ञान की टोह और हिन्दू संस्कृति का विकास एकांकी में देखा जा सकता है। पात्राधिक्य नहीं होने पाया है। प्रभाव में कोई कमी नहीं है। गीत का प्रयोग सप्रयोजन है इसलिये अनावश्यक नहीं कहा जा सकता है।

भारतीय नारी तेरी महिमा—लक्ष्मी कुट्टि अम्मा का यह एकांकी सर्वाधिक प्रशंसा प्राप्त एकांकी है। लेखिका स्वयं इसे अपना परमप्रिय एकांकी बतलाती है—"हृदय की स्वतंत्रता और महानता धर्म के संकुचित दायरे में बँधी नहीं रह सकती, और भारतीय नारी का हृदय क्षमा, त्याग और तपस्या का एक सुरम्य तपोवन बने तो पृथ्वी में ही स्वर्गीय शान्ति उपलब्ध होगी। यह आदर्श एकांकी के द्वारा प्रस्तुत करते हुये मुझे बड़े आनन्द की अनुभूति हुई।"[1]

डॉ. विलास गुप्ते ने इसे एक उल्लेखनीय एकांकी कहा है।[2] हिन्दू मुस्लिम-समन्वय नीति के अनुपालक अकबर को अपने पिता हुमायूँ से ही समन्वय-भावना, विरासत के रूप में प्राप्त हुई थी। हुमायूँ ने मेवाड़ की रानी कर्मवती के साथ रक्षाबंधन के निर्मल धागों के द्वारा पवित्र सौहार्द का बन्धन स्वीकार कर भारतीय इतिहास में अमरता प्राप्त की थी। उसी हुमायूँ के चरित्र के अन्यतम पक्ष का उद्घाटन करना लेखिका ने अपना उद्देश्य माना है। एकांकी का प्रथम दृश्य हिन्दू नारी के परिचय का दृश्य है। उसके संस्कार और आचार को प्रकाश में लाना एकांकी कर्त्री का उपलक्ष है। एकांकी की कथागत संरचना द्वितीय दृश्य से हुई है। सान्ध्यकाल में उस्मान के

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृष्ठ 7, प्रवेश
2. आधुनिक हिन्दी साहित्य को अहिन्दी लेखकों का योगदान—डॉ. विलासगुप्ते, पृष्ठ 207

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घर पर देवी बन्दी के रूप में है। हुमायूँ का सेनानायक उस्मान उस हिन्दू महिला को सम्राट के प्रेम-विह्वल हृदय को शक्ति देने के लिये बन्दी बनाता है। देवी अतीव सुन्दरी है। उसकी मनोज्ञता ही बादशाह के आकर्षण का कारण है।

तीसरा दृश्य हुमायूँ और उसकी बहन गुलबदन के वार्तालाप से प्रारम्भ होता है। गुलबदन हुमायूँ से उसकी बेचैनी एवं अस्वस्थता का कारण पूछती है। हुमायूँ अपनी अस्वस्थता का कारण एक हिन्दू ललना के सौन्दर्य को बतलाता है। गुलबदन हुमायूँ के इस अनुचित विचार को उसके महिमा तथा व्यक्तित्व के प्रतिकूल बताती है। पाप और अधर्म कहती है। गुलबदन उसको अपनी परंपरा की शान की ओर ध्यान दिलाती है·· "भाई जान, जरा सोचिये तो सही, आपकी यह कामना हमारे अब्बाजान के अंतःकरण को कितनी गहरी चोट पहुँचायेगी।"[1] यहीं से हुमायूँ का विचार-परिवर्तन होता है। वह अपने हाथ देवी के सम्मान को सुरक्षित रखने का संकल्प करता है। देवी को देखकर एक बार पुनः उसकी मानसिक अशान्ति लौट आती है और उसे भारत साम्राज्ञी तथा अपनी प्रिय संगिनी बनाने का वचन दुहराता है। देवी अपनी मर्यादा, अपने सतीत्व और धर्म की रक्षा के लिये हुमायूँ से आकांक्षा व्यक्त करती है। वह रोने लगती है। हुमायूँ का पुनः हृदय-परिवर्तन होता है और उस्मान के इस अन्यायपूर्ण कार्य को घृणित एवं लज्जाजनक बतलाता है। वह देवी को डोली में घर पहुँचाने की व्यवस्था करता है। मोती का बहुमूल्य हार भी भेंट के रूप में प्रदान करता है।

यह एकांकी भावना के परिवर्तन और समन्वय की कहानी कहता है। हुमायूँ के विलासी चरित्र को संयमित करने वाली देवी एकांकी की मुख्य पात्रा है। उसका चरित्र उज्ज्वल एवं हृदय पवित्र है। वह बादशाह के सामने पहुंचकर भी अपने कुटी के प्रियतम को ही सब कुछ समझती है—"मेरे प्राण उस छोटी सी कुटी में मेरे प्रियतम के चरणों में तड़पते ही रहते हैं। वे ही मेरे जीवन की अमूल्य निधि हैं और कुछ चाह नहीं।"[2] देवी का हृदय कोमल एवं उदार है। सम्राट के मनोरथ को पूरा करने के विचार से पालकी ढोने वालों को प्रलोभन देकर देवी को मन्दिर से सम्राट के घर तक लाने वाले उस्मान को जब सम्राट प्रजाद्रोही कहकर कैद करने के लिये कहता है तो वह अपने हिन्दू धर्म की रक्षा करते हुये मानवता का परिचय देता है··· "स्नेहिल धारा को आप अपने इष्ट मित्र और सेवक उस्मान पर भी बरसाइये। अपराधी से घृणा न कीजिये पर अपराध को दण्ड दीजिये।··· मनुष्य धनलोभ और महत्वाकांक्षा में पड़कर कभी-कभी दुर्बलता की मूर्ति बन सकता है। गलती करना साधारण बात है, पर क्षमा अलौकिक है।"[3]

---

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृष्ठ 94
2. वही, पृष्ठ 97
3. वही, पृष्ठ 98-99

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यहां देवी का चरित्र एन. चन्द्रशखरन नायर के 'बदला' एकांकी की नीरा से मिलता-जुलता दिखलायी पड़ता है। हृदय-परिवर्तन और 'अन्याय से घृणा करना अन्यायी से नहीं', की भावना के चरितार्थ भी, बदला' और 'भारतीय नारी, तेरी महिमा' के, लगभग समान हैं। इन दोनों एकांकियों की कथावस्तु का मूल उद्गम गाँधी के हृदय-परिवर्तन के सिद्धान्त से परिलक्षित होता है।

देवी के चरित्र की एक अन्यतम विशेषता उसका प्रलोभन रहित होना ही है। वह उस्मान द्वारा जब साम्राज्ञी बनाने का प्रलोभन प्राप्त करती है, तब स्पष्ट उत्तर देती है··· "साम्राज्ञी बनना मेरे लिये महान कार्य भी नहीं। मैं एक वीर पुरुष की प्राणप्रिया हूं, जो मेरे लिये अद्वितीय पद है। विवाहित भारतीय नारी के लिये पति का घर ही सबसे बड़ा वरदान है।"[1] देवी के इस उत्तर के सामने दुनिया की हर जाति की संस्कृति निरुत्तर हो जाएगी। वह भारतीय नारी एवं हिन्दू संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाली गौरवमयी देवी है।

हुमायूँ बाबर का पुत्र था। देवी को देखकर वह उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो जाता है। उस्मान उसकी आकांक्षा की पूर्ति करके अपने भाग्य चमकाने का स्वप्न देखने लगता है, परन्तु हुमायूँ को जब उसकी बहन गुलबदन समझाती है तो उसका हृदय परिवर्तित हो जाता है। वस्तुतः उसमें अपने पिता का रक्त है जो मरते दम तक भारतीय संस्कृति और नारीत्व की गरिमा की रक्षा करने का आदेश देते रहे। हुमायूँ का शाही व्यक्तित्व बीच-बीच में सौन्दर्य का लोभ प्रकट करता है; लेकिन अंततः देवी को सादर मुक्त कर देता है।

उस्मान और गुलबदन का चरित्रांकन भी उपयुक्त हुआ है। उस्मान एक महत्वाकांक्षी सेनापति है। पद-वृद्धि के लोभ से वह हिन्दू देवी को सम्राट के सामने बंदी बनाकर ला देता है। गुलबदन हिन्दू संस्कृति और नारी-हृदय को समझने वाली महिला है। वही भारतीय नारी के नारीत्व की गरिमा को बताकर हुमायूँ का हृदय परिवर्तित करने में सफल होती है। पिता बाबर की संतान को ऐसे जघन्य कार्य करने की ओर से हटाती है। एकांकी के सभी चरित्र मुखर एवं व्यक्तित्व सम्पन्न हैं।

इस एकांकी में लेखिका ने भारतीय संस्कृति और भारतीय नारी की विशिष्टता का उद्घाटन किया है। राष्ट्रप्रेम और राष्ट्रीय मर्यादा दोनों का समन्वित पक्ष देखा जा सकता है। हुमायूँ के मुंह से बाबर के विचारों को अभिव्यक्त कराकर देश की संस्कृति और नारियों के गौरव का गान ही उसका अभिप्रेत है··· "मैं उस महापुरुष बाबर का पुत्र हूँ, जो मरते दम तक भारतीय संस्कृति और नारीत्व की गरिमा की रक्षा करने का आदेश मुझे देते रहे।"[2]

एकांकी के सभी दृश्य सप्रयोजन हैं। यहां तक कि प्रथम दृश्य भी, जो

1. तीन एकांकी—पी. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा, पृष्ठ 90 2. वही, पृ. 97

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अतिलघु एवं असंपृक्त है। उसकी प्रयुक्ति ही हिन्दू धर्म के संस्कार, पाठक या दर्शक के मन पर प्रभाव छोड़ने में समर्थ है, जिसके कारण मुस्लिम वातावरण के अतिरिक्त हुई वातावरण की पृष्ठभूमि समझ में आती है।[1] भाषा की सरलता एवं कोमलता सराहनीय है। अम्मा जी के समस्त एकांकी इतनी सुष्ठु भाषा के हिमायती नहीं दिखलाई पड़ते हैं। कथा-उत्स का महत्व स्वयमेव प्रतिपादित है।

इन एकांकियों के अतिरिक्त केरल की हिन्दी पत्रिकाओं में कुछ मौलिक एकांकी और प्रकाशित हुये हैं, जिसमें 'ग्रंथावलोकम' के अगस्त 62 के अंक में प्रकाशित के. नारायणन् का हास्य एकांकी, 'आखिरी सवाल' तथा फरवरी 62 के अंक में प्रकाशित पी. वी. वरगीस का 'चंद्रिका' महत्वपूर्ण एकांकी हैं। श्री रंग विक्रम-नायर का 'एक ही सहारा' एकांकी 'केरल-भारती' के दिसम्बर 62 के अंक में एवं उसी पत्रिका के फरवरी 62 के अंक में श्री एरुर वासुदेव का 'एक बकरी, पाँच हकदार' शीर्षक एकांकी प्रकाश में आये।[2] इन एकांकियों की भाषा जनसाधारण की समझ में आने वाली तथा उनके विषय आधुनिक जीवन को छूने वाले हैं। अभिनेयता की शक्ति इन एकांकियों में मौजूद है। 'एक ही सहारा' एकांकी ने 60–61 की रेडियो प्रतिस्पर्द्धा में प्रथम पुरस्कार भी प्राप्त किया। यह ध्वनि एकांकी है। 'एक बकरी पाँच हकदार' शीर्षक एकांकी पारिवारिक कलह पर आधारित पीड़ा और सहानुभूति का मर्मोद्घाटन करता है।

एकांकी-परम्परा के विकास क्रम का अध्ययन करने पर यह कहना सर्वथा उपयुक्त होगा कि हिन्दी एकांकी के इतिहास में केरल के हिन्दी एकांकी-प्रणेताओं का अमूल्य योगदान रहा है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में इन एकांकी स्रष्टाओं की महत्ता स्वीकार करनी होगी, जिनके अध्ययन से उत्तर भारत के वैचारिक समन्वय को बल मिल सकेगा। विश्वास है कि वह परंपरा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसित, और स्वस्थ एकांकी को जन्म दे सकेगी, जिसको पाकर हिन्दी संसार गौरवान्वित होगा।

---

1. केरलीयों की हिन्दी को देन—डॉ. जी. गोपीनाथन, पृ. 109 2. वही, पृ. 109

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कहानी-लेखन

कहानी आधुनिक युग की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है। आकाश में बिजली की चमक की तरह वह जीवन के किसी मार्मिक प्रसंग को उजागर कर देती है। वह घंटे की आवाज की तरह होती है, जिसकी गूंज लम्बे समय तक हृदयाकाश में बनी रहती है। मनोरंजन के साथ-साथ कुछ सोचने-समझने की प्रेरणा देने के कारण—और वह भी अपनी आकार-लघुता के कारण मनुष्य के व्यस्त जीवन का थोड़ा ही भाग लेते हुए—कहानी अपनी सशक्तता और लोकप्रियता में कविता से भी आगे बढ़ गयी है।

केरलीय हिन्दी साहित्यकारों ने हिन्दी कहानी को भी अपनी रचनाओं से समृद्ध किया है। स्वातन्त्र्य-पूर्व युग में पी के. केशवन नायर, सी. जी. गोपालकृष्णन, माधवि कुट्टि, ई. के. दिवाकरन पोट्टी आदि की कथ्य एवं भाषा की दृष्टि से सक्षम अनेक कहानियाँ 'हिन्दी प्रचारक' तथा 'हिन्दी मित्र' पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। पी. के. केशवन नायर की 'मेरा सुख स्वप्न' (1929) तथा 'सुई' (1932), सी. जी. गोपाल कृष्णन की 'पुनर्मिलन' (1931), माधविकुट्टि की 'परीक्षाशुल्क' (1932) तथा ई. के. दिवाकरन पोट्टी की 'रेशमी रूमाल' (1942) कहानियाँ इनमें विशेष उल्लेखनीय हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर युग में हिन्दी कहानी लेखन का क्रम केरलीय हिन्दी लेखकों ने जारी रखा है तथा अनेक प्रतिभाएँ उभर कर सामने आयी हैं। 'अरविन्द', 'केरल भारती', 'आर्य केरली', 'राष्ट्रवाणी', 'केरल ज्योति' आदि केरलीय हिन्दी पत्रिकाओं में केरलीय हिन्दी लेखकों की कहानियाँ प्रकाशित होती रही हैं। यह बात अवश्य है कि संख्या की दृष्टि से अधिकतर कहानी लेखकों ने चंद्रधर शर्मा गुलेरी की परम्परा का अनुसरण किया है। व्यापक रूप से कहानी लेखन की साधना में रत लेखकों में उल्लेखनीय हैं—श्री के. नारायणन, डॉ. पी. गोविन्द शेनाय तथा डॉ. एन. चंद्रशेखरन नायर। श्री नारायणन की कहानियाँ हास्य-व्यंग्य का आधार लेकर चलती हैं तथा भाषा-शैली की दृष्टि से समर्थ एवं विशिष्ट हैं। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित उनकी लगभग पचास कहानियों में 'मिस्टर अंदाज', 'प्रेम प्रकटन', 'डाइरेक्टर का रिमार्क', 'पीपल का भूत' 'कद्रदान' आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। डॉ. शेनाय और डॉ. नायर ही ऐसे कहानी-लेखक हैं, जिनके संग्रह प्रकाशित हुए हैं।

मिस्टिक साहब का कुरता : वी. गोविन्द शेनाय—'मिस्टिक साहब का कुरता' 26 कहानियों का संग्रह है, जो सन् 1961 में प्रकाशित हुआ। यों लेखक के अनुसार 'इन कहानियों के पात्र, घटनाएँ और प्रसंग सब काल्पनिक हैं, किन्तु इनकी कल्पना अत्यन्त सजीव ढंग से तथा यार्थार्थिक स्तर पर की गयी है। आधुनिक जीवन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में बाह्यांतर की असंगति तथा आदर्शों के खोखलेपन को लेखक श्री वी. गोविन्द शेनाय ने अपनी समर्थ लेखनी की व्यंग्य-प्रखर नोक से उघाड़ा है। लेखक की पैनी दृष्टि ने यत्रतत्र, भिन्न-भिन्न रूपों में समाज को घुन की तरह खाते हुए तथाकथित समाज सेवकों को पहचाना है और इन छोटी-छोटी कहानियों में उनके असली-नकली चेहरों को आमने-सामने ला खड़ा किया है। इन व्यक्तियों के शब्द-चित्र प्रस्तुत करने में लेखक ने अपनी चित्रण-क्षमता तथा भाषा पर अधिकार का परिचय दिया है—

"मजबूत हड्डियों पर निर्द्वन्द्व विचरती मटियाली मूंछें, घृणा की गठरी-सी सिकुड़ी नाक, संकीर्ण माथे पर बिखरे शुष्क स्नेहहीन बाल, इनकलाब के लाल रूमाल में लिपटा गला, कनपटी पर मच्छर छाप बीड़ी का टोंका…"

(कम्यूनिस्ट किसनू)

"विलायती मक्खन-सा विवर्ण किन्तु अत्यन्त कोमल चेहरा, कद्दू की बेल-सी रेंगती मूंछें, देशी दवात-सी नाक, गुनगुनाते गीले ओठ और उनकी आड़ में दुबककर बैठे पीले दाँत…"

(परब्रह्म रावु)

व्यक्तियों की रूपरेखाओं को सजीव करने के साथ-साथ श्री शेनाय दृश्य और वातावरण को मूर्त्त कर देने की कला में भी अत्यंत प्रवीण हैं—

"दूकान के द्वार पर टँगा विकलांग विज्ञापन बोर्ड, भीतर ईंटों पर रखी अनलंकृत अलमारी, आसवों का आभास देनेवाली रंगीन बोतलें, मैले किन्तु रंगीन मेजपोश से आवृत्त जर्जर पायों वाली पुरानी मेज और व्यथा में घुलते वृद्ध वैद्यराज—दुखान्त नाटक के सारे प्रसाधन दूकान जुटा चुकी थी।"

(विकलांग विज्ञापन बोर्ड)

"सभी लोगों ने निर्निमेष नेत्रों से मिस्टिक साहब की ओर देखा, जो उस समय साढ़े तीन पायों और ढाई ईंटों पर प्रतिष्ठित कुर्सी से बड़ी सतर्कता के साथ अपने शरीर का संतुलन स्थापित करने के प्रयत्न में रत थे।"

(मन मोहन मिस्टिक)

'मिस्टक साहब का कुरता' में कहानीकार ने छोटी-छोटी झलकियाँ प्रस्तुत की हैं, जो अलग-अलग अनेक व्यंगबिद्ध चरित्र सामने लाती हैं, किन्तु पूरा संग्रह पढ़ चुकने पर यह बात स्पष्ट होती है कि ये सभी पात्र उपन्यास के विभिन्न पात्रों की तरह कहीं न कहीं एक दूसरे से जुड़े हैं और इनकी क्रीड़ास्थली है—चंदनपुर। वस्तुतः 'मिस्टिक साहब का कुरता' को एक लघु उपन्यास ही कहना कदाचित् अधिक सार्थक है, क्योंकि सभी कहानियाँ छोटे-छोटे अनेक प्रसंगों को उभारकर चन्दनपुर गाँव का एक समग्र चित्र उपस्थित करती हैं। वस्तुतः सभी कहानियाँ कहानियाँ हैं भी नहीं। 'सरकारी ठूंठ' और 'चन्दनपुर' शीर्षक रचनाएँ कथातत्व से मुक्त मनोरंजक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विवरण मात्र हैं, जो उपन्यास के अंश तो हो सकते हैं, पर उन्हें स्वतंत्र कहानी कहना कठिन है। कहानीकार ने चंदनपुर गाँव को केन्द्र बनाकर कम्यूनिस्ट किसनू, कामरेड जगन्नाथ, वैद्यराज, परब्रह्म रावु, शिवनाथ शंभु, दरोगा दीनबंधु, शंकर राज, गँगू, रघुनाथ, मनमोहन मिस्टिक, अध्यापक आनंद, प्रोफेसर कामाक्षीरमण, सज्जन शर्मा जैसे जीवन्त पात्रों का सृजन किया है।

कम्यूनिस्ट किसनू की 'तरुण भावुकता' की शिकार 'लक्ष्मी' की शिकायत पर कामरेड जगन्नाथ किसनू के पक्ष में अपना फैसला देते हैं क्योंकि 'उनकी कृपा से किसनू की अविवाहित बहन को संतान-लाभ हुआ था। पिता के प्रभाव से आई. ए. एस. बने परब्रह्म रावु उठकर भोजन करके दफ्तर के अपने कमरे में पूरे डेढ़ घण्टे सोने के बाद जागते हैं तो विस्फारित नेत्रों से बाहर देखने पर उन्हें पता चलता है कि उनकी फाइल सुदूर वृक्ष पर बैठे वृद्ध वानर देवता के कब्जे में है। शिवनाथ शंभु ने तीन पत्नियों को जहर देकर मारने के बाद चौथी शादी की है और बारी-बारी से अपनी लड़कियों को तथा कथित 'धर्मशाला वाले चाचा' के पास भेजकर रुपये प्राप्त करते हैं। दरोगा दीनबंधु 'रिश्वत लेना पाप समझते हैं, हाँ, उपहार के रूप में अगर कोई कुछ देता हो तो उसे स्वीकार करना वे बुरा नहीं समझते।' पति-परित्यक्ता एक चमारिन के कष्टों से द्रवित होकर दरोगा साहब की 'आँखें डबडबा आईं और उन्होंने तीन दिन तक उसे अपने यहाँ आश्रय दिया।'' चंदनपुर के सामाजिक जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए उन्होंने वहाँ की एक लड़की से विवाह किया है और उनका यह दृढ़ निश्चय है कि जब वे चंदनपुर में रहेंगे तब तक इस वैवाहिक बंधन को शिथिल नहीं होने देंगे।' कवि मनमोहन मिस्टिक अपने काव्य-संग्रह के प्रकाशन के विषय में 'मजनू साहब' को लिखे पत्र में सूचित करते हैं कि 'संकलन के सम्बन्ध में आपने जो समस्या उठाई है वह असल में कोई समस्या ही नहीं है, क्योंकि कविताएँ सारी आपको कोदण्डस्वामी के दवाखाने मिल जायेंगी।' इसी पत्र में 'मिस्टिक' साहब अपने वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात सूचित करते हुए लिखते हैं कि 'बचपन से ही मेरे मन में मूंगफलियों के प्रति रागात्मक आकर्षण रहा है। मुझे स्पष्ट याद है जब मैं अबोध बच्चा था तब मेरी माँ सुबह-शाम मुझे बड़े प्यार से मूंगफलियाँ खिलाया करती थी।' वेदान्त के प्राध्यापक कामाक्षीरमण 'फिल्मी दुनिया' के मुखपृष्ठ पर अंकित सौन्दर्य के साकार प्रतीक से बड़े यत्न पूर्वक अपनी आँखें हटाकर झुँझलाते हुए कहते हैं—'शंकर के मायावाद को मैं मानता नहीं हूँ, मान ही नहीं सकता।'

ये झलकियाँ बड़ी सटीक भाषा में श्री शेनाय ने प्रस्तुत की हैं, जिन्हें पढ़कर एक बारगी ऐसा नहीं लगता कि ये किसी अहिन्दी भाषी लेखक द्वारा लिखी गयी हैं। पात्रों के नाम और उनके क्रिया-कलाप इतने स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत हुए हैं कि ऐसा लगता है जैसे भारत का हर गाँव और शहर चन्दनपुर में प्रतिबिम्बित हो उठा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हो। वस्तुतः कवि ने इस संग्रह में यह कहना चाहा है कि चाहे व्यक्ति किसी भी दल से सम्बद्ध हो, किसी भी व्यवसाय में रत हो, प्राध्यापक, प्रशासकीय अधिकारी या कवि हो, पुलिस अधिकारी या बीमा कम्पनी का दलाल हो—मूलतः सब स्वार्थ के पुतले और ढोंगी ही हैं। इनको सुधारने की बात सोचने के बजाय इनको देखकर हँसना, मनोरंजन करना ही लेखक का अभिप्रेत है। शेनाय की ये कहानियाँ हिन्दी कथा-साहित्य—विशेषकर हास्य-व्यंग्य के क्षेत्र में एक नयी धारा के रूप में मान्य की जानी चाहिए।

'हार की जीत' : डॉ. एन. चंद्रशेखरन नायर—हार की जीत' कहानी-संग्रह 1964 में प्रकाशित हुआ। डॉ. नायर बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार हैं। उनकी समस्त सृजन-विधाओं में प्रखर राष्ट्रीय चेतना, उदात्त मानवीय एवं कलागत आदर्श प्रतिफलित हुए हैं। 'हार की जीत' में संग्रहीत कहानियाँ डॉ. नायर की अपूर्व कथा-लेखन-क्षमता की परिचायक हैं तथा उनमें भी उनके उदात्त मानवीय एवं कलागत आदर्श अभिव्यक्त हुए हैं। कथ्य तथा शिल्प की दृष्टि से सशक्त ये कहानियाँ डॉ. नायर को श्रेष्ठ हिन्दी कथाकारों की पंक्ति में प्रतिष्ठित करती हैं।

'हार की जीत' आठ उत्कृष्ट कहानियों का संग्रह है। पहली कहानी 'बाप का बेटा' प्रगतिशील विचारधारा से प्रेरित कहानी है, जो कला के उच्चादर्श को प्रस्तुत करती है। इस कहानी का सार मलयालम के लब्धप्रतिष्ठ कवि जी. शंकर कुरुप की 'झाड़ूवाली (तूप्पुकारी) शीर्षक कविता की इन पंक्तियों में देखा जा सकता है—

> तेरी भँवों पर दमकते
> स्वेद-बिन्दुओं की आभा के सामने
> फीकी पड़ जाती है आब
> शाही महलों की महिमाओं के हीरक-हारों की।

संभव है, 1944 में रचित इस कविता ने कथाकार नायर को 'बाप का बेटा' की मूल प्रेरणा प्रदान की हो।

'बाप का बेटा' कहानी रमेश नम्पीश और उनके पुत्र कमलेश के मानसिक द्वन्द्व और उनके बीच से उभरते उच्च कलागत मूल्यों की कहानी है। चित्रकार रमेश नम्पीश अपने पुत्र को चित्रकार नहीं बनाना चाहते, अपितु उच्चशिक्षा दिलाने के पक्ष में हैं। पर कमलेश ने चित्र-रचना के गहन संस्कार पिता से प्राप्त किये हैं, अतः वह विद्यालय में गणित के घण्टे में अपनी कॉपी में तरह-तरह की चित्रकारी किया करता है। इसी क्रम में उसका ध्यान एक 'झाड़ूवाली' के 'आबनूसी' व्यक्तित्व पर केन्द्रित हो जाता है और वह उसका पूर्णकाय चित्र आँकता है। इधर रमेश नम्पीश ने अपना एक आकांक्षित चित्र 'कच देवयानी' पूरे श्रम के साथ तैयार किया है। किन्तु पुत्र के हाथ से अकस्मात् उसकी नोट बुक लेकर जब वे 'झाड़ूवाली का चित्र देखते हैं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तो सहसा कह उठते हैं—'या खुदा ! मेरी देवयानी को क्या हो गया ? फीकी-सी !' इसके साथ ही रमेश नम्पीश का सारा मानसिक द्वन्द्व निःशेष हो जाता है और वह यंत्रवत् अपने हाथ की तूलिका अपने पुत्र की ओर बढ़ा देते हैं। प्रतिभा के दैवी संस्कारों की सशक्तता, मानव के ऊँच-नीच के आडम्बर के प्रति कला की तटस्थता और मानव-ऐक्य का उद्घोष कहानी का अभिप्रेत है, जिसे कहानीकार ने कुशलता से अभिव्यंजित किया है।

'हार की जीत' भारतीय नारी के निष्कलुष, स्फटिक-निर्मल व्यक्तित्व को उजागर करने वाली कहानी है। रानी मायादेवी अपने व्यक्तित्व की गरिमा से अपनी हार को जीत में परिणत कर देती हैं। स्वतंत्रता के बाद छोटे-बड़े राज्यों का भारत राष्ट्र में विलय हुआ, किन्तु कर्णाल का राजा राज्य के साथ-साथ अपने ऐश्वर्य, विलास को छिनते देख व्याकुल हो जाता है और राष्ट्रीयता के प्रति प्रतिहिंसा की भावना से ओतप्रोत हो उठता है। इसी बीच अपनी पत्नी मायादेवी को कवि सुश्री की कविताओं की ओर विशेषतः उन्मुख देखकर उनका मन शंकाग्रस्त हो उठता है और वह अपनी पत्नी से बिना कहे उसे छोड़कर चल देता है। कवि सुश्री के रूप में वह मायादेवी को आमंत्रित कर उसके चरित्र की थाह लेना चाहते हैं, जिसमें रानी मायादेवी की पतिनिष्ठा प्रमाणित होती है और कर्णाल के राजा का सन्देह-जर्जर मन स्वस्थ हो उठता है। 'कुरुक्षेत्र जागता है' नामक नाटक में श्री नायर ने इसी कथानक को अधिक विस्तार से चित्रित किया है, जिसमें कर्णाल के महाराजा की भारत राष्ट्र के प्रति विद्रोह-भावना अधिक प्रखर रूप में चित्रित हुई है। नाटक का अंत भी रानी के बलिदान के साथ होता है। किन्तु इस कहानी में राजनीतिक धरातल उतना महत्वपूर्ण नहीं है तथा नारी के निश्छल व्यक्तित्व को अंकित करना और संदेही कर्णाल-राजा को अभिभूत होते हुए दिखाना ही कहानीकार का उद्देश्य है।

'भवोति अम्मे' नायर जी की एक विलक्षण कृति है। लेखक उसे इन शब्दों में सम्बोधित करता है—'वाह री भवोति अम्मा ! किस धातु की तू बनी है ? तू उस जाति की तो नहीं है जो शिंशपा वृक्ष के नीचे वैदेही की रखवाली किये बैठी थी ? अथवा नाक-कान से हाथ धोए, धूल उड़ाती, बिललाती शूर्पनखों वाली के रुधिर में से उत्पन्न हुई है ?' कर्कशता की जीती-जागती मूर्ति भगवती अम्मा सदैव वाक्बाणों से सबको आहत करती हुई ही दिखाई देती है। अपने बच्चों को गाली देना और मारना-पीटना तो उसका नित्य का क्रम है। पर कथाकार की दृष्टि 'भवोति अम्मा' के इस बाहरी रूप को भेदकर उसके अन्तरंग तक पहुँचती है। प्रेमचंद की कहानी 'कफन' के घीसू और माधव की तरह 'भवोति अम्मा' का यह विकृत रूप समाज की ही देन है। समाज ने उसकी विपन्नता पर कभी तरस नहीं खाया और चार पितृहीन बच्चों की यह माँ निराशा और अभावों में खटती रही। उसकी बाहरी विकृतियाँ उसके भग्न हृदय से ही उद्भूत हैं। उत्तेजना और आवेश के क्षणों में भवोती अम्मा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

साक्षात् राक्षसी चाहे बन जाय, पर उसके अन्तरतम में उसका कोमल नारी-रूप जीवित है, जो अंत में उसके प्रति करुणापूर्ण व्यवहार करने पर मुखर हो उठा है। कुल-मिलाकर यह कहानी दरिद्रता के अभिशाप की ही कहानी है, जिसे भोगती हुई भवोति अम्मा का चित्र नायर जी ने प्रभावशाली ढंग से अंकित किया है।

'काठ के कफन' अपनी करुणा से मर्म को कचोटने वाली कहानी है। अभावों और दुखों में पलता हुआ मात्तन अपनी पत्नी मौली की मृत्यु को तो जैसे-तैसे झेल गया पर जिन काठ के कफनों को बेचकर वह अपनी आजीविका उपार्जित करता था, उसी में अपनी प्यारी बेटी मरियम को बन्द करके ले जाते समय उसे मृत्यु की बिभीषिका और अकेलेपन का गहरा अहसास हुआ। मृत्यु के पहले की पूर्वस्मृतियों में खोया हुआ वह अपनी पत्नी और पुत्री को याद करता है और मृत्यु के अंधेरे में खो जाता है। कहानी में आद्यन्त मृत्यु के वातावरण को सजीव करने में कथाकार की सफलता निस्सन्दिग्ध है।

'भवोति अम्मे' और 'काठ के कफन' की तरह 'चमार की बेटी' भी निर्धनता के अभिशाप की कहानी है। लेखक की प्रगतिशील विचारधारा को अभिव्यंजित करने वाली यह कहानी इस कटु सत्य को उजागर करती है कि चमार के घर में अंकुरित होने वाली प्रतिभा के भाग्य में पल्लवित-पुष्पित होना नहीं, अपितु निर्धनता के तुषार-पात से अवपतित होना ही लिखा रहता है। 'अजन्ता का कलाकार' शीर्षक कहानी तूलिका के स्पर्श से जीवन्त सौन्दर्य की सृष्टि कर देने वाले बदसूरत कलाकार और सौन्दर्य की अधिष्ठात्री राजलक्ष्मी के मानसिक द्वन्द्व की कहानी है। स्थूल सौन्दर्य को महत्व देने वाली राजलक्ष्मी ने कलाकार का जो रूप अपनी कल्पना में ढाला था, उसके विपरीत एक अस्थिपंजर को देखकर उसका भावसौध भग्नावशेष रह गया और वह 'चम्पे, मेरे सन्दूक से कुछ लेकर इसे दे दे' ही कह सकी। दूसरी ओर, अपनी कल्पना की देवी को साक्षात् देख कलाकार अपनी सुध-बुध खो बैठा, दुनिया का नियम-अनियम भूल बैठा, किन्तु राजलक्ष्मी के समीप जाने पर उसे 'छिः, हट जा' सुनना पड़ा। यह कहानी स्थूल सौन्दर्य-चेतना पर एक व्यंग्य है।

'कान्ह गायब हो गया है' में लेखक ने धर्म के ठेकेदारों की नकाब उतारी है। भगवान के नित्य सान्निध्य में रहने वाला पुजारी चित्रकार को पच्चीस रुपये पारिश्रमिक देकर बही-खाते में पाँच सौ रुपये दर्ज करता है और देवालय के भीतर चित्रकार की पुत्री से दुर्व्यवहार करने का प्रयास करता है। 'कान्ह गायब हो गया है' में मन्दिर-क्षेत्र में होने वाले अनाचार और कृष्ण के गायब हो जाने की कुतूहलमय स्थिति की संगति लेखक ने कुशलता-पूर्वक स्थापित की है।

'बापू का संकेत' गांधीवादी आदर्शों के जीवन में क्रियान्वयन का एक उदाहरण प्रस्तुत करने वाली कहानी है। 'पाप से घृणा करो, पापी से नहीं' का उदार अहिंसा-वादी सिद्धान्त इस कहानी की घटनाओं में रूपायित हुआ है। यह सिद्धान्त प्रयोक्ता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के मन को तो निर्मल-निश्छल बनाता ही है, सामने के व्यक्ति के सुधार की अनंत संभावनाओं के द्वार भी खोल देता है। रामलाल सोनार का हृदय-परिवर्तन 'बापू के संकेत' की प्रामाणिकता का द्योतक है।

कुल-मिलाकर 'हार की जीत' में संकलित कहानियाँ जीवन के मीठे-कड़वे अनेक प्रसंगों को उजागर करती हैं। इन मार्मिक प्रसंगों के अनुकूल प्रभावी भाषा नायर जी के पास है।

'आगे कौन हवाल' : डॉ. वी. गोविन्द शेनाय—'आगे कौन हवाल': डॉ. वी. गोविन्द शेनाय की तेईस व्यंग कहानियों का संकलन है, जो सन् 1971 में प्रकाशित हुआ। इन कहानियों की रूपरेखा, विषय, पात्र और शैली प्रायः पूर्व-विवेचित 'मिस्टिक साहब का कुरता' की कहानियों जैसी ही है। कहानियों का विषय पूर्ववत् बाहर-भीतर की असंगति और आदर्शों का खोखलापन है; पात्रों में अनेक पूर्व-परिचित हैं। वस्तुतः 'आगे कौन हवाल' की कहानियाँ 'मिस्टिक साहब का कुरता' की कहानियों के क्रम में ही लिखी गयी कहानियाँ हैं, जिन्हें सुविधा के कारण दूसरे ग्रंथ में संकलित कर दिया गया है। जीवन में हास्य की अमोघ आवश्यकता के विषय में लेखक का दृष्टिकोण 'दो शब्द' के इन शब्दों में स्पष्ट होता है—"दुनियादारी में समर्थ मेरे कई मित्रों ने मुझे नेक रास्ते पर लाने के लिए ममतापूर्ण शब्दों में उपदेश दिया है कि मैं हास्य कहानियाँ लिखने की अपेक्षा विद्यार्थियों के लिए उपयोगी कुंजियाँ लिखूँ, ताकि एक पन्थ दो काज वाली बात चरितार्थ हो जाय। जिन्दगी यदि छोटी नहीं होती तो मैं उनकी बात अवश्य मान लेता।"

डॉ. शेनाय जीवन में व्याप्त विसंगतियों का अन्वेषण करने तथा ठीक घाव पर उंगली रखने में प्रवीण हैं। अर्थ के अपव्यय को रोकने के उद्देश्य से सरकार द्वारा दर्शन का अध्यापक बन्द करना तथा वृद्ध विधुर दर्शनाचार्य शास्त्री जी का परिवार-नियोजन विभाग में स्थानान्तरण, मुत्तू मास्टर का अवकाश के समय में साइकिल मरम्मत करने वाले अब्दू की मदद करना और प्रतिदान में दोपहर के वक्त खाना और एक दर्जन भैरव छाप बीड़ियाँ पाना, 'फिल्मी दुनिया' के मुखपृष्ठ पर अंकित सद्यःस्नाता मुग्धावती के चित्र को अपलक आँखों से देखते हुए वेदान्त के प्राध्यापक कामाक्षीरमण जी का कहना कि 'शेष सब मिथ्या है, माया है', यौवन के अपराह्न में सिसकती कन्या (चालीस साल की कुमारी मणकी बाई) को अपने भाग्य पर छोड़कर पिता मणकू साहब का अधखिली कलिका-सी कोमल बाला से विवाह, विश्वविद्यालय से वेतन और जनता से चंदा प्राप्त करने वाले आचार्य जी का अपनी रुग्णमाता को पत्र में यह लिखना कि 'आपके दवा-दारु तक का प्रबन्ध इस विपन्नपुत्र से नहीं हो पा रहा है'—इस संग्रह की कहानियों में आये इस प्रकार के प्रसंग जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में दिखाई देने वाली विषमताएँ और विसंगतियाँ हैं, जिन्हें लेखक गोविन्द शेनाय ने प्रसंगानुकूल भाषा में उजागर किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जैसाकि 'मिस्टिक साहब का कुरता' की कहानियों के संदर्भ में कहा गया था, डॉ. गोविन्द शेनाय व्यक्तित्वों की रूपरेखाओं तथा दृश्यों, घटनाओं और वातावरण को मूर्त्त करने की कला में सक्षम हैं। इस संग्रह में भी उनकी इस विशिष्टता का परिचय मिलता है—

"लाल स्याही के धब्बों की भ्रांति उत्पन्न करने वाले पीक-मार्कों से युक्त निस्पंद फाइलें, अधखुला बेडौल पानदान, रद्दी के टोकरे पर उकड़ूं से बैठे 'अरजेण्ट' पर्चे और कुहनियाँ मेज पर टेके तथा हथेलियों से सिर थामकर ऊँघने में व्यस्त चश्माधारी बाँगड़ू साहब कर्मकाण्ड पर सचमुच बड़ा भारी व्यंग्य हैं।" (एस्सर)

"सड़क के नाजुक मोड़ की बगल में दुबककर बैठा वह सरकारी प्राइमरी स्कूल रुग्ण साधु-सा दीन दिखाई देता है। काठ के जर्जर डोलते से खंभों से फूस की छाजन चिपटी हुई है। छाजन के छिद्रों से होकर सूरज की किरणें अंदर प्रविष्ट हो मिट्टी में मिल जाती हैं। चारों ओर बांस की फट्टियों से बनी टट्टियाँ लगी हुई हैं, जिनमें से हवा और धूल का निर्द्वन्द्व आवागमन होता है।" (स्थानान्तरण के पूर्व)

"अस्तगामी सूर्य अंतिम किरणें विश्वविद्यालय की कैण्टीन के प्रांगण में बैठे विवादियों की पिंगल केशराशि को अपरूप आभा प्रदान करती हुई अंधकार में घुल चुकी थीं। इतने में उन्होंने देखा कि वृद्ध चपरासी हाँफता हुआ उनकी ओर भागा आ रहा है और एक वृहदाकार भैंस मृत्यु-सी उसका पीछा कर रही है। भयभीत प्रोफेसरों की लघु-गुरु सभी शंकाओं का एकदम समाधान हो गया।" (शेष सब मिथ्या है, माया है)

"मूर्धा पर बड़ी निर्ममता से कसकर बँधी सन-सी श्वेत शिखा, पिचके गालों के गहरे गड्ढों को घेरकर वीरासन पर बैठी मजबूत हड्डियाँ, चपटे ओठों की आड़ में दुबककर बैठे एकाध पीले दाँत, माथे पर वृहदाकार त्रिपुण्ड और उसके बगल में अतीत के अवैध प्रेम और तरुण संवेदन के रूप में प्राप्त चाकू की चोट का गहरा दाग..." (मंगल कामना)

ये सभी शब्द-चित्र शेनाय जी के भाषा पर अधिकार, अभिव्यक्ति-कौशल और व्यंजना-क्षमता के प्रमाण हैं। उनकी इन व्यंग्य-रचनाओं की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उनका एक-एक शब्द व्यंग्य की पैनी धार से युक्त है और पग-पग पर हास्य-व्यंग्य की वर्षा होती चलती है। अपने इस हास्य-व्यंग्य के लोक में उन्होंने अद्भुत चरित्रों की सृष्टि की है। पूर्व परिचित कामाक्षीरमण और दरोगा दीनबंधु आदि के अतिरिक्त मुत्तू मास्टर, बाबू बाँगड़ू, मणकीबाई, मणकू साहब, पंडित दिगम्बर नाथ और आचार्य जी प्रभृति प्राणी ईश्वर (या कथाकार) की अद्भुत सृजन-क्षमता के उदाहरण हैं। कुल-मिलाकर डॉ. शेनाय की ये लघु व्यंग्य कथायें हिन्दी के व्यंग्य-साहित्य की अक्षय निधि हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'प्रोफेसर और रसोइया' : डॉ. एन. चंद्रशेखरन नायर—मलयालम भाषी हिन्दी कहानी-लेखकों के प्रकाशित कहानी-संकलनों में काल क्रमानुसार 'प्रोफेसर और रसोइया' आधुनिकतम है। सन् 1974 में प्रकाशित, डॉ. एन. चंद्रशेखरन नायर का यह कहानी-संकलन केन्द्रीय शासन द्वारा पुरस्कृत हुआ है। 'हार की जीत' कहानी-संकलन के माध्यम से हिन्दी कहानी-लेखकों में एक विशिष्ट स्थान के अधिकारी डॉ. नायर ने 'प्रोफेसर और रसोइया' के प्रकाशन के द्वारा अपनी जीवंत प्रतिभा का प्रमाण प्रस्तुत किया हैं। 'हार की जीत' की कहानियों ने यह स्पष्ट कर दिया था कि डॉ. नायर की कहानियो में प्रखर राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक चेतना और सबसे बढ़कर मानवीय चेतना अंकित हुई है। प्रस्तुत संग्रह की कहानियाँ इस तथ्य को अधिकाधिक उजागर करती हैं।

'प्रोफेसर और रसोइया' में डॉ. नायर की ग्यारह कहानियाँ संकलित हैं। अंतिम दो कहानियाँ—'बापू का संकेत' और 'चमार की बेटी'—पूर्वसंकलन में प्रकाशित हो चुकी हैं। अतः इस संग्रह में नौ नयी कहानियाँ हैं। ये कहानियाँ प्रायः समाज के दो वर्गों के बीच की विषमता को मुखर करके मानवीय चेतना की प्रतिष्ठा करने वाली हैं। सम्पन्नता और विपन्नता के प्रतीकों को आमने-सामने करके मानवीय करुणा को जागृत करने का प्रयास इन कहानियों में दिखाई देता है। 'प्रोफेसर और रसोइया' शीर्षक कहानी में यह विषमता विशेष रूप से मुखर हुई है। प्रोफेसर सम्पन्न हैं पर रोगों के घर हैं, अतः मन माना नहीं खा सकते और रसोइया रामू विपन्न है, अतः सब कुछ पचा लेने की सामर्थ्य होते हुए भी उसके पास पर्याप्त खाने को ही नहीं है। यह विषमता रामू के इन शब्दों में अभिव्यक्त हुई है—'ओफ, दुनिया में कितनी अच्छी-अच्छी चीजें हैं, पर उन करोड़ों अच्छी चीजों से आपका क्या वास्ता !…हाँ बाबूजी, आप तो जरा मुझे देखिए…जो भी चीज मिले, खा लूंगा। साँप को भी खा जाऊँगा, अगर उल्टे वह हमें काटने न दौड़े। चार दिन कुछ न खाया, बस, तो कुछ न बिगड़ा। देखिए, मैं तीर की तरह दौड़ सकता हूँ, ऊँचे-ऊँचे पेड़ पर चढ़ सकता हूँ।…हमें मांसाहार अथवा फलाहार से क्या मतलब ? हमें तो जीना है…और जब मरना है, तब बस मर ही जाना है।

दोनों वर्गों की अपनी-अपनी विवशताएँ हैं, पर जीवन का वास्तविक रस फिर भी रामू जैसे विपन्न लोग ही भोगते हैं। जीने और मरने का सीधा-सच्चा अर्थ इनके ही पास है—ऐसा मन्तव्य लेखक का प्रतीत होता है। कहानी के अंत में रामू का यह कथन स्वच्छंद जीवन का नुस्खा है—"आप इन मोटे-मोटे ग्रंथों को यहाँ से कहीं रवाना कर दीजिए। हमेशा लिखना और घंटों बैठे पढ़ना बंद कीजिए।…चुस्ती के साथ चलिए, जैसे तन्दुरुस्त आदमी चलता है। इस प्रकार शरीर को सुखाइये मत। अगर कहीं अवसर मिले तो थोड़ा संयम ब्रेक कीजिए…। हँसिए, और जोर से हँसिए।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दूसरी कहानी—'कलाकार रामू'—एक नाई की कहानी है। नाई आदमी को जंगलीपन से बचाकर रूप देता है, अतः लेखक के अनुसार वह भी एक कलाकार है और कलाकार की समाज में जो दुर्गति होती आई है, वही कलाकार रामू की भी होती है। वह बाल काटता है, पर उससे उसे पर्याप्त आजीविका प्राप्त नहीं होती, अतः वह अचार बेचने से लेकर कुलीगीरी तक करता है, पर अंततः उसकी निर्धारित नियति उसे प्राप्त होती है। बड़े लोगों के द्वारा दुत्कारा गया 'कलाकार रामू' अपने ही वर्ग के 'कुलियों' द्वारा धकेला जाकर लोहे के खम्भे से टकराकर सिर फूटने की चरम सीमा तक पहुँचता है।

'कलाकार रामू' कहानी में जीने के लिए हाथ-पैर मारते लोगों में दूसरे को डुबोकर खुद बच निकलने की स्थिति है तो 'यह खेल' शीर्षक कहानी विपन्नों के बीच परस्पर सहानुभूति का एक चित्र उपस्थित करती है। किसी न किसी बात को लेकर रोज जुलूस निकालना राजनैतिक स्वार्थ-पूर्ति के इच्छुक नेताओं का एक खेल है और किराये पर रोज इन जुलूसों में शामिल होना रामू जैसे लोगों का एक व्यवसाय। जुलूस निकलने और इनका चूल्हा जलने में कारण-कार्य सम्बन्ध है। इनकी विवशता का चित्र लेखक ने प्रभावी ढंग से अंकित किया है—"वे, जो इस रास्ते जाते थे, सब पैर थे, शुद्ध पैर थे। उन पैरों की कोई जाति न थी। ··वे पैर थे, शुद्ध मजबूर पैर !··· कभी-कभी वे पैर घिसटते हुए से मालूम होते। फिर भी चलते ही थे।··· उन अस्त व्यस्त स्वरों के बीच में गोली छूटने की भी आवाज होती थी। ओफ ! दो-चार-छः-आठ पैर, उसी प्यारी नंगी राह की पक्की छाती पर गिर पड़ते थे। खून से तर लथपथ तड़पते-रेंगते विकल से पैर !"

इन जुलूसों में शामिल होने वाले दो पैर रामू के भी थे, पर ये पैर अन्ततः उसकी मरती हुई पत्नी और भूखे बच्चों के लिए कुछ व्यवस्था न कर सके। उस राह पर बैठने वाला एक भिखारी रामू की इस विपन्नता में उसका सहायक होता है और परस्पर काम आने की उदार मानवीय वृत्ति का परिचय देता है।

'बेचारा नकसल' जीवन की विषमता को अत्यंत मार्मिकता से उभारने वाली कहानी है। तरकारी और अण्डे बेचने वाली चीरु का पति और फूल-सी लड़की मीनू का पिता अपनी शारीरिक कुरूपता और भयानकता के कारण (जिसका बहुत कुछ कारण वस्तुतः उसकी गरीबी है) 'नकसल' दिखाई देता है। सोलह साल के वीरो का पिता अपनी इस शंका को पुलिस-कमिश्नर को सूचित करने तक को प्रस्तुत हो जाता है। कहानी अपनी चरम सीमा पर तब पहुँचती है, जब वह तथा कथित 'नकसल' वीरो को एक गाड़ी के नीचे आने से बचा लेता है और इस प्रक्रिया में अपना पैर तुड़वा लेता है। यह घटना उस समय घटती है, जब वीरो अपने नकसल साथियों के साथ उत्तेजित अवस्था में सड़क पर जा रहा होता है। यह कहानी, इस प्रकार, इस तथ्य को प्रमाणित करती है कि चिराग तले अंधेरा होता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है और ऊपर से भद्दी दिखाई देने वाली राख के भीतर मनुष्यता की आग सुलगती रह सकती है। गरीबी के अभिशाप का करुण चित्र खींचने में यह कहानी अत्यन्त सक्षम है।

इस संग्रह की उक्त चार कहानियाँ अपनी मार्मिक विषय-वस्तु तथा प्रभावी शिल्प के कारण विशिष्ट हैं। शेष कहानियों की मार उतनी तीखी नहीं है। 'अब कलयुग है' में केरल की शस्य श्यामल धरती पर भगवान के अवतरण और धर्म, शिक्षा और राजनीति के क्षेत्र में अधोपतन के दृश्य देखने की कथा है। उसमें छात्र-जीवन के चित्र अत्यंत स्वाभाविक हैं। 'प्रेम बनाम प्रेम' में राधेश और मालिनी के प्रेम का भावुक चित्रण है, किन्तु उसके ऊपर दाम्पत्य-प्रेम की सर्वोपरिता की प्रतिष्ठा की गयी है। 'आपका नारायणीयम्' में एक याचक के जीवन की करुण गाथा चित्रित है। 'अब आप मकान बदलिए' प्रेतगाथा है और इतने सहज ढंग से लिखी गयी है कि इससे लेखक का भूत-प्रेतों में विश्वास व्यक्त होता है 'मकान' कहानी कर्मठ इंजिनियर मधुशील के प्रगतिशील विचारों की कहानी है। उसने सुरेश बाबू के लिए एक से एक सुन्दर मकानों के डिजाइन तैयार किये, अपने लिए आवास की कोई समुचित व्यवस्था नहीं कर सका। व्यवस्था की भी तो एकदम निराली और प्रयोगात्मक। सुरेश बाबू ने प्रसन्न होकर अपनी पुत्री का विवाह मधुशील के साथ कर दिया तो अपनी वधू को भी वह अपने इसी अनोखे आवास में रहने को आमंत्रित करता है। उसका यह अद्भुत आवास है उसकी 'वैन', जिसमें रहते हुए वे जीवन के अनंत चित्रों का अवलोकन कर सकेंगे और तब तक किसी मकान में नहीं रहेंगे, जब तक देश के लाखों-करोड़ों लोग आवास रहित हैं और दुकानों के बरामदों में, पेड़ों की छाया में और सड़क पर सो रहे हैं।

कुल मिलाकर 'प्रोफेसर और रसोइया' की कहानियाँ प्रोफेसर चंद्रशेखरन नायर की अपूर्व कथालेखन-क्षमता की परिचायक हैं। वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से उनकी सशक्तता निस्सन्दिग्ध है। उनके वस्तु-वैशिष्ट्य हेतु 'प्रकाशकीय वक्तव्य' को ये पक्तियाँ उद्धृत करने योग्य हैं—

"एक ओर वे अपने चतुर्दिक में व्याप्त कुण्ठा, भ्रष्टाचार, आडम्बर तथा मूल्य-विघटन को अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाते हैं तो दूसरी ओर सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों के प्रति अपनी आस्था व्यक्त करते हुए आज के मनुष्य के आत्म-विभाजित एवं विघटित व्यक्तित्व को ऐतिहासिक चेतना की अखण्डता से समन्वित भी करते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ आज के जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करके भी जीवन के प्रति निराश नहीं करतीं, आस्थावान् बनाती हैं।"

इस संग्रह की 'प्रोफेसर और रसोइया' तथा 'बेचारा नकसल' और 'हार की जीत' संग्रह की 'बाप का बेटा', 'हार की जीत', 'काठ के कफन' तथा 'भवोति अम्मे' प्रभृति कहानियाँ डॉ. नायर को हिन्दी के श्रेष्ठ कहानी-लेखकों की पंक्ति में प्रकाशित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करने वाली हैं। इन कहानियों का अहिन्दी भाषी-लेखन के रूप में अभिनंदन किये जाने के साथ-साथ सम्पूर्ण हिन्दी-कहानी के संदर्भ में समुचित मूल्यांकन एवं स्थान-निर्धारण अत्यंत आवश्यक है।

अनूदित कहानियाँ—मलयालम-भाषी हिन्दी लेखकों द्वारा मौलिक कहानी-लेखन के अतिरिक्त मलयालम से हिन्दी में अनुवाद भी प्रस्तुत किये गये हैं। स्वातन्त्र्योत्तर युग में भाषाओं के पारस्परिक सम्पर्क और केन्द्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के विकास के साथ-साथ जहाँ अहिन्दी-भाषी हिन्दी-लेखकों की संख्या में वृद्धि हुई, वहां अनुवाद की गति तीव्रतर हुई। 'धर्म-युग', 'सारिका' जैसी लोकप्रिय पत्रिकाओं में श्री पी. जी. वासुदेव, डा. कुट्टन पिल्लै, श्री एस. लक्ष्मण शास्त्री, श्री वी. डी. कृष्णन नंप्यार के द्वारा अनुवाद प्रकाशित किये गये हैं। केरलीय हिन्दी पत्रिकाओं का योग-दान भी इस क्षेत्र में कम नहीं हैं। मलयालम कहानीकारों में श्री तकषी शिवशंकर पिल्लै और श्री एस. के. पोट्टक्काट की कहानियों के अनुवाद अधिक प्रकाशित हुए हैं। कहानी की लोकप्रियता और भारतीय भाषाओं के अधिकाधिक सम्पर्क से अनुवाद की भी निरन्तर प्रगति हो रही है।

कुल मिलाकर केरलीयों ने हिन्दी में मौलिक कहानी-लेखन और अनुवाद के क्षेत्र में अपूर्व योगदान किया है। श्री के. नारायण, डॉ. एन. चंद्रशेखरन नायर और डॉ. गोविन्द शेनाय के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। तथापि डॉ. नायर की कहानियाँ कहानी-विधा का वास्तविक प्रतिनिधित्व करने वाली, वस्तु तत्व में उस जीवन-मूल्यों को आत्मसात् करने वाली तथा सक्षम कहानी-शिल्प का निदर्शन करने वाली हैं। यह विशिष्टता अन्य साहित्यिक विधाओं में भी उनके प्रशंसनीय योगदान को देखते हुए और भी उल्लेखनीय हो जाती है। इन कथाकारों ने जीवन के बहुरंगी चित्र अपनी कहानियों में प्रस्तुत किये हैं। व्यंग्य-रचना के क्षेत्र में तो उनका योगदान हिन्दी को विशेष समृद्धि प्रदान करने वाला है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निबंध-साहित्य

निबंध साहित्य की एक अतिप्रधान विधा है और इसमें लेखक के व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट झलकती है। निबंध में किसी नये तत्व की खोज करने का प्रयास नहीं है। बुद्धिगत भावना को सौन्दर्य के माध्यम से प्रकट करना ही निबंध का लक्ष्य है। इसमें बुद्धि और भावना का मेल-भाव है। निबंध का अर्थ है 'कसा हुआ बंध।' इससे निबंध के लघु आकार तथा विचार और भाव का व्यवस्थित रूप भी प्रकट होता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी ने यहाँ तक कहा कि निबंध गद्य की कसौटी है। और भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास इसी में सब से अधिक संभव होता है। निबंध केलिए यह अपरिहार्य तत्व है कि उसमें विचारों की एकान्विति हो, विचार माला की कणियों के समान एक से एक गुंथा हुआ हो। विचारों में विश्रृंखलता निबंध को असफल बना देती है। अतः सब कोई निबंधकार नहीं बन सकता। अच्छे निबंधकार में चिन्तनशक्ति, पैनी दृष्टि एवं भाषा पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए।

केरल इस बात का गर्व कर सकता है कि यहाँ कई निबंधकार सामने आ रहे हैं। कुछ लेखकों ने परीक्षोपयोगी निबंध-संग्रह तैयार किये हैं। ऐसे निबंध-संग्रहों में डॉ. विश्वनाथ अय्यर का 'निबंधोपहार', डॉ. चन्द्रशेखरन नायर का 'निबंध मंजूषा', डॉ. कुट्टन पिल्लै का 'विद्यार्थी हिन्दी निबंध' आदि की परिगणना की जा सकती है। किन्तु विद्यार्थियों को दृष्टि में रखकर लिखे गये इन निबंध-संग्रहों पर हम यहाँ विचार नहीं करेंगे, उनको आगे एक अन्य अध्याय में स्थान देंगे। यहाँ हम केवल उन्हीं निबंधों पर विचार करेंगे जो शुद्ध साहित्यिक निबंध हैं।

केरल के लेखकों का यह सौभाग्य रहा कि वे एक साथ दो भाषाओं के विद्वान हैं। उन्होंने मलयालम भाषा और साहित्य तथा हिन्दी भाषा और साहित्य दोनों पर समान रूप से लिखा है। केरल के हिन्दी निबंधकारों की एक लंबी सूची बनायी जा सकती है और उनमें से इनेगिने लेखकों ने अखिल भारतीय प्रशस्ति भी प्राप्त की है।

प्रस्तुत अध्याय में सर्वप्रथम मलयालम भाषी हिन्दी-निबंध-लेखकों पर विचार किया जाएगा। उनकी भी दो कोटियाँ बनायी जा सकती हैं—प्रथम कोटि में वे निबंध-लेखक आते हैं जो अखिल भारतीय स्तर पर ख्यातिप्राप्त हैं। तथा दूसरे वे लेखक-बंधु है जो स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में लिखा करते हैं। उत्तर और दक्षिण भारत की उच्चस्तरीय पत्रिकाओं में लेखन-कार्य करके हिन्दी जगत् में सुपरिचित केरल के निबंध-लेखकों में प्रोफेसर चन्द्रहासन, डॉ. के. भास्करन नायर, डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, डॉ. विश्वनाथ अय्यर, डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, डॉ. वेल्लायणि अर्जुनन् आनंद शंकर माधवन्, पी. नारायण और पी. आर. भास्करन नायर प्रमुख हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रो. चन्द्रहासन—केरल के हिन्दी प्रचार एवं प्रसार में सक्रियतापूर्वक कार्य करके प्रोफसर चन्द्रहासन ने बड़ा यश प्राप्त किया। उनके कई निबंध उत्तर भारत के स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में स्थान पाते रहे। यही नहीं, हिन्दी साहित्य कोष के लेखकों में से एक होने का गौरव भी उन्हें प्राप्त है। मलयालम भाषा और साहित्य के उद्भव-विकास पर उनका विद्वत्तापूर्ण लेख अत्यन्त संक्षिप्त होता हुआ भी तथ्यात्मक है।

डॉ. भास्करन नायर—स्वर्गीय डॉ. भास्करन नायर दक्षिण के सर्वप्रथम डाक्टरेट उपाधिधारी थे। मलयालम भाषा और उसकी विशिष्टता को दर्शाने वाले उनके कई निबंध पत्रिकाओं में स्थान पा चुके थे। 'केरल के संत' शीर्षक से एक पुस्तक की वे तैयारी कर रहे थे। लेकिन असामयिक मृत्यु के कारण उनका स्वप्न पूर्ण नहीं हो सका। केरल के अधिकतर हिन्दी प्राध्यापक एवं लेखक उनके शिष्य हैं।

डॉ. चन्द्रशेखरन् नायर—हिन्दी निबंध-लेखकों में डॉ. चन्द्रशेखरन नायर हिन्दी जगत् के लिए सुपरिचित व्यक्ति हैं। उत्तर भारत से प्रकाशित अनेक पत्रिकाओं तथा संग्रह-ग्रंथों में उनकी रचनाएं समादरणीय स्थान पा सकी हैं। तुलसी-स्मृति ग्रंथ, स्मृतियाने संस्कृति, सूर पंचशती स्मारक ग्रंथ, संग्रहात्मक 'निराला' ग्रंथ, महादेवी वर्मा अभिनन्दन ग्रंथ, आदि कितने ही ग्रंथों में उनके लेख स्थान पा चुके हैं। सूर साहित्य और मलयालम कृष्ण काव्य, निराला की प्रतीक-योजना आदि लेख विद्वत्तापूर्ण हैं। डॉ. नायर की सब से बड़ी विशेषता है कि वे हिन्दी तथा मलयालम में समान योग्यतापूर्वक लेखन-कार्य करते आ रहे हैं। सूर साहित्य और मलयालम कृष्णकाव्य में लेखक की तुलनात्मक पैनी दृष्टि आश्चर्यजनक है। वेदांतपरक अन्तर्दृष्टि एवं योगात्मक साधना पर लेखक की अभिरमता प्रस्तुत लेख में लक्षित होती है। 'मानस का कथा-शिल्प' संज्ञक लेख में डॉ. नायर ने विश्व-साहित्य की अन्यतम रचना के रूप में मानस का पुनर्मूल्यांकन किया है। भविष्य के अनेक युगों के अन्तराल में भी उसकी समादरणीयता लेखक ने संभावित की है। 'निराला की प्रतीक योजना' में प्रतीक की व्याख्या करते हुए निराला-काव्य में प्रयुक्त प्रतीकों की मौलिक विशेषताओं की झाँकी प्रस्तुत की गयी है। डॉ. नायर ने हिन्दी तथा मलयालम की विभिन्न विधाओं पर लेखनी चलायी है और वह भी आधिकारिक ढंग से। युग प्रभात, भारतीय साहित्य, महादेवी वर्मा अभिनंदन ग्रंथ, ज्ञानपीठ पत्रिका, माध्यम (केरल विशेषांक), विश्व-ज्योति, राष्ट्र भाषा सन्देश, राष्ट्र-भारती, लहर, वातायन, कात्यायनी, वासन्ती, रसवन्ती, अमर जगत (केरल विशेषांक) आदि में प्रकाशित उनके लेख उनकी अपार विद्वत्ता, निरंतर अध्ययन एवं सशक्त अभिव्यंजना-शैली के द्योतक हैं।

भारतीय साहिय—डॉ. नायर के दो निबंध-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। 'भारतीय साहित्य' में हिन्दी की प्रसिद्ध कृतियों—यशोधरा, रामचरितमानस, शाहजहाँ और गबन पर समीक्षात्मक निबंध हैं। गुप्तजी की 'यशोधरा' काव्यकृति पर लेखक ने अपनी मौलिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उद्भावनाएँ प्रकट की हैं। 'यशोधरा' में भी गुप्तजी के वैष्णव संस्कार के दर्शन किये गये हैं लेखक की मान्यता है। "बुद्धदेव और उनकी धर्मपत्नी की कथा होते हुए भी यशोधरा का आधार ईश्वरीय भक्ति अथवा आस्था पर अवलंबित है।" रामचरित मानस की समीक्षा करते हुए तुलसी के राम, लोक नायक तुलसी, तुलसी का राम-राज्य, मानस का कलापक्ष आदि पर विचार प्रस्तुत किया गया है। तुलसी के राम मानव रूप में भी परब्रह्म हैं। उनका मानव-रूप एवं ब्रह्म-रूप अभिन्न हैं। तुलसी के लोकनायक स्वरूप की व्याख्या करते हुए यह बताया गया है कि कबीर और तुलसी के समन्वयात्मक दृष्टिकोण में भारी अन्तर यह है कि कबीर के खण्डन-मंडन की प्रवृत्ति में उनका समन्वय का अंश निष्प्रभ हो गया है। वास्तव में यही डॉ. नायर की निर्भीक आलोचना-पद्धति है। शाहजहाँ नाटक की शास्त्रीय विवेचना करते हुए उसकी अभिनेयता तथा ऐतिहासिकता पर भी विचार प्रस्तुत है। प्रेमचन्द के 'गबन' को व्यक्तिगत समस्या-प्रधान उपन्यास सिद्ध किया गया है। इस प्रकार पूरी पुस्तक आद्यन्त मौलिक विचारों से उद्भासित है। भाषा एवं अभिव्यंजना की दृष्टि से यह पुस्तक एक सफल एवं सोद्देश्य रचना है। 'प्रकर' जैसी उच्च स्तरीय समीक्षा-पत्रिका में इस पुस्तक की श्लाघा करते हुए समीक्षाएँ निकली हैं। डॉ. विष्णुशरण इन्दु ने 'प्रकर' में इस पुस्तक की समीक्षा करते हुए लिखा है, "निस्संकोच रूप से लेखक की समीक्षात्मक दृष्टि पैनी है, जो सूक्ष्म से सूक्ष्म पक्ष को भी पकड़ने में समर्थ है।" हम भी यही कहेंगे कि लेखक ने एक सोद्देश्य एवं सुचिन्तित कृति हिन्दी साहित्य को प्रदान की है।

भारतीय साहित्य और कलाएँ—डॉ. चन्द्रशेखरन नायर का दूसरा निबंध-संग्रह है 'भारतीय साहित्य और कलाएँ।' इस रचना में भारतीय साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यास, मलयालम काव्य में नये प्रयोग, मलयालम कहानी : एक विहगावलोकन, भारतीय कवि जी. शंकर कुरुप तथा भारत की कलागत उपलब्धियाँ शीर्षक पाँच समीक्षात्मक निबंध संकलित हैं। प्रथम में मलयालम तथा अन्य भारतीय भाषाओं के ऐतिहासिक उपन्यासों में परिलक्षित साधर्म्य एवं समानता का दिग्दर्शन कराया गया है। दूसरे-तीसरे निबंधों में मलयालम काव्य तथा मलयालम कथा-साहित्य पर आधिकारिक एवं गंभीर विवेचन प्रस्तुत है। चतुर्थ तथा पंचम निबंध एक प्रकार से इस संकलन के प्राण हैं। भारतीय ज्ञानपीठ से पुरस्कृत हो भारतीय महा-कवियों की श्रेणी में प्रथम स्थानीय मलयालम के महाकवि जी. शंकर कुरुप के समग्र काव्यों का मंथन एवं अनुशीलन करके उनके काव्य में प्रयुक्त प्रतीकों की साहित्यिक विवक्षा है। अंतिम रचना 'केरल की कलागत उपलब्धियाँ' में केरल के तीन कलात्मक रूपों—चित्रकला, मूर्तिकला तथा वास्तुकला को अपनी समग्र विशिष्टताओं के साथ सचित्र प्रस्तुत किया गया है। यह निबंध लेखक की शोधपरक दृष्टि, समीक्षात्मक मूल्यांकन की क्षमता तो प्रदर्शित करता ही है, साथ ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

साथ लेखक की कलात्मक अभिरुचि का भी विशेष रूप से परिचायक है। लेखक स्वयं एक प्रतिभाशाली चित्रकार भी है और उसके द्वारा प्रस्तुत केरल माता का चित्र अत्यन्त भावपूर्ण एवं अर्थवत् है। भाव एवं भाषा के मणिकांचन संयोग से प्रकाम्य पाँच निबंधों का यह संकलन-ग्रंथ भारत के गण्यमान्य विद्वानों, समीक्षकों तथा चित्रकारों की भूरि-भूरि प्रशंसा का पात्रीभूत हुआ है। वास्तव में डॉ. नायर ने उर्वर कल्पनाशक्ति, अतलस्पर्शी विवेचना-पाटव एवं प्रत्युत्पन्नमति का परिचय दिया है। श्री के. एम. मुंशी, पं. सुमित्रानंदन पंत, डॉ. जगदीश गुप्त, डॉ. जगन्नाथ प्रसाद मिश्र, के. पी. पद्मनाभन् तंपी जैसे विद्वानों की संस्तुति से गौरवान्वित इस कृति की प्रशंसा में कई समीक्षाएँ भारत को स्तरीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। डॉ. जगन्नाथ प्रसाद मिश्र की दृष्टि में "केरल की कलागत उपलब्धियाँ : चित्रकला, मूर्त्तिकला, वास्तुकला आपके कलाप्रेम का परिचायक ही नहीं है, अपितु आप के सूक्ष्म कलाबोध का व्यंजक भी है। संग्रह के निबंध पठनीय एवं मननीय हैं।" डॉ. प्रभाकर माचवे ने मुक्त कंठ से इसकी प्रशंसा की है और यहाँ तक लिखा है—"अहिन्दी भाषियों की हिन्दी सेवा के महायज्ञ में यह ग्रंथ एक उज्ज्वल समिधा है। लेखक स्वयं उत्तम आलोचक और चित्रकार भी हैं, यह इस पुस्तक से जाना जा सकता है।"

भारतीय हिन्दी परिषद्-स्मारिका में प्रकाशित 'केरल की चित्रकला', अमर जगत (केरल विशेषांक) में प्रकाशित 'केरल और केरल' तथा मंडल पत्रिका में प्रकाशित 'अमृत और विष' की समीक्षा भी उल्लेखनीय हैं। 'केरल और केरल' में एक सच्चे देशभक्त एवं जन्मभूमि को 'स्वर्गादपि गरीयसी' मानने वाले एक भावुक के हृदयोद्गार ही सुनायी पड़ते हैं। डॉ. नायर की इसी योग्यता से प्रभावित होकर मथुरा कला-साहित्य-संस्कृति परिषद् ने उन्हें 'साहित्य मार्तण्ड' की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया है। भारत सरकार ने दो बार उत्तम मौलिक रचना के पुरस्कार प्रदान किये और अब निकट भविष्य में ही उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक अभिनंदन ग्रंथ भी प्रकाशित होने जा रहा है।

डा. विश्वनाथ अय्यर—डॉ. विश्वनाथ अय्यर केरल के हिन्दी-निबंधकारों में अपना स्थान रखते हैं। उनका कोई साहित्यिक निबंध-संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ है, किन्तु उत्तर-दक्षिण की कई पत्रिकाओं, स्मारिकाओं तथा निबंध-संकलनों में उनके निबंध स्थान पा चुके हैं। अमर जगत, साहित्य मंडल पत्रिका, साप्ताहिक हिन्दुस्तान आदि में उनके कुछ प्रकीर्ण लेख प्रकाशित हुए हैं। केरल की संस्कृति, केरल के पर्व-त्योहार, केरलीयों की हिन्दी को देन आदि विषयों पर उन्होंने परिचयात्मक निबंध लिखे हैं। साहित्य मंडल पत्रिका के प्रधान संपादक की हैसियत से वे स्वयं लिखते हैं और दूसरों को लिखने की प्रेरणा देते हैं। उनके संपादकत्व में प्रकाशित 'अनुशीलन' का रामकाव्य विशेषांक, जो विभिन्न स्तर के चौदह लेखकों के रामकाव्य संबंधी निबंधों का संग्रह है, अवश्य ही एक स्तुत्य प्रयास है। केरल वर्मा-रामायण पर स्वयं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विश्वनाथ अय्यर का भी एक लेख उसमें सम्मिलित है। उसमें केरल वर्मा रामायण की मुख्य विशेषताओं तथा उसके इतर रामायणों की तुलना में महत्व पर सविस्तार विचार प्रस्तुत है। डॉ. अय्यर के प्रधान संपादकत्व में हाल ही में मलयालय में स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा के पुरस्कर्ता एवं जनवादी कवि कुमारन आशान के जीवन और व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने वाले कुछ लेखों का एक संकलन 'महाकवि कुमारन आशान' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। डॉ. अय्यर मौलिक निबंध-रचना करने की अपेक्षा लेखों के संपादन कार्य में अपनी दक्षता प्रकट करते आ रहे हैं। नवोदित साहित्यकारों को प्रोत्साहन देने का संभवतः उद्देश्य है। डॉ. अय्यर के एकाध लेख अत्यन्त भावपूर्ण एवं सरस हैं। 'अमर जगत' के केरल विशेषांक में प्रकाशित 'सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनी' तथा मण्डल पत्रिका में प्रकाशित 'मेरी रुज बाधा हरो' आदि निबंध उदाहरण स्वरूप लिये जा सकते हैं। 'मलयालम और हिन्दी तुलनात्मक अध्ययन' तुलनात्मक अध्ययन संबंधी डॉ. अय्यर के विचारों को स्पष्ट कर देता है।

डॉ अय्यर वर्षों से लिखते आ रहे हैं। उनकी भाषा में संस्कृत और अरबी-फारसी शब्दों का खुलकर प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं ऐसे प्रयोग कुछ खटकते अवश्य हैं। हिन्दी की स्वाभाविक शैली वे पूर्णतया अपना नहीं सके हैं। भाषा-शैली, वाक्य-गठन आदि पर मलयालम का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै : कैरली वैभव—हिन्दी निबंध के क्षेत्र में अत्यन्त प्रतिभाशाली लेखक हैं डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै। डॉ. पिल्लै वर्षों से लिखते आ रहे हैं और आज भी उनका यह लेखन-कार्य पूर्ण सक्रिय है। डॉ. पिल्लै ने हिन्दी तथा मलयालम साहित्य की नाना विधाओं पर आलोचनात्मक निबंध लिखे हैं और सारे निबंध हिन्दी की निधि हैं। उनके ये समीक्षात्मक निबंध भारत भर की उच्च स्तरीय पत्रिकाओं में प्रकाशित होते आ रहे हैं। केरल भारती, केरल ज्योति, हिमदूत, राष्ट्र सेवक, स्वतंत्र भारत, प्रकर, नवभारत टाइम्स, एकांत, आंध्र प्रदेश, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, अध्येय, अभीक, प्रकाशितमन, अजन्ता, संगम साप्ताहिक, हिन्दी प्रचार समाचार आदि पत्रिकाओं में उनके निबंधों ने स्थान पाया है। मलयालम साहित्य-संपदा को उत्तर भारतीयों केलिए उजागर करने के उद्देश्य से लिखे गये उनके लेख 'चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै, भारत के संतरत्न एषुत्तच्छन्, मलयालम लोकसाहित्य में कृष्णकथा, महाकवि जी. शंकर कुरुप की कविता, जनकवि कुमारन आशान, मलयालम कविता में राष्ट्रीयता' मलयालम कविता में व्यंग्य, केरल का प्राकृतिक सौन्दर्य, मलयालम भाषा केलिए देवनागरी की उपयुक्तता, आदि विद्वत्तापूर्ण एवं गंभीर अध्ययन की उपज हैं। 'चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै' लेख में मलयालम स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा के प्रमुख स्तंभ श्री कृष्ण पिल्लै के काव्य में अभिव्यक्त प्रेम, सौन्दर्य, प्रगतिशीलता, संगीतात्मकता एवं काव्य-शिल्प पर समग्र रूप से प्रकाश डाला गया है। 'भारत के संतरत्न एषुत्तच्छन्' में मलयालम के प्रसिद्ध भक्तोत्तंस महाकवि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एपुत्तच्छन् की मलयालम् को देन, रामायण-परंपरा में उनकी रामायण की श्रेष्ठता पर विचार प्रस्तुत करने के साथ ही उनकी भक्ति को ज्ञानाश्रित सिद्ध किया गया है। अध्यात्म रामायण में अभिव्यक्त दार्शनिक पक्ष पर गंभीर विचार प्रस्तुत है। जी. शंकर कुरुप की कविता का अनुशीलन-विश्लेषण करके पर्याप्त उद्धरणों सहित कवि की राष्ट्रीयता, मानवतावाद, मानव-प्रेम, प्रकृति-प्रेम, तत्वचिन्तन, भाषा एवं शिल्पगत विशेषताओं तथा प्रतीक-योजना में अपूर्व सफलता का रहस्य भी स्पष्ट कर दिया गया है। 'जनकवि कुमारन आशान' लेख में आशानकाव्य में अभिव्यक्त क्रान्ति-भावना के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कवि की प्रेम एवं सौन्दर्य की भावना का उद्घाटन किया गया है। 'आधुनिक मलयालम कविता में राष्ट्रीयता' लेख लेखक के गंभीर अध्ययन का द्योतक है। 'राष्ट्रीयता' शब्द को परिभाषित करते हुए वल्लत्तोल् काव्य से लेकर अद्यतन काव्य तक में अभिव्यक्त राष्ट्रीयता का स्वरूप दर्शाया गया है। 'मलयालम साहित्य में व्यंग्य' तथा 'हास्य-व्यंग्य लेखक के. सुकुमारन' लेखों में मलयालम साहित्य के उषाकाल से लेकर आज तक व्यंग्य के जो रूप प्रस्तुत हैं, उनकी समीक्षा की गयी है तो के. सुकुमारन के व्यंग्य के कई उदाहरण दिखाये गये हैं। मलयालम साहित्य पर चुने हुए लेखों का संग्रह 'कैरली वैभव' के नाम से प्रकाशित हुआ है, जिसमें बारह स्वतंत्र एवं मौलिक उच्च कोटि के निबंध संग्रहीत हैं। ये सारे निबंध मलयालम की साहित्य-संपदा को उजागर करते हैं और लेखक की तटस्थ समीक्षक दृष्टि का भी परिचय देते हैं। मलयालम भाषा एवं साहित्य पर डा. पिल्लै के कई विचारोत्ते जक निबंध आकाशवाणी के हैदराबाद केन्द्र से प्रसारित हो चुके हैं।

सामयिक विषयों पर लिखे गये उनके असंख्य लेख हैं, जिनमें 'हिन्दी का अखिल भारतीय स्वरूप : विस्तार और सीमाएँ' (पुरस्कृत), भारतीय संस्कृति और उसकी आधुनिकता (पुरस्कृत), भारत में भावात्मक एकता (पुरस्कृत), त्रिभाषा सूत्र, दक्षिण में हिन्दी प्रचार कैसे हो ? आदि गंभीर चिन्तन-मनन के प्रतीक हैं। हिन्दी साहित्य पर उनके एक सौ से अधिक लेख प्रकाशित हैं। कामायनी और प्रत्यभिज्ञा दर्शन, हिन्दी के युगप्रवर्तक कवि पंत, कबीर तथा जायसी का रहस्यवाद, आँसू में रहस्यवाद, तुलसी की समन्वय भावना, कामायनी का रूपकत्व, पंत का जीवन-दर्शन, पंत : सौन्दर्य-शिल्पी, भारतीय भक्ति-भावना और सूर, बिहारी सतसई की परंपरा, गुप्त जी के काव्य में लोकमंगल की भावना, पंत का अध्यात्मवाद, आदि दर्जनों लेख विद्वानों की प्रशंसा के पात्रीभूत हुए हैं।

हमारे कलाकार—डॉ. पिल्लै के साहित्यिक समीक्षात्मक निबंधों के दो और संग्रह अब तक प्रकशित हुए हैं। प्रथम 'हमारे कलाकार' में बारह कवियों की काव्य-साधना एवं व्यक्तित्व का निरीक्षण-परीक्षण है। संत कबीर, प्रेममार्गी कवि जायसी, लोकनायक तुलसीदास, सरस गायक महाकवि सूर, प्रेमसाधना की प्रतीक मीरा, महाकवि रहीम, शृंगारी कवि बिहारी, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण, युगनिर्माता कवि प्रसाद,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गीतिविहग-पंत, युगपुरुष निराला, और गीतकार महादेवी, इस संकलन में आये निबंध हैं। लेखक ने प्रत्येक कवि के कवि-व्यक्तित्व को उभारने के साथ ही उनमें से प्रत्येक का स्थान भी निर्धारित किया है।

अध्ययन और अनुसंधान—समीक्षात्मक निबंधों का दूसरा संकलन 'अध्ययन और अनुसंधान' के नाम से प्रकाशित हुआ है। यह बीस सुन्दर समीक्षात्मक निबंधों का संकलन है। संतमत और उसपर बाहरी प्रभाव, कबीर-काव्य की दार्शनिक पृष्ठ-भूमि, मानस में अयोध्याकांड, तुलसी के राम, शुद्धाद्वैत मत और सूर, आधुनिक महाकाव्य, पंत-काव्य में बिम्ब-विधान, पंत-काव्य में मानवतावाद का स्वरूप, पंत-काव्य और वैदिक दर्शन, पंत-काव्य और अरविन्ददर्शन, निराला : प्रेम और सौन्दर्य के कवि, दिनकर : व्यक्तित्व और कृतित्व, वर्माजी : एक कवि, रश्मिरथी में कर्ण, कामायनी और उर्वशी, हिन्दी में गीतिकाव्य की परंपरा, हिन्दी में रहस्यवाद का स्वरूप, हिन्दी काव्य में नारी, हिन्दी कविता में प्रतीक-योजना तथा मीराँ, इस संकलन के प्रसून हैं। इन समस्त निबंधों में लेखक का आलोचक व्यक्तित्व उभरकर सामने आता है। भारतीय दार्शनिक चिन्तन पर लेखक का अध्ययन गहन एवं अतलस्पर्शी है। डॉ. पिल्लै निर्भीक समीक्षक हैं। पूर्वाग्रहों से मुक्त उनकी मौलिक उद्भावनाएँ किसी भी साहित्यमर्मज्ञ को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकती। 'कामायनी और उर्वशी' शीर्षक निबंध उनके निर्भीक समीक्षक स्वरूप का उद्घाटन करता है। कामायनी तथा उर्वशी की तुलना लेखक ने दो आधारों पर उचित समझी है—दोनों का मुख्य प्रतिपाद्य काम है और दोनों काव्यों में प्रतीकात्मकता को महत्व दिया गया है। कामायनी में कवि प्रसाद ने काम के धर्म-अविरुद्ध स्वरूप की विजय-पताका फहरायी है तो लेखक ने अकाट्य प्रमाणों तथा तर्कों द्वारा यह सिद्ध करके दिखाया है कि 'उर्वशी' का कथाकथित 'कामाध्यात्म' वासना से पंकिल है, उसका पुरुरवा बीच में जैवधरातल से ऊपर उठने का प्रयत्न करते हुए भी रह-रहकर पाँव फिसलकर उसी कलुषित कीचड़ में गिर पड़ता है। 'उर्वशी' का प्रेम परकीया प्रेम है, वासनात्मक है, एक प्रकार की वेश्यावृत्ति है। उसका निष्कर्ष है 'भारतीय संस्कृति इस कामा-ध्यात्म का समर्थन नहीं कर सकेगी।'

भाषा पर डॉ. पिल्लै का असाधारण अधिकार है। आद्यन्त भाषा की प्रांजलता, प्रवाहमयी एवं सामासिक शैली मुग्ध कर देती है। संस्कृत-निष्ठ उच्च साहित्यिक भाषाशैली पिल्लै जी के निबंधों को गौरव प्रदान करती है।

के. नारारण—विद्वान के. नारायण केरल के पुराने हिन्दी प्रचारक एवं कार्यकर्ता हैं। वे उच्च कोटि के निबंध-लेखक भी हैं। उनके एक सौ से अधिक निबंध भारत की विभिन्न स्तरीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। हिन्दी भाषा तथा उसकी समस्याओं पर उनके अपने निश्चित एवं ठोस विचार हैं। साहित्यिक विषयों पर भी उनके निबंध निकले हैं। भाव-प्रेरित उनके निबंध अपना विशेष स्थान रखते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं। साहित्य और संगीत परस्पराश्रित हैं। नारायण ने कर्णाटक संगीत का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया है, इसलिए संगीत पर उनके कई मौलिक लेख प्रकाशित हुए हैं और ये सारे लेख साहित्य के अध्येताओं केलिए परम उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। नारायण के निबंधों में एक विशेष सौन्दर्य का दर्शन होता है। भाषा पर उन्होंने ऐसा असाधारण अधिकार प्राप्त किया है कि वह उनके विचारों की अनुगामी है। भाव और भाषा का ऐसा अद्भुत सामंजस्य बहुत कम लेखकों में पाया जा सकता है।

आनंद शंकर माधवन्—अहिन्दी भाषी लेखकों में आनंदशंकर माधवन् एक प्रतिभा-संपन्न साहित्यकार हैं। उनके विचारोत्तेजक एवं चिन्तन-प्रधान निबंधों का अनुपम संकलन है 'अनल शलाका'। वे निर्भीक विचारों के निबंधकार हैं। 'अनल शलाका' अपनी सरल सहज शैली के कारण सुन्दर है। उन्होंने 'हिन्दी आन्दोलन' पर भी लिखा है। उसमें उनका मौलिक चिन्तन दर्शनीय है। अभावग्रस्त सामाजिक जीवन से जूझकर स्वयं अपने व्यक्तित्व का निर्माण करनेवाले माधवन् अपने विचारों में प्रगतिवादी और थोड़े अंश में क्रांतिकारी से लगें, तो विस्मय केलिए अवकाश नहीं है। माधवन् साहित्यकार के दायित्व से अवगत हैं और वे अपने चारों ओर के नग्न याथार्थ्य से आँख मूंद कर रह नहीं सकते थे। इसलिए उनके निबंधों में सामाजिक विषमता, कुरूपता, अत्याचार- अन्याय के विरुद्ध क्रांति की भावना प्रबल हो उठी है।

पी. आर. भास्करन नायर—पी. आर. भास्करन नायर का हिन्दी तथा मलयालम साहित्य पर पर्याप्त अधिकार है। मलयालम के प्राचीन साहित्य की वे अच्छी जानकारी रखते हैं। अपने कार्यभार से भले ही वे अधिक नहीं लिख पाते हैं, तो भी इतना तो मानना ही पड़ेगा कि उन्होंने थोड़ा ही सही, जो लिखा पूरे अधिकार के साथ लिखा है। 'दक्षिण में रामकथा' पुस्तक में संकलित उनका निबंध 'केरल की रामायण-परंपरा' तथा ऐसे अन्य प्रकीर्ण लेख तथा आकाशवाणी के मद्रास केन्द्र से प्रसारित मलयालम तथा हिन्दी साहित्य पर उनके निबंध उनकी विषय की पकड़ के बोधक हैं। नायर जी की भाषा सरल, सहज एवं मुहावरेदार है।

मलयालम भाषी उपर्युक्त हिन्दी निबंधकारों के बाद हमारी दृष्टि उन निबंध-लेखकों पर पड़ती है, जो स्थानीय पत्रिकाओं में बहुधा लिखा करते हैं। साहित्य मंडल पत्रिका, हिन्दी प्रचार समाचार, केरल ज्योति, केरल भारती जैसी पत्रिकाओं ने इन नवोदित लेखकों की सृजनात्मक प्रतिभा को उभार कर दिखाने के प्रयत्न में प्रशंसनीय कार्य किया है। पी. के. कुञ्ञिरामन्, पी. कृष्णन, के. जे. जोसफ, डॉ. एन. आर. इलेडम्, डॉ. वेल्लायणि अर्जुनन्, वी. रवीन्द्रन्, डी. राधाकृष्ण पिल्लै, एस. सदा-शिवन नायर, डा. रामन नायर, डा. के. जी. प्रभाकरन, एस. रामकृष्णन नायर, वी. के. हरिहरन उण्णित्तान, प्रोफेसर लक्ष्मिक्कुट्टिअम्मा, रविवर्मा, के. जे. जोण, राज-कुमारन्, डा. के. आर. शशिधरन पिल्लै, एम. के. रवीन्द्रन्, डा. फिलिप, वी. कृष्ण-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुमारी, आदि दर्जनों निबंध-लेखक अपनी रचनाओं द्वारा साहित्य में अपना नाम उजागर करने केलिए प्रयत्नशील हैं।

डॉ. पी. के. कुञ्ञिरामन—डा. पी. के. कुञ्ञिरामन के मलयालम साहित्य पर कई लेख युगप्रभात, केरल भारती, हिन्दी प्रचार समाचार आदि में प्रकाशित हुए हैं। मलयालम की उत्पत्ति, श्रीमती बालामणि अम्मा, रचनात्मक कार्यक्रम : कल और आज, मलयालम के महाकाव्य, मलयालम की शोकगीतियाँ, आधुनिक मलयालम साहित्य का विकास, मलयालम का नवोत्थान काल, मलयालम कविता में राष्ट्रीयता, मलयालम तथा हिन्दी व्याकरण में साम्य और वैषम्य, मलयालम के महाकवि कुमारन आशान, केरल का जनकवि इडश्शेरी आदि उनके प्रकाशित लेख हैं। मलयालम साहित्य पर लिखे गये ये सारे निबंध उनके अध्ययन एवं पैनी दृष्टि के द्योतक हैं। भाषा मुहावरेदार एवं प्रवाह युक्त है।

पी. कृष्णन—पी. कृष्णन इधर कुछ दिनों से साहित्य मण्डल पत्रिका तथा हिन्दी प्रचार समाचार में लिखते आ रहे हैं। चन्द्रगुप्त नाटक का समीक्षात्मक परिचय, चन्द्रगुप्त में सुवासिनी, चन्द्रगुप्त नाटक में स्त्री-पात्र, हिन्दी को मलयालम की देन, गत दशक की मलयालम कविता, आधुनिक मलयालम उपन्यास का जनवादी दौर, मलयालम कहानी के विभिन्न मोड़ आदि कुछ निबंध देखने में आये हैं। पी. कृष्णन की दृष्टि परीक्षोपयोगी है, या केवल परिचयात्मक। विषय की गहराई तक पहुंचने की सामर्थ्य और शक्ति उनमें नहीं आयी है। मौलिकता का अभाव खटकता है।

डा. वेल्लायणि अर्जुनन्—डा. वेल्लायणि अर्जुनन् अच्छे भाषाविद हैं और उनकी भाषाशास्त्रीय दृष्टि सराहनीय है। लेकिन उन्होंने बहुत कम लिखा है। संभवतः विश्वकोष के संपादन में लगे रहने के कारण उन्हें लिखने का अवकाश प्राप्त नहीं हो रहा है। अन्यथा उनकी क्षमता पर किसी को संदेह करने की गुंजाइश नहीं है।

डा. के. आर. शशिधरन पिल्लै आदि—तरुण लेखकों में डा. के. आर. शशिधरन पिल्लै भाव एवं भाषा की दृष्टि से एक प्रोज्वल भविष्य की सूचना अभी देने लगे हैं। विषय की पकड़ तथा सशक्त अभिव्यंजना-शैली को देखकर लगता है कि उनके आगे एक उज्ज्वल भविष्य है। प्रगतिशील साहित्य, मलयालम के प्रगतिशील कवि, स्वच्छन्दतावादी काव्य की शिल्पसज्जा जैसे निबंध यह स्पष्ट घोषित कर रहे हैं कि डा. पिल्लै हिन्दी साहित्य में अपना स्थान बना पाएँगे। यही बात वी. के. हरिहरन उण्णित्तान के बारे में भी कही जा सकती है। उनका सद्यःप्रकाशित लेख 'पंत-काव्य के दो चरण' गहरे अध्ययन तथा आलोचनात्मक दृष्टि का परिचायक है। टी. के प्रभाकरन, के. जी. प्रभाकरन, एम. रामकृष्णन नायर, डा. फिलिप, राजकुमारन् आदि आगे आने के प्रयत्न में हैं। टी. के. प्रभाकरन का 'व्रीडा का पहरा' लेख देखने से पता चलता है कि लेखक में मौलिकता का अभाव है। कोई भी विचारशील लेखक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महादेवी और मीरा की तुलना करने का आज साहस नहीं कर सकता। ज्ञान निष्ठा को सुदृढ़ पकड़कर अरूप का संधान करने वाली महादेवी तथा उन्मत्त प्रेम की पुजारिन बन अपने हृदय-पुष्प की गिरिधारी के चरणों तले आरती उतारने वाली सगुणोपासिका मीरा में क्या समता हो सकती है ! डा. के. जी. प्रभाकरन का लेख 'पुण्यभूमि केरल' भावुकता एवं आवेश का द्योतक है। एस. सदाशिवन नायर मलयालम साहित्य की विभूतियों और वैभवों को ऊपर उठाकर दिखाने में आतुर हैं। 'कुंचन और तुंचन' तथा केरल में कथकली का जन्म और विकास पर्याप्त सुन्दर लेख हैं। डा. रामन नायर का 'कवि चंगम्पुषा : मलयालम के गानगन्धर्व', राजकुमारन का 'त्याग पत्र में नव मनोविश्लेषणवाद', एम. रामकृष्णन नायर का 'आर्य-द्रविड सर्वनाम', डा. फिलिप का 'सौन्दर्य : एक विवेचन', डा. इलेडम का 'आधुनिक मलयालम आलोचना', एम. के. रवीन्द्रन का 'समस्या नाटक : स्वरूप विश्लेषण', आदि निबंध हिन्दी-निबंध साहित्य के उज्ज्वल भविष्य का संकेत देते हैं। राजकुमारन की भाषा शैली परिमार्जित है। एम. के रवीन्द्रन को भाषा में मार्जवता लाने की ओर विशेष ध्यान देना होगा।

रविवर्मा, लक्ष्मीकुट्टि अम्मा और के. जे. जोण तो मंजे हुए लेखक हैं ही। रविवर्मा के लेख 'बौद्धधर्म केरल में' तथा 'केरल के पर्व-त्योहार' परिचयात्मक हैं तो लक्ष्मीकुट्टि अम्मा के लेख 'गुरुवायूर में प्रस्फुटित काव्यसुमन' तथा 'केरल का पुण्यतीर्थ गुरुवायूर' लेखिका के भक्ति-विह्वल हृदय का स्रोत है। के. जे. जोण कई वर्षों से छोटे-मोटे लेख लिखते आ रहे हैं। उनका प्रयास स्तुत्य है, पर गंभीर अध्ययन, नयी सूझ-बूझ का अभाव झलकता है। उनके लेख 'महाकवि कुमारन आशान' तथा 'अंग्रेजी और हिन्दी' आदि बिलकुल सामान्य कोटि के हैं, साहित्यिक गरिमा से युक्त नहीं।

श्रीमती पद्मिनी मेनन—संस्मरणात्मक निबंध लिखने में श्रीमती पद्मिनी मेनन विशेष सफल दिखाई देती हैं। 'यादें' उनके संस्मरणात्मक निबंधों का संग्रह है जिसमें बारह निबंध—केरल की गोद में, कालेज का जीवन, कन्यागुरुकुल में सेवा, गंगटक की यात्रा, तृश्शूर पूरम, आज़ादी की लड़ाई के दिन, नौ साल, कन्याकुमारी, राजस्थान में भ्रमण, दक्षिणेश्वर और बेलूरमठ, कश्मीर-स्वर्ग की एक झाँकी तथा जयबदरी विशाल शीर्षक से प्रस्तुत हैं। इन निबंधों में लेखिका के तिक्त-मधुर जीवन-क्षणों, अनुभवों के सजीव चित्र प्रस्तुत हैं। इनमें यात्रा संबंधी संस्मरण एक ओर प्राप्त होते हैं तो अन्य निबंध वैयक्तिक जीवन के अनुभवों से ओत-प्रोत होने के साथ ही साथ केरलीय समाज एवं नायर-परिवार की संस्कृति, वेष-भूषा, आचार-व्यवहार तथा रहन-सहन का भी यथार्थ लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हैं। इन वैयक्तिक निबंधों की सबसे बड़ी विशेषता उनमें अभिव्यक्त सच्चाई में है। लेखिका में कहीं दुराव की भावना नहीं है। उन्होंने अपने सही एवं वास्तविक, अनुभवों, अनुभूतियों, आशा-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निराशा को वाणी दी है। कई स्थलों पर कई घटनाएँ एवं अनुभव मार्मिक हैं और करुणा-प्लावित भी। लेखिका का भाषा पर पूरा अधिकार है। सरल एवं सीधी शैली उसकी विशेषता है। हाँ, भाषा में हिन्दुस्तानी शैली का पुट बड़ी मात्रा में मिलता है। उसका अरबी-फारसी के शब्दों से कोई परहेज नहीं है। ऐसे शब्दों का खुलकर प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक पर लेखिका को केन्द्र सरकार का पुरस्कार प्राप्त हुआ है। केरलीय जन-जीवन की एक झाँकी प्रस्तुत करने में यह पुस्तक पर्याप्त सहायक सिद्ध होगी, इसमें कोई संदेह नहीं है।

डी. राधाकृष्ण पिल्लै—डी. राधाकृष्ण पिल्लै हिन्दी के अच्छे निबंध-लेखक हैं। उनकी लेखनी मलयालम साहित्य तथा साहित्यकारों पर चलती आ रही है। केरल ज्योति, युग-प्रभात जैसी पत्रिकाओं में उनके कई निबंध प्रकाशित हुए हैं। राधाकृष्ण पिल्लै की भाषा साहित्यिक वैभव से युक्त एवं भावाभिव्यक्ति में अत्यन्त सक्षम है।

के. जे. जोसफ—इस प्रसंग में के. जे. जोसफ के निबंध-संकलन 'कैरली साहित्य और भारतीय उपन्यास' का भी उल्लेख होना चाहिए। इसमें बारह निबंध संकलित हैं—द्राविड भाषाएँ—देशभेद उत्पत्ति और विकास, केरलोत्पत्ति-परिस्थितियाँ, संस्कृति और जीवन, मलयालम गद्य-रूप, सौन्दर्य तथा साहित्य, मलयालम उपन्यास साहित्य, आधुनिक उपन्यास—रूप और वैचित्र्य, आधुनिक उपन्यास—समस्याएँ और समाधान, हिन्दी मलयालम उपन्यास का आरंभ और विकास, भारतीय उपन्यास—बंगाली, हिन्दी और मलयालम के विशेष अध्ययन सहित, उपन्यासकार और पात्र-सृष्टि, अस्तित्ववाद—मूल्य और अनुभव साहित्य में, फ्रायड-युग का मनोविज्ञान और आधुनिक उपन्यास और हिन्दी उपन्यास—विषय के विशेष संदर्भ में। संकलन में समाहित निबंधों के शीर्षकों से ही यह अनुमान होगा कि लेखक ने मलयालय तथा हिन्दी के उपन्यास-साहित्य के रूप, विधाएँ, उनपर परिस्थितियों का प्रभाव आदि पर एक विहंगम दृष्टि डाली है। निबंधों का लघु रूप ही यह स्पष्ट घोषित करेगा कि लेखक ने गहराई से किसी का विवेचन नहीं किया, केवल परिचय मात्र देकर संतृप्त हुआ है। यह एक दृष्टि से अच्छा ही हुआ क्योंकि लेखक के पास भावाभिव्यक्ति के अनुयोज्य भाषा-सौष्ठव का अभाव है। वाक्य-गठन में शिथिलता, व्याकरणिक अशुद्धियाँ, शब्द-प्रयोगों में मलयालीपन आद्यन्त दिखाई पड़ता है। एक-दो उदाहरण मात्र यहाँ प्रस्तुत किये जाएँगे—

(1) ये ग्राम तो छोटे विभाग—'कॅरा' में विभक्त हुए और उसमें पंचायत भी नियुक्त की गयी थी। वैसे जनता, जनता केलिए शासन करने लगे। (पृ. 12)

(2) ये तालियातिरी नामक शासक जो चुने जाते थे उन्हें तीन-वर्ष के लिये शासन करने की व्यवस्था थी। आखिर इस व्यवस्था शिथिल पड़ गयी। शासक अपने अधिकार के घमंडी बन गये। उपरोक्त केरल के चारों कषकों के शासकों में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

फूट पैदा हुआ। पूंजीपतियाँ और धनी लोग भी इनके पक्ष-विपक्ष में लग गये। (वही पृ. 12)

(3) प्रत्येक शासक, पेरुमाल का शासन काल बारह वर्ष केलिए निश्चित कर लिये गये थे। (पृ. 13)

(4) कहते हैं 36 से अधिक पेरुमाल केरल में शासन करते गये। अंत का जो पेरुमाल था, वे अपने बाल-बच्चे और सगे-संबंधियों को अपना देश केरल विभक्त कर दिया। (वही पृ. 13)

ऐसे एक-दो नहीं, हजारों उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं। मुद्रण की अशुद्धियाँ मात्र नहीं, लेखक का भाषा पर अधिकार परिलक्षित नहीं होता। प्राध्यापक जोसफ की ये अशुद्धियाँ अक्षम्य हैं। ऐसी रचनाएँ प्रस्तुत कर वे हँसी के पात्र-मात्र बन सकेंगे। आश्चर्य इस बात में है कि डा. विश्वनाथ अय्यर और प्रोफसर सी. पी. इलयत ने भूमिका में पुस्तक की प्रशंसा की और लेखक को साधुवाद भी दिया।

इस अध्याय को आगे बढ़ा ले चलने की आवश्यकता नहीं है। केरल के लगभग सभी निबंध-लेखकों की चर्चा की गयी है। उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होगा कि अधिकतर निबंध मलयालम भाषा तथा साहित्य से संबंधित हैं। हिन्दी साहित्य की विधाओं पर अपेक्षाकृत अल्पमात्रा में ही निबंध लिखे गये हैं। कारण संभवतः यह है कि हिन्दीभाषी लोग हिन्दी पर लिखते आ रहे हैं; अतः मलयालम भाषियों में अपने साहित्य को भारतीय मंच पर लाने की उत्सुकता अधिक है। यह लक्ष्य सराहनीय भी है। यह कार्य मलयालम तथा हिन्दी दोनों भाषाओं के जानकार केरलवासी ही कर पाएँगे, हिन्दीभाषी लेखक मलयालम के प्रति अपनी अनभिज्ञता के कारण यह कार्य संभालने में असमर्थ हैं। फिर भी हम यह कामना करते हैं कि मलयालम भाषी लेखक हिन्दी की विधाओं पर भी साधिकार लिखें। एक साथ दो भाषा-साहित्यों पर अधिकार रखने वाले केरल के साहित्यकार हिन्दी भाषी-लेखकों से अधिक गंभीर एवं ठोस सामग्री दे पाएँगे। दो भाषाओं के मर्मज्ञ ये लेखक अधिक व्यापक दृष्टिकोण से विषय-प्रतिपादन कर सकेंगे। हिन्दी तथा मलयालम भाषा पर लिखे गये अब तक के निबंध इस बात की घोषणा करते हैं कि केरल ने बड़े ही सधे हुए उच्चकोटि के निबंधकारों को जन्म दिया है, जिनमें सूझ-बूझ तथा विषय-प्रतिपादन की अद्भुत क्षमता है। इनमें से कई निबंधकार हिन्दी के माने हुए निबंधकारों की कोटि में स्थान पाने के अधिकारी हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखकों को चाहिए कि वे इन निबंध-लेखकों की सेवा का समुचित आदर करें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आलोचना-साहित्य

केरल के हिन्दी-लेखकों ने अन्य विधाओं की तुलना में हिन्दी के आलोचना साहित्य को अधिक उपादेय वस्तु दी है, इसमें कोई संदेह नहीं है। मलयालम भाषा संस्कृत के अत्यन्त निकट है और इस कारण संस्कृत की पुत्री हिन्दी को आत्मसात करने में उन्हें बड़ी सुविधा प्राप्त हुई है। दूसरे, हिन्दी के राजभाषा घोषित करने तथा हिन्दी के पठन-पाठन को अनिवार्य कर देने के कारण हिन्दी में उच्च योग्यता प्राप्त करने की स्पर्धा में कई मलयालम भाषियों ने अनुसंधान का कार्य किया, जिसके फलस्वरूप लगभग चालीस शोध-प्रबंध अब तक प्रस्तुत हो चुके हैं। इस प्रकार इन शोध-प्रबंधों ने मलयालियों की आलोचना-साहित्य को देन की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया।

कहने का तात्पर्य यह है कि मलयालियों का आलोचना-साहित्य दो रूपों में प्राप्त होता है, एक शुद्ध आलोचनात्मक दृष्टिकोण से प्रेरित साहित्य तथा दूसरा उपाधियों केलिए प्रस्तुत शोध-प्रबंध। शोध-प्रबंधों की भी दो श्रेणियाँ निर्धारित की जा सकती हैं—हिन्दी तथा मलयालम का तुलनात्मक अध्ययन और स्वतंत्र हिन्दी विधा पर शोधात्मक अध्ययन। सुविधा की दृष्टि से हम पहले उपाधि-निरपेक्ष आलोचनात्मक ग्रंथों पर विचार करेंगे।

डॉ. भास्करन नायर : मलयालम साहित्य का इतिहास—उपाधि-निरपेक्ष स्वतंत्र आलोचना का नाम लेते ही पहले-पहल हमें डॉ. भास्करन नायर स्मरण आते हैं। उन्होंने मलयालम साहित्य का इतिहास प्रस्तुत किया। लेखक ने मलयालम भाषा के प्रसिद्ध इतिहासकार पी. के. परमेश्वरन नायर के 'मलयालम साहित्य' को आधार रूप में अपनाकर यह ग्रंथ लिखा। यह ग्रंथ अपनी संक्षिप्तता के बावजूद भी पर्याप्त उपयोगी सिद्ध हुई है। मलयालम के आदिकाल से लेकर (मणि-प्रवाल शैली से आरंभ करके) स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा तक के विकास एवं विभिन्न मोड़ों का संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत किया है। मलयालम की संदेशकाव्य-परंपरा, चम्पूकाव्य, कृष्णगाथा आदि का संक्षिप्त परिचय देकर आधुनिक काल में लेखक प्रविष्ट हुआ है। एषुत्तच्छन् के काव्य से मलयालम का आधुनिक काल स्वीकार किया गया है। आगे के पृष्ठों में कथकलि साहित्य, कुंचन नंपियार और तुल्लल् साहित्य, मलयालम पत्र-पत्रिकाएं, उपन्यास, नाटक, लघुकथाएँ, आधुनिक कविता आदि पर विचार प्रस्तुत हैं। दो तरुण कवियों की सरणी (इडप्पल्लि राघवन पिल्लै और चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै) पर भी संक्षिप्त आलोचना प्रस्तुत है। डॉ. भास्करन नायर का यह इतिहास आलोचना की अपेक्षा परिचयात्मक है और मलयालम साहित्य की विविध विधाओं पर एक लघु-सर्वेक्षण मात्र लेखक का उद्देश्य रहा। भाषा और शैली आदि की दृष्टि से यह ग्रंथ संतोषजनक है और यह ग्रंथ पुरस्कृत भी हो चुका था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पी. के. केशवन नायर : दक्षिण के हिन्दी प्रचार-आन्दोलन का इतिहास—पी. के. केशवन नायर केरल के प्रख्यात समीक्षक एवं लेखक हैं। उन्होंने गंभीर अध्ययन एवं अनुसंधान के उपरांत अपना विशिष्ट ग्रंथ 'दक्षिण के हिन्दी प्रचार आन्दोलन का समीक्षात्मक इतिहास' प्रस्तुत किया। दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार का प्रारंभ सन् 1917 से होता है और सन् 1918 में गांधीजी के हाथों दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना हुई। तब से लेकर स्वतंत्रता-प्राप्ति तक राष्ट्रीय चेतना एवं भावात्मक एकता की दृष्टि से दक्षिण में हिन्दी प्रचार का जो सशक्त आन्दोलन चला, उसकी गतिविधियों, विभिन्न कार्यक्रमों का आलोचनात्मक यह अध्ययन अत्यन्त प्रामाणिक है। लेखक स्वयं इस आन्दोलन का प्रबल सेनानी रहा और अपने चालीस वर्ष के लंबे अनुभव ने उसे इस प्रामाणिक ग्रंथ की रचना में प्रभूत सामग्री प्रस्तुत की। तीन प्रकरणों में विभक्त इस कृति का पहला प्रकरण दक्षिण में राष्ट्रीय चेतना की लहर, राष्ट्रीय चेतना के सहायक एवं अनिवार्य अंग के रूप में हिन्दी का पठन-पाठन, तथा हिन्दी के प्रति कांग्रेस का रुख आदि का व्याख्यात्मक इतिहास प्रस्तुत करता है। दूसरे प्रकरण में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा का शिलान्यास, पाठ्य क्रम निर्धारण, परीक्षाओं का आयोजन, हिन्दी प्रचार को सुचारु रूप देने केलिए चारों प्रान्तों में प्रान्तीय समितियों की स्थापना आदि विषयों का विवरण है। आगे के प्रकरण में हिन्दी प्रचार की योजनाओं, हिन्दी विरोधी आन्दोलनों, हिन्दी प्रचार का परिचय, प्रान्तीय सभाओं की सेवाओं, गतिविधियों का विस्तृत परिचय प्रस्तुत है। इसी पुस्तक में दक्षिण के हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का लघु परिचय है और हिन्दी के प्रचार-प्रसार की दिशा में लेखक के कुछ सुझाव भी प्रस्तुत हैं। अनवरत अध्यवसाय एवं कर्तव्यनिष्ठा से प्रेरित हो लिखा गया यह ग्रंथ वास्तव में हिन्दी का अनुपम-ग्रंथ है। पी. के. केशवन नायर का भाषा पर असाधारण अधिकार है। उनकी भाषा-शैली को देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि यह एक अहिन्दी-भाषी लेखक की कृति है। कई हिन्दी प्रचार संस्थाओं ने अपने-अपने पाठयक्रमों में निर्धारित कर इस ग्रंथ के महत्व को स्वीकार किया है। दक्षिण के हिन्दी आन्दोलन का सही परिचय प्राप्त करने केलिए इस ग्रंथ का अध्ययन अनुपेक्षणीय है। लेखक हिन्दी-प्रेमियों के साधुवाद का पात्र है।

डॉ. विश्वनाथ अय्यर : हिन्दी के प्राचीन कवि केशवदास—मलयालम भाषी हिन्दी विद्वानों में डॉ. विश्वनाथ अय्यर का प्रमुख स्थान है। उनकी दो आलोचनात्मक कृतियों उल्लेखनीय हैं। प्रथम कृति है 'हिन्दी के प्राचीन कवि केशवदास।' प्रस्तुत कृति में शृंगारकाल के आधारस्तंभ आचार्य केशवदास का परिचय तथा उनके कृतित्व पर आलोचना है।

राष्ट्र भारती को केरल का योगदान—डॉ. अय्यर हिन्दी भाषा के सच्चे प्रेमी हैं और उन्होंने अपने प्रयत्न से कोचीन विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग का इतना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विकास किया है कि आज यह विभाग इतर हिन्दी-विभागों केलिए ईर्ष्या का विषय है। उन्होंने अपने अथक परिश्रम से मलयालम-भाषी प्रत्येक साहित्यकार की हिन्दी कृतियों को वहाँ अपने विभाग में उपलब्ध कराने का स्तुत्य प्रयास किया। मलयालम-भाषियों की हिन्दी को देन पर लिखने का विचार सबसे पहले उनके मन में आया और उसी का परिणत फल है उक्त कृति। केवल 124 पृष्ठों की इस छोटी सी कृति में मलयालम-भाषी हिन्दी-लेखकों और उनकी रचनाओं का संक्षिप्त, किन्तु प्रामाणिक अनुशीलन है। प्रस्तुत पुस्तक दस प्रकरणों में विभक्त है। प्रथम में केरल-तथा हिन्दी के संबंध-स्रोत का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक कारण प्रस्तुत है। द्वितीय तथा तृतीय प्रकरणों में हिन्दी-मलयालम साहित्यों के अनुवाद द्वारा आदान-प्रदान का परिचय है। चतुर्थ प्रकरण में अनुवाद संबंधी समस्याओं, कठिनाइयों का लेखा-जोखा है। पंचम प्रकरण में मलयालम के प्रथम हिन्दी-गीतकार गर्भ श्रीमान् महाराजा स्वातितिरुनाल के जीवनवृत्त एवं हिन्दी-सेवाओं की समीक्षा है। यह बड़े गर्व की बात है कि आज से लगभग डेढ़ सौ वर्ष पहले सुदूर दक्षिण प्रान्त केरल ने एक हिन्दी गीतकार को जन्म दिया। आगे के प्रकरणों में क्रमशः केरल में मौलिक हिन्दी लेखन, केरल में हिन्दी पत्र-कारिता, केरल विश्वविद्यालय और हिन्दी, केरल और हिन्दी-शोध की दिशा पर मंतव्य प्रस्तुत है। अंतिम दशम प्रकरण इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि यहाँ केरलीय हिन्दी-लेखकों की रचनाओं का सोदाहरण परिचय दिया गया है। इसमें केरलीयों के मौलिक एवं अनूदित लगभग चालीस ग्रंथों का संक्षिप्त परिचय है। प्रत्येक पुस्तक में प्रयुक्त भाषा-शैली का भी सोदाहरण परिचय इस ग्रंथ की उपादेयता को बढ़ाता है। यह ग्रंथ एक प्रकार से एक कुंजी का भार संभालता है, जो आगे इस विषय पर शोध करने के जिज्ञासुओं का पथ-प्रदर्शक सिद्ध होगा। यह अपनी अति संक्षिप्तता के कारण मलयालियों के हिन्दी वाङ्मय का संपूर्ण रूप प्रस्तुत नहीं कर पाता। कई गण्यमान्य लेखक एवं उनकी कृतियाँ इसमें स्थान नहीं पा सके। अनुवाद केलिए तीन प्रकरण देकर पुस्तक की अनावश्यक वृद्धि की गयी है। केवल एक प्रकरण में तीनों प्रकरणों की सामग्री समाहित की जा सकती थी। इसमें लेखक की आलोचनात्मक दृष्टि का आभास नहीं मिलता, पूर्वाग्रह के कारण किसी-किसी लेखक की अनावश्यक संस्तुति की गयी है। इतना होते हुए भी इस दिशा में यह केरल का पहला प्रयास है और फलतः कुछ कमियों का होना स्वाभाविक है। अतः इस पुस्तक का महत्व स्वयंसिद्ध है।

डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै : प्रसाद और कामायनी—आलोचना के क्षेत्र में डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै की देन सर्वोपरि है। निरंतर अध्ययन, मौलिक चिन्तन एवं पूर्वाग्रह रहित अनुशीलन ने उन्हें योग्य आलोचक बनाया है। प्रसाद और कामायनी, पंत : छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व, हिन्दी साहित्य का सुगम इतिहास, संत कबीर आदि उनकी स्वतंत्र आलोचनात्मक कृतियाँ हैं। प्रसाद और कामायनी छः अध्यायों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में विभक्त है। प्रथम अध्याय में प्रसाद के काव्य-विकास में कामायनी की महत्ता की स्थापना है। द्वितीय अध्याय में कामायनी की कथावस्तु की ऐतिहासिकता, कथावस्तु के नियोजन में कल्पना की मात्रा आदि पर विचार प्रस्तुत है। तृतीय अध्याय में कामायनी के भावपक्ष पर प्रकाश डालते हुए कथावस्तु, पात्रसृष्टि, रूपकात्मकता, महाकाव्यत्व के पक्ष-विपक्ष में प्रामाणिक युक्तियाँ, कश्मीरी प्रत्यभिज्ञा दर्शन के आलोक में कामायनी के दार्शनिक चिन्तन की मौलिकताएँ, प्रकृति-चित्रण आदि पर सविस्तार लिखा गया है। चतुर्थ अध्याय में कामायनी के कलापक्ष के अन्तर्गत भाषा, चित्रात्मक शैली, प्रतीकयोजना, अलंकार, छन्द-योजना आदि पर समीक्षात्मक अनुशीलन दिया गया है। अंतिम अध्याय में छायावादी साहित्य में कामायनी का स्थान-निर्धारण किया गया है। इस प्रकार यह ग्रंथ जहाँ कामायनी का विशद अध्ययन प्रस्तुत करता है, वहाँ प्रसाद जी के कवि-व्यक्तित्व को भी उभार कर प्रकट करता है। कामायनी पर डा. पिल्लै का मौलिक चिन्तन अवश्य ही स्पृहणीय है। भावानुरूप सशक्त भाषा-शैली इस ग्रंथ की विशेषता है। हिन्दी में डा. पिल्लै की प्रारंभिक रचना होने पर भी इस ग्रंथ से उनके भावी आलोचक-रूप का आभास मिलता है।

पंत : छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व—डा. पिल्लै की दूसरी समीक्षात्मक कृति पंत : छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व बहुप्रशंसित रचना है। इस ग्रंथ पर प्रकाशित समीक्षाएँ ही इस ग्रंथ की श्रेष्ठता की द्योतक हैं। इस ग्रंथ की भूमिका प्रसाद-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान डा. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना ने लिखी है। डा. पिल्लै ने कवि के साथ सहानुभूति रखते हुए शान्त मस्तिष्क से उनके काव्य-वैभव तथा काव्यगत त्रुटियों का सम्यक् विवेचन करते हुए पूर्णतया न्याय एवं वास्तविक स्वरूप का दिग्दर्शन किया है। यह ग्रंथ सात अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में पंत जी के जीवन एवं व्यक्तित्व पर विचार है, द्वितीय में छायावाद कालीन परिस्थितियों तथा छायावाद के उद्भव और विकास पर मन्तव्य; तृतीय में पंत जी की छायावादकालीन रचनाओं का विश्लेषण, चतुर्थ में पंत जी के काव्य में छायावाद के अनुभूतिपक्ष वा भाव-पक्ष का उद्घाटन करते हुए पंत जी का मानववाद, सौन्दर्यबोध, प्रेम-भावना, वेदनानुभूति, प्रकृति-चित्रण आदि; पंचम में कला पक्ष—विविध शैलियाँ, भाषा के रूप, शब्द-भण्डार, लाक्षणिक एवं व्यंजनात्मक प्रयोग, छंद-अलंकार आदि; षष्ठ में प्रसिद्ध छायावादी कवियों की मुख्य प्रवृत्तियों के साथ पंत की तुलना और स्थान-निर्धारण किया गया है। सप्तम अध्याय उपसंहार के रूप में लिखा गया है जिसमें पंत की छायावाद को देन पर विचार प्रस्तुत किया गया है। अंत में संदर्भ-संकेत दिये गये हैं। इस प्रकार यह ग्रंथ पत की छायावादकालीन रचनाओं का सांगोपांग अध्ययन प्रस्तुत करता है। सप्तम अध्याय में निष्कर्ष रूप में कवि की देन का उल्लेख अपने गंभीर अध्ययन के आधार पर प्रायः आठ से अधिक स्वस्थ आधारों पर आधृत होकर प्रस्तुत किया है जिसे ग्रंथ के निकष रूप में अपनाकर मनीषी अपनी जिज्ञासा को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परितोष दे सकते हैं। मलयालम भाषा-भाषी होते हुए भी लेखक ने हिन्दी-भाषा पर अपना असाधारण अधिकार प्रस्तुत किया है। समस्त ग्रंथ का समुचित मूल्यांकन करते हुए डा. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना का यह मन्तव्य कितना सत्य है—"इस लघु ग्रंथ में एक विस्तृत शोधकार्य की रूपरेखा दृष्टिगोचर होती है, जिसकी लघुता में ही महत्ता छिपी हुई है और इसके छोटे से बीज जैसे आकार में ही वट-वृक्ष की सी विस्तृत सृजन-शक्ति समायी हुई है। मुझे आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास भी है कि श्री कुट्टन पिल्लै का यह ग्रंथ कितने ही बृहत् शोध-प्रबंधों से अधिक पंत के अध्येताओं केलिए लाभप्रद, ज्ञानवर्धक और पथ-प्रदर्शक सिद्ध होगा। इससे न केवल पंत जी के काव्य-कौशल का ही ज्ञान पाठकों को होगा, अपितु पंत जी के सौम्य व्यक्तित्व एवं भावुक हृदय का पता भी भली प्रकार चलेगा, जिससे पंत जी की कविताओं का सम्यक् अध्ययन करने में पूर्ण सहायता प्राप्त होगी।" इस एक ग्रंथ को देखकर हम आशा कर सकते हैं कि श्री पिल्लै भविष्य में हिन्दी के समीक्षा-साहित्य को मौलिक योगदान करेंगे। प्रकर, हिन्दी प्रचार समाचार तथा हिन्दी मिलाप में प्रकाशित समीक्षाएँ ही इस ग्रंथ की महत्ता की द्योतक हैं।

हिन्दी साहित्य का सुगम इतिहास—'हिन्दी साहित्य का सुगम इतिहास' डा. कुट्टन पिल्लै की अन्य कृति है। इसमें उनका दृष्टिकोण यह रहा है कि बी. ए. आदि परीक्षाओं में द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी का अध्ययन करने वाले छात्र बहुत ही संक्षेप में हिन्दी-साहित्य की प्रवृत्तियों तथा उसके विभिन्न कालों के प्रमुख कवियों का परिचय प्राप्त कर अपनी ज्ञान-पिपासा शान्त कर लें। साथ ही लेखक ने अन्य हिन्दी प्रेमियों का भी ध्यान रखते हुए अद्यतन उपलब्ध सामग्री का यथास्थान उल्लेख करते हुए पुस्तक को अधिकाधिक उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया है। लेखक ने हर दृष्टि से पुस्तक की रोचकता तथा उपादेयता बढ़ाने की दिशा में पूर्ण अभिरुचि ली है, जो हर दृष्टि से स्तुत्य है। इस अभिनव प्रयास केलिए तथा भाव और शैली की अभिन्न समरसता केलिए निस्संदेह लेखक प्रशंसार्ह है।

संत कबीर—डा. कुट्टन पिल्लै की इसी श्रेणी की अगली पुस्तक है 'संत कबीर' जो मूल एवं आलोचना-भाग—इस प्रकार दो भागों में विभक्त है। सविस्तार पाद-टिप्पणियों के साथ मूल दोहों तथा पदों के संपादन में लेखक की कबीर-साहित्य में गहरी पैठ तथा कबीर-काव्य को विभिन्न परिप्रेक्ष्य में समझने की क्षमता का पता चलता ही है। आलोचना-भाग में कबीर कालीन परिस्थितियों, कबीर-साहित्य पर प्रभावों तथा कबीर की काव्यगत विशेषताओं का सर्वेक्षण बड़ी सावधानी से किया गया है। इस आलोचना-भाग में कबीर-काव्य संबंधी भ्रांतियों का यथासंभव निराकरण करने का प्रयत्न हुआ है। कबीर को सूफी एकेश्वरवादी मानने में अपनी आपत्ति दिखायी है और उन्हें भारतीय अद्वैतवाद के निकट लाने का प्रयास हुआ है। लेखक के अनुसार कबीर के अद्वैतवाद की भी अपनी सीमाएँ हैं। लेखक ने स्पष्ट

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घोषित किया है कि संत कबीर का कोई दार्शनिक मत नहीं है। वे चिन्तक थे, अनुभूतिशील थे और सत्य के द्रष्टा थे। उनके दार्शनिक विचार स्वयं की अनुभूति की उपज हैं। उन्हें किसी संप्रदाय से बांधने का हमारा प्रयास उनके प्रति भारी अन्याय है। भूमिका में हिन्दी के प्रकांड विद्वान डा. श्रीराम शर्मा ने पुस्तक का मूल्यांकन करते हुए ठीक ही लिखा है—"उत्तरार्द्ध में उन कठिन स्थलों को स्पष्ट किया गया है, जिनके हृदयंगम करने से न केवल कबीर को समझा जा सकता है, अपितु उत्तर भारत की सुदीर्घ संत-परंपरा के रहस्य को भी आत्मसात किया जा सकता है।"

डा. कुट्टन पिल्लै की सर्वाधिक प्रशंसित रचना है 'पंत-काव्य में बिम्ब-योजना', जिसकी आलोचना शोधपरक ग्रंथों के प्रसंग में प्रस्तुत की जाएगी। उपर्युक्त विवेचन से ही यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि हिन्दी आलोचना-साहित्य को डा. पिल्लै की देन सभी दृष्टियों से श्लाघ्य है और अप्रतिम भी।

डा. सरलादेवी : हिन्दी साहित्य में नारी-भूमिका—डा सरलादेवी हिन्दी आलोचना साहित्य केलिए उभरता हुआ नया हस्ताक्षर है। उनके सद्यः प्रकाशित आलोचनात्मक ग्रंथ 'हिन्दी साहित्य में नारी : भूमिका' को देखते हुए हम आश्वस्त हो सकते हैं कि लेखिका आगे चलकर हिन्दी को कुछ ठोस सामग्री दे पाएगी। केन्द्र सरकार से पुरस्कृत यह ग्रंथ अपनी संक्षिप्तता एवं लघु आकार के बावजूद भी एक स्तुत्य प्रयास है। यह दो खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड वेदकाल से लेकर हिन्दी के रीतिकाल तक नारी का जो स्वरूप साहित्य में अंकित होता रहा, उसका आकलन करता है। द्वितीय खण्ड में आधुनिक हिन्दी साहित्य में चित्रित नारी के भव्य स्वरूप की चर्चा है। वेदों से उद्धरण प्रस्तुत करते हुए लेखिका ने यह स्पष्ट कर दिया है कि वेदकाल में गृहकार्य में दक्षता प्राप्त करने के साथ-साथ कन्या ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करते हुए शिक्षा भी प्राप्त करती थी। फिर वीर-प्रसू बनकर वैदिक नारी राष्ट्रोत्थान के कार्यों में महत्वपूर्ण योग देती थी। गतिशील नारी-सौन्दर्य के चित्र भी वैदिक साहित्य में मिलते हैं। इतिहासकाल में भी नारी पूज्य पद की अधिकारिणी थी। सतीत्व की रक्षा नारी का सर्वोच्च धर्म था। लेखिका की मान्यता है कि भावी दहेज-प्रथा का बीज रूप रामायणकाल में प्राप्त है। सीता के विवाह के समय जनक ने राम को प्रभूत कन्या-धन दिया था। और यही कालान्तर में घृणित दहेज-प्रथा का ज्वलंत रूप धारण करता है। पुराणों में नारी की महानता एवं श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया गया है। बौद्धकाल के उत्तरार्द्ध में नारी केलिए उसका पावन शरीर अभिशाप सिद्ध हुआ। लेखिका ने अपभ्रंशकाल में कन्याओं के प्रति-उपेक्षा भाव का दर्शन किया है। वीर-गाथा कालीन एवं भक्ति कालीन साहित्य में नारी के विविध रूप दिखाये गये हैं, किन्तु शृंगारकाल में आकर वह नारी केवल भोग्या रह गयी। लेकिन नारी को इस कलुषित कारा से मुक्त कर उसे मानवी प्रतिष्ठित करने का कार्य सुधारवादी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आन्दोलनों ने किया। अतः आधुनिक काल नारी-पुनर्जागरण का समय है। प्रसाद, जैसे कवियों ने उसमें पावनता एवं सात्विकता का दर्शन किया तथा उसे मानवी ही नहीं देवी पद पर आरूढ़ करने का स्तुत्य कार्य किया।

इस प्रकार सरलादेवी ने अपने इस लघुकाय ग्रंथ में नारी की विभिन्न अवस्थाओं, परिस्थितियों का सही मूल्यांकन किया है और आद्यन्त पुस्तक की भाषा हमें मुग्ध कर लेती है। डॉ. सरलादेवी का भाषा पर अच्छा अधिकार है और पाठक को कहीं भी ऊब उठने का अवसर नहीं आता। भाषा में लोच, गति एवं प्रवाह है। भाव और भाषा का मणि-कांचन संयोग सर्वत्र द्रष्टव्य है। हाँ कौशल्या, मातायें, नागमति, नागमती रतनसेन-रत्नसेन जैसी नगण्य अशुद्धियाँ पायी जा सकती हैं। मुद्रण तथा प्रूफ-संशोधन में अधिक सावधानी बरती होती तो इन अशुद्धियों से बच पाती थी। कहीं-कहीं लंबे सामासिक शब्दों का प्रयोग खटकता है, जो हिन्दी की शैली के अनुकूल नहीं है। ये थोड़े-से दोष लेखिका की साहित्यिक विशिष्टताओं के सामने महत्वहीन हैं। वास्तव में यह श्रमसाध्य ग्रंथ महत्वपूर्ण है और लेखिका का दिशा-द्योतक है।

रत्नमयी देवी : कैरली साहित्य-दर्शन—श्रीमती रत्नमयी देवी केरल की प्रबुद्ध हिन्दी लेखिका हैं। उनका आलोचनात्मक तथा परिचयात्मकग्रंथ है 'कैरली साहित्य दर्शन।' इसमें लेखिका ने पन्द्रह अध्यायों में केरलीय साहित्य की नाना विधाओं, केरल की संस्कृति तथा दर्शन का विस्तृत परिचय प्रस्तुत किया है। लेखिका का यह स्पष्ट मंतव्य है कि मल-यालम पहले एक स्वतंत्र भाषा थी, किन्तु कालान्तर में चेरराजवंश के आधिपत्य एवं शासन के परिणाम स्वरूप उस पर तमिल का आतंक छा गया। लेकिन मलयालम सदा तमिल की चेरी बनकर नहीं रही। धीरे-धीरे आर्य ब्राह्मणों के संपर्क से उसने तमिल से अपना नाता त्याग दिया और संस्कृत से अपना गठबंधन स्थापित किया। इस काल में दृश्य-श्रव्य काव्य, चम्पू काव्य तथा नाटक इन तीन साहित्यिक विधाओं का प्रचुर मात्रा में प्रणयन हुआ। इसी समय के पूनम नम्पूतिरि, एषुमंगलम् जैसे साहित्यकारों के योगदान पर विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। आधुनिक मल-यालम के जनक तथा मलयालम में किळिप्पाट्टु (सारिका-गीत) शैली के पुरोधा तथा प्रसिद्ध रामकाव्य 'अध्यात्म रामायण' के रचयिता भक्तकवि तुंचत्तु रामानुजन् एषुत्तच्छन् के व्यक्तित्व एवं कारयित्री प्रतिभा पर एक विस्तृत अध्ययन इस ग्रंथ की सुन्दरता में चार-चाँद लगा देता है। आट्टकथा केरल की अपनी नृत्य संपत्ति है। लेखिका ने आट्टकथा शब्द की व्युत्पत्ति एवं तात्पर्य पर प्रकाश डालते हुए मुख्य आट्ट-कथाओं का परिचय दिया है, जो केरलेतर प्रान्तों के लोगों केलिए इस नृत्यविद्या को समझने में सहायक सिद्ध होगा। तुल्लल् साहित्य के उपज्ञाता एवं हास्यकार कुंचन नंपियार के व्यक्तित्व को भी उभारकर दिखाया गया है। आगे वञ्चिप्पाट्टु (नौका गीत) का परिचय है। उसके बाद केरलपाणिनी के उपनाम से प्रसिद्ध केरलवर्मा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वलिय कोयित्तम्पुरान्, उनके भानजे ए. आर. राजराजवर्मा, गर्भश्रीमान् महाराजा स्वातितिरुनाल् आदि की चर्चा है। आधुनिक कवियों में नालप्पाट्टु नारायण मेनन, उल्लूर एस. परमेश्वर अय्यर, वल्लत्तोल नारायण मेनन, महाकवि कुमारन आशान, कोडुंगल्लूर कुञ्ञिक्कुट्टन तम्पुरान्, चंगम्पुषा कृष्ण पिल्लै, महाकवि जी. शंकर कुरुप आदि की कैरली-सेवा का विस्तृत परिचय एवं मूल्यांकन इस ग्रंथ में हुआ है। कविता के विकास के साथ ही गद्य की विविध शाखाओं के विकास एवं प्रसिद्ध गद्य-लेखकों का भी अनुस्मरण किया गया है। इस प्रकार यह ग्रंथ मलयालम भाषा एवं साहित्य के विकास का दीर्घकालीन इतिहास अपने भीतर समाविष्ट किये हुए है। लेखिका का मलयालम साहित्य पर विशेष अधिकार परिलक्षित होता है। यह आलोचना-ग्रंथ अवश्य ही पठनीय है। इसकी भाषा भी सरस एवं कोमल है। उत्तर-दक्षिण के बीच भावात्मक एकता बनाये रखने में सहायक यह ग्रन्थ एक सफल प्रयास है। हाँ भाषा पर मलयालम का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। कई ऐसे प्रयोग मिलते हैं जो मात्र मलयालम में प्रचलित हैं या हिन्दी में कम प्रचलित हैं। पूर्वापर्य, दुरंत-दुरित, निरूपण (वर्णन), समाधान की बात (आश्वस्त), वाचक (पाठक), पश्चात्तल (पृष्ठभूमि), अमर रूप में (शाश्वत), पारस्य (सामंजस्य), प्रस्थान (संप्रदाय), कालघट्ट (काल या समय), अनुवाचक (पाठक), हृदयालुत्व (सहृदयता) आदि ऐसे कुछ प्रयोग हैं। ऐसे अनेक और भी प्रयोग दिखाये जा सकते हैं।

डा. रामचन्द्रदेव : तुलसी और तुंचन—डा. रामचन्द्रदेव के दो आलोचनात्मक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं। उनमें से पहला ग्रन्थ 'तुलसी और तुंचन' है, जिसमें लेखक ने हिन्दी के भक्तोत्तंस महाकवि तुलसीदास तथा मलयालम के संतकवि तुंचत्तु रामानुजन एषुत्तच्छन् का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। दोनों महाकवियों ने अपनी-अपनी भाषाओं में रामायण लिखी है। तुलसी का रामचरितमानस अगर हिन्दी का श्रेष्ठ ग्रंथ है तो एषुत्तच्छन की अध्यात्म रामायण मलयालम काव्यों में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। लेखक ने इस लघुकाय ग्रंथ में दोनों कवियों की काव्यपटुता, भक्ति-पद्धति, दार्शनिक विचार आदि पर तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते हुए दोनों की समानता एवं भाव-साम्य दिखाने का प्रयत्न किया है। भाषा प्रवाहमयी एवं सरस है। लेखक की समीक्षात्मक दृष्टि प्रशंसनीय है।

मलयालम साहित्य : एक सर्वेक्षण—दूसरे ग्रंथ 'मलयालम साहित्य : एक सर्वेक्षण' में मलयालम की साहित्य-संपदा पर संक्षिप्त, किन्तु आलोचनात्मक दृष्टिकोण से विचार किया गया है। इस छोटे-से ग्रंथ में मलयालम के विकसनशील साहित्य की नानामुखी गतिविधियों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डालने की गुंजाइश नहीं रही। मलयालम साहित्य पर इसके पहले ही कई लेखकों ने लिखा था, जिसमें से रत्नमयी देवी के ग्रंथ का हमने सविस्तार परिचय भी दिया है। ऐसे ग्रंथों के रहते हुए इस छोटी-सी कृति का कोई विशेष महत्व परिलक्षित नहीं होता। फिर भी प्रत्येक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लेखक का अपना अलग दृष्टिकोण है और उसे ध्यान में रखते हुए ही इस ग्रंथ का मूल्यांकन किया जा सकता है।

डा. पी. कृष्णन नायर : मलयालम साहित्य-स्रष्टा—डा. पी. कृष्णन नायर की समीक्षात्मक कृति 'मलयालम साहित्य स्रष्टा' भी उल्लेखनीय है। उक्त ग्रन्थ में मलयालम के प्रमुख साहित्यकारों तथा उनके कृतित्व का आलोचनात्मक परिचय दिया गया है। इसमें मलयालम के प्राचीन एवं आधुनिक शैलीकारों को आलोचना का विषय बनाया गया है।

एस. तंकमणि अम्मा : मलयालम के खंडकाव्य—इस प्रसंग में एस. तंकमणि अम्मा की लघु-कृति 'मलयालम के खण्डकाव्य' का उल्लेख होना आवश्यक है। मलयालम काव्यधारा की एक विद्या—खण्ड-काव्यों पर किया गया यह पहला अध्ययन है और इस दृष्टि से इस ग्रंथ का मूल्य बढ़ जाता है। एस. तंकमणि अम्मा ने मलयालम साहित्य के प्रारंभकाल से आज तक खण्डकाव्यों की जो दीर्घ परंपरा रही है, उसे अपने विवेचन की सीमा में समाविष्ट करने का प्रयास किया है। यह विवेचन सात छोटे-छोटे अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में खण्ड काव्य का स्वरूप निर्धारण किया गया है तो द्वितीय में मलयालम साहित्य की गतिविधियों का अत्यन्त संक्षिप्त परिचय है। तृतीय अध्याय 'प्रारंभिक काव्यरूप' में 'पाट्टु गीत (गान साहित्य) तथा मणिप्रवालम के काव्यरूपों के अन्तर्गत शास्तां पाट्टु, सर्प पाट्टु, मावारतं पाट्टु, रामचरितं, वैशिक तंत्रम्, उण्णुनीलि संदेशम्, कोक संदेशम् आदि ग्रंथों का लघु परिचय दिया गया है। चतुर्थ अध्याय 'नवीन काल के काव्य रूप' के भीतर लोकगीतों, गाथारूपों, किलिपाट्टु (शुकगीत), कथकली, वंचिप्पाट्टु (नौकागीत), तुल्लल आदि काव्य-प्रणालियों पर प्रकाश डाला गया है। पंचम अध्याय 'नये खण्डकाव्यों का उदय' शीर्षक में ए. आर. राजराजवर्मा, के. सी. केशव पिल्लै, एम. राजराजवर्मा, सी. एस. सुब्रह्मण्यम् पोट्टी, तथा वी. सी. बालकृष्ण पणिक्कर की खण्डकाव्य के क्षेत्र में सेवाओं का परिचय देने के अतिरिक्त बृहत्त्रयी कुमारन आशान, वल्लत्तोल एवं उल्लूर कृत खण्डकाव्यों का लेखाजोखा है। यह अध्याय अपेक्षाकृत विस्तारपूर्ण एवं अधिक पठनीय सामग्री प्रस्तुत करने वाला है। षष्ठ अध्याय 'विकास' के अन्तर्गत अधुनातन कवियों के खण्डकाव्यों पर प्रकाश डाला गया है। सप्तम अध्याय 'निष्कर्ष' रूप में प्रस्तुत है। लेखिका ने आवश्यकतानुसार तुलनात्मक ढंग से हिन्दी के कुछ काव्यों का भी नाम निर्देश कर दिया है। इस प्रकार यह कृति आकार में लघु होती हुई भी मलयालम खण्डकाव्यों के स्वरूप-विकास का परिचय प्रदान करती है। लेखिका ने खण्डकाव्य शब्द का प्रयोग पहले-पहल आचार्य विश्वनाथ के 'साहित्य दर्पण' में खोज निकाला है, जबकि खण्डकाव्य का पर्यायवाची शब्द संघात काव्य या लघुकाव्य शब्द पूर्व प्रचलित था। दूसरे, लेखिका ने खण्डकाव्य का स्वरूप इतना लचीला बना दिया कि जी. शंकरकुरुप की लंबी कविता 'तिरुनावा' तथा 'अग्निमुखम्' को भी खण्डकाव्य की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परिधि में लाकर रखा है। मुद्रण संबंधी तथा कुछ व्याकरण संबंधी अशुद्धियाँ भी इस पुस्तक में आ गयी हैं। इन सीमाओं के बावजूद भी लेखिका का प्रयास सार्थक है। उत्तर प्रदेश सरकार ने इस कृति को पुरस्कृत किया है।

जे. रामचन्द्रन नायर : छायावादी काव्य दर्शन—आलोचना के क्षेत्र में जे. रामचन्द्रन नायर की कृति 'छायावादी काव्य-दर्शन' का उल्लेख होना चाहिए। प्रस्तुत कृति प्रास्ताविक पक्ष, काव्य का अंतरंग तत्व, रचना-प्रक्रिया, अभिव्यक्ति पक्ष और ग्रहण-पक्ष—इन शीर्षकों में विभक्त है। इसमें छायावादी काव्य-साहित्य के अंतरंग एवं बहिरंग पक्षों की मौलिकता का उद्‌घाटन किया गया है। अंतरंग पक्ष में काव्यानुभूति के संबंध में बहुधा उठाये जाने वाले प्रश्नों का समाधान ढूंढ़ने का प्रयास है। रचना-प्रक्रिया के अन्तर्गत जीवनानुभूति, काव्यानुभूति, प्रेरणा, कल्पना, प्रतिभा आदि काव्यशास्त्रीय शब्दों पर सविस्तार विचार करके कल्पना को छायावादी काव्य का सर्वस्व सिद्ध किया गया है। अभिव्यक्ति-पक्ष में द्विवेदी युगीन अभिव्यक्ति की तुलना में छायावादी कला-सौन्दर्य की विशिष्टताएँ दर्शायी गयी हैं। ग्रहण पक्ष में छायावादी काव्य के आनंद पक्ष एवं सौन्दर्य पक्ष पर विवेचना हुई है और बताया गया है कि सौन्दर्य और आनंद छायावादी काव्य का सर्वस्व है। इस प्रकार प्रस्तुत लघु कृति में छायावादी काव्य की काव्यमत्ता के विविध स्तरों पर विवेचन हुआ है। हाँ, पुस्तक में लेखक पुनरावृत्ति-दोष तथा अन्तर्विरोधी कथनों से बच नहीं पाया है। छायावाद की विस्तृत पटभूमि को यह लघु कृति समेट नहीं पाती है। फिर भी नायर की यह कृति उनके अध्यवसाय, निष्ठा एवं अध्ययन की द्योतक है। उनकी आलोचक दृष्टि अवश्य ही प्रशंसनीय है। इस कृति के आधार पर हम यह विश्वास कर सकते हैं कि लेखक भविष्य में सुन्दर रचनाएँ हिन्दी को दे सकेगा।

एन. वेंकटेश्वरन : केरल संस्कृति--एन. वेंकटेश्वरन केरल के अनुभवी प्रचारक एवं हिन्दी कार्यकर्ता है। उन्होंने अपनी कृति 'केरल संस्कृति' में केरल की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक परंपराओं का प्रामाणिक किन्तु अत्यन्त संक्षिप्त परिचय दिया है। पुस्तक की शैली रोचक एवं मुहावरेदार है। लेखक पर हिन्दुस्तानी शैली का स्पष्ट प्रभाव है। यह केन्द्र सरकार से पुरस्कृत है।

प्रो. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा : केरल का स्वर्गिक स्थान गुरुवायूर—प्रो. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा की लघु कृति 'केरल का स्वर्गिक स्थान गुरुवायूर' एक सुन्दर रचना है, जिसमें केरल के प्रसिद्ध गुरुवायूर मंदिर की पावनता एवं ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक महत्व पर अत्यन्त भावपूर्ण उद्‌गार पढ़ने को मिलते हैं। किंवदन्ती के अनुसार द्वारकापुरी के प्रलय में जलमग्न होने पर वहाँ की विष्णु-मूर्ति को विदुर ने बचा लिया और विश्वकर्मा की सहायता से उसे गुरुवायूर में प्रतिष्ठित कर दिया। यही गुरुवायूर का मंदिर है, जो अपनी पवित्रता, सात्विकता केलिए भारत भर में प्रख्यात है। वहाँ साक्षात् महाविष्णु गोलोकवास छोड़ विहार करते हैं और भक्तों को आधि-व्याधि से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मुक्त कर देते हैं। कुष्ठ रोग से पीड़ित राजा जनमेजय यहीं आकर शांति पा सके और मलयालम के भक्तोत्तंस महाकवि पून्तानम् यहाँ आकर श्रीकृष्णमय हो गये और पंडिताग्रेसर मेल्पत्तूर नारायण भट्टतिरि अपनी रुज बाधा से विमुक्त हुए। गुरुवायूर की इस महत्ता का प्रतिपादन कर लेखिका ने अपनी धर्मनिष्ठा एवं आस्था का परिचय दिया है।

वी. नारायण कुट्टी : हिन्दी की नयी कविता—वी. नारायण कुट्टी ने 'हिन्दी की नयी कविता' में प्रगतिवादी काव्य-परंपरा के नयी कविता में पर्यवसान, उसकी सांस्कृतिक, सामाजिक एवं साहित्यिक पृष्ठभूमि, भावगत एवं शैलीगत उसकी उपलब्धियाँ—आदि पर विस्तार से लिखा है। नयी कविता के आधार-स्तंभों का शान्त मस्तिष्क से अपग्रथन एवं विश्लेषण इस कृति की विशेषता है। लेखक का दृष्टिकोण तथ्यपरक एवं आलोचनात्मक है। मंजी हुई भाषा-शैली तथा विचारों में तार्किकता इस पुस्तक का महत्व सिद्ध करती है।

ए. अरविन्दाक्षन : महादेवी के रेखाचित्र—ए. अरविन्दाक्षन नवोदित तरुण साहित्यकारों में से एक हैं। उनकी पर्यवेक्षण शक्ति तथा सहज सरल अभिव्यक्ति अवश्य ही प्रशंसनीय है। हिन्दी की छायावादी-रहस्यवादी कवयित्री महादेवीवर्मा के संस्मरणात्मक निबंध-संग्रह 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ' तथा 'शृंखला की कड़ियाँ' पर नवीन दृष्टि से उन्होंने आलोचना प्रस्तुत की है और लेखिका की भाव-तरंगों का यथार्थ रूप प्रस्तुत करने की ओर लेखक सचेत रहा है। लेखक की समीक्षात्मक कृति 'महादेवी के रेखाचित्र', को उत्तर प्रदेश सरकार ने पुरस्कार प्रदान किया है। महादेवी की अंतरंग भावुकता एवं कल्पकता को समझने में सहायक प्रस्तुत रचना विद्यार्थियों, शोधार्थियों केलिए मार्गदर्शक है।

डॉ. वेल्लायणि अर्जुनन्—केरल के कुछ विद्वानों ने भाषाशास्त्र, काव्यशास्त्र जैसे विषयों पर भी अपनी आलोचना प्रस्तुत की है। ऐसे विद्वानों में डॉ. वेल्लायणि अर्जुनन् का नाम बड़े गर्व के साथ लिया जा सकता है। डॉ. अर्जुनन् कई भाषाओं के विद्वान हैं और भाषाशास्त्रीय अध्ययन में उनकी विशेष अभिरुचि है। उनकी रचनाएँ प्रकाशनाधीन हैं। 'हिन्दी तथा मलयालम भाषाओं की एकता का भाषातात्विक अध्ययन' तथा 'हिन्दी एवं मलयालम की लोकोक्तियों का तुलनात्मक अध्ययन' उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं, जो हिन्दी सहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद के प्रकाशनाधीन हैं। बहुभाषा ज्ञान के कारण डा. वेल्लायणि अर्जुनन् ऐसे गुरुतर कार्य सहज ही संपन्न कर सके हैं।

डॉ. रामन नायर : होरेस की काव्यकला—रोमी रीतिकार होरेस का पाश्चात्य आलोचना-साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी 'आर्स पोएतिका' से पता चलता है कि उनके अनुसार काव्य के दो उद्देश्य हैं 'नैतिक शिक्षा' तथा 'आनंद'। उनके काव्यालोचन के तीन प्रमुख अंग हैं—रचनाशिल्प, शब्दों की आत्मा तथा कविता के विभिन्न प्रकार। होरेस की काव्य संबंधी यह मान्यता अपने समय में विशेष आदर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाती रही। 'होरेस की काव्यकला' नामक डॉ. रामन नायर की पुस्तक उपर्युक्त बातों पर प्रकाश डालती है। पाश्चात्य काव्यशास्त्री को हिन्दी के माध्यम से केरलीयों को सुलभ कर देने का डॉ. रामन नायर का यह प्रयास अतिशय महत्वपूर्ण है।

डा. एच. परमेश्वरन : भाषिकी—डा. एच. परमेश्वरन भाषा विज्ञान के अनुभवी प्राध्यापक हैं। वर्षों से भाषा-विज्ञान के अध्यापन के फलस्वरूप उनके मन में उदित विचार ही 'भाषिकी' नामक पुस्तक में प्रस्तुत हैं। भाषिकी का परिचय देते हुए लेखक ने लिखा है, कि भाषा का स्वरूप-विश्लेषण अपने आप में एक मजेदार विषय है और यही वर्णनात्मक भाषाविज्ञान या भाषिकी का प्राण है। भाषा यादृच्छिक वाक् प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा मानव समुदाय परस्पर व्यवहार करता है। अतः यह व्यवस्था ऐसा तत्व है, जिस पर भाषा का महल खड़ा है। इस व्यवस्था को खोज निकालना और इस व्यवस्था का वर्णन करना ही वर्णनात्मक भाषाविज्ञान या भाषिकी का लक्ष्य है। लेखक ने सर्वेक्षण पद्धति, स्वन विज्ञान, रूपिम विज्ञान, रूप स्वनिमी, वाक्य विज्ञान, भाषा वैज्ञानिक प्राक् इतिहास आदि शीर्षकों तथा प्रत्येक के उपशीर्षकों के भीतर वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान को समझाने का स्तुत्य प्रयास किया है। यह वर्णनात्मक भाषाविज्ञान नये युग की देन है और सर्वेक्षण-पद्धति में विषय सामगी-संचयन पर विचार किया गया है। अनुसंधाता के गुण, सूचकों के गुण, पद्धतियों आदि पर संक्षेप में विचार प्रस्तुत हैं। स्वनविज्ञान के अंतर्गत उसके विभाग, स्वानिकी, स्वानिकी का क्षेत्र, स्वन का उत्पादन, स्वन का वर्गीकरण, ध्वनिगुण, अक्षर आदि पर विचार करने के उपरांत स्वानिमी, स्वनिम की परिभाषा, स्वानिकी और स्वानिमी की तुलना, स्वनिम निर्धारण के चार सिद्धान्त आदि का परिचय दिया गया है। फिर उनके अनुसार हिन्दी की स्वनिम व्यवस्था की परीक्षा की गयी है। 'रूपिम विज्ञान' के अन्तर्गत रूपिम का स्वरूप, उसके नियम, रूपिमों का अंकन, उसके प्रकार, कोटियाँ आदि चर्चा के विषय हैं। रूपस्वनिमी तथा वाक्यविज्ञान पर प्रकाश डालने के उपरांत भाषा-वैज्ञानिक प्राक्-इतिहास भी प्रस्तुत किया गया है।

लेखक ने वर्णनात्मक भाषा-विज्ञान की शाखाओं को अध्ययन का विषय न बनाकर भाषिकी के प्रारंभिक सिद्धान्त मात्र प्रस्तुत किये हैं। लेकिन इन सिद्धान्तों के व्यापक अध्ययन के इच्छुक लोगों के उपयोगार्थ सहायक ग्रंथों का नाम निर्देशन भी किया गया है। इस प्रकार यह पुस्तक भाषाविज्ञान के प्रारंभिक छात्रों को दिशा-निर्देशन तो देगी ही, साथ ही अध्यापक वर्ग भी इससे लाभ उठा पाएगा। भाषाविज्ञान जैसे शास्त्रीय विषय पर लेखन-कार्य कोई हँसी-खेल नहीं है। उसके लिए व्यापक अध्ययन, अभिरुचि, क्षमाशीलता एवं निष्ठा की आवश्यकता है। केरल के उत्साही नवयुवक साहित्यकार डॉ. परमेश्वरन का यह कार्य भले ही अपने आप में पूर्ण नहीं, तो भी एक दिशा-निर्देशन तो करता ही है ताकि इस क्षेत्र में गहरा अध्ययन तथा अनुसंधान की इच्छा रखने वाले अपना मार्ग निश्चित कर सकें। अत्यन्त कष्टसाध्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एवं श्रमसाध्य यह कृति एक अहिन्दी भाषी के द्वारा प्रस्तुत है, यह एक बड़ी चीज है और अवश्य ही स्तुत्य है। केन्द्र सरकार तथा उत्तर प्रदेश सरकार ने पुरस्कार देकर इस कृति की गरिमा बढ़ाई है।

एन. पी. कृष्ण पिल्लै : कार निकोबार—इस प्रसंग में एन. पी. कृष्ण पिल्लै की पुस्तक 'कार निकोबार' एक स्तुत्य प्रयास है। आन्दमान-निकोबार द्वीपसमूह आज भी सामान्य जनता केलिए अज्ञात है। लेखक ने सात अध्यायों की अपनी रचना में निकोबार का इतिहास, वहाँ की जनता का सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन, पर्व-त्योहार, आचार-विचार का विस्तृत परिचय देने के साथ ही साथ निकोबारी बोली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन भी प्रस्तुत किया है। इस प्रकार प्रस्तुत रचना निकोबार और वहाँ के जन-जीवन की सुन्दर झाँकी प्रस्तुत करती है। लेखक की भाषा सरस, सरल एवं मुहावरेदार है। यह एक पठनीय कृति है।

टी. एन. विश्वन : कहानी स्वर और स्वरूप—टी. एन. विश्वन की रचना 'कहानी : स्वर और स्वरूप' काव्यशास्त्रीय आलोचना से संबंधित है। लेखक ने कहानी के तत्वों पर श्रेष्ठ कहानीकारों को उदाहृत करते हुए विचार किया है।

ऊपर हमने मलयालम भाषा-भाषी हिन्दी समीक्षकों की प्रमुख रचनाओं का सर्वेक्षण किया है, जिससे यह विदित होता है कि केरल के हिन्दी समीक्षकों ने साहित्य की विभिन्न विधाओं को अपनी आलोचना की परिधि में लाने का स्तुत्य प्रयास किया है, भले ही अधिक कार्य कैरली साहित्य को प्रकाश में लाने की दिशा में हुआ है। हिन्दी काव्य, इतिहास, भाषाविज्ञान, भाषा, भाषाशास्त्र, काव्यशास्त्र जैसे विविध विषयों पर मलयालियों ने अधिकारपूर्वक लिखा है और उनका यह विपुल साहित्य अवश्य ही हिन्दी के भण्डार की अक्षय निधि है। कई ग्रंथ ऐसे हैं, जो हिन्दी भाषी जनता के एतद् विषयों पर लिखी कृतियों से भी उच्चस्तरीय कही जा सकती हैं। वास्तव में हिन्दी आलोचना केलिए केरलीयों का यह योगदान अविस्मरणीय है और इसका समुचित मूल्यांकन होना चाहिए। यह अत्यन्त उपहास्यास्पद है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास-लेखकों का ध्यान इन कृतियो की ओर आकृष्ट नहीं हुआ और फलतः उनका नाम तक इतिहास में स्थान नहीं पा सका।

शोधपरक आलोचना—विभिन्न विश्वविद्यालयों की पी-एच. डी. जैसी उपाधियों केलिए प्रस्तुत एवं स्वीकृत शोध-प्रबंधों की चर्चा हम आगे करेंगे। ये शोधग्रंथ हिन्दी आलोचना के अभिन्न अंग हैं। यहाँ पहले स्वतंत्र हिन्दी विषयों पर प्रस्तुत शोध ग्रंथ पर प्रकाश डाला जाएगा। ऐसे शोधग्रंथ संख्या में सीमित हैं क्योंकि केरल के अधिकतर शोधार्थियों का ध्यान तुलनात्मक अध्ययन की ओर आकृष्ट रहा। पर कुछ ऐसे ग्रंथ भी लिखे हैं जो हिन्दी साहित्य तथा उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों से संबंधित हैं। काव्य-साहित्य को अनुसंधान के रूप में अपनाने वालों में डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै डा. सरला देवी, डा. रामचन्द्र देव, डा. सुनीता एवं डा. फिलिप के नाम उल्लेखनीय हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

डा एन. पी. कुट्टन पिल्लै : पंत-काव्य में बिम्ब-योजना—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै ने हिन्दी के मूर्धन्य कवि सुमित्रानंदन पंत की बिम्ब-योजना को अपने शोध का विषय बनाया। किसी कवि की काव्यशास्त्रीय दृष्टि से किया गया यह पहला शोध-ग्रंथ है। भारत-भर के विख्यात आलोचकों तथा समीक्षात्मक पत्र-पत्रिकाओं से प्रशंसित एवं अनुमोदित तथा उत्तर प्रदेश सरकार से पुरस्कृत यह ग्रंथ बिम्ब की दृष्टि से पंतजी के समग्र काव्य के अनुशीलन का यह प्रथम प्रयास है। आठ अध्यायों में विभक्त इस ग्रंथ के प्रथम अध्याय में काव्य-बिम्ब का सैद्धान्तिक विवेचन है। इस विवेचन में शोधकर्ता की संश्लिष्ट आलोचक दृष्टि का परिचय मिलने के अतिरिक्त यह विश्वास भी जगता है कि वह भविष्य में हिन्दी-आलोचना के क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बना सकेगा। डा. कुट्टन पिल्लै ने भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य-शास्त्रियों की बिम्ब संबंधी मान्यताओं का मंथन एवं अनुशीलन करके अपना जो निष्कर्ष निकाला है, वह अत्यन्त प्रामाणिक एवं विद्वत्तापूर्ण है। यह कम महत्वपूर्ण नहीं कि डा. पिल्लै ने काव्यबिम्ब के विवेचन में पर्याप्त-तटस्थता से काम लिया है। बिम्ब पर शोध करते हुए भी उन्होंने कभी उसे काव्यालोचन का एकमात्र प्रतिमान नहीं माना है। लेखक ने स्पष्ट लिखा है कि रस साध्य है और बिम्ब साधन। बिम्ब की व्याप्ति रस, कल्पना, औचित्य, अलंकार, लक्षणा सब में मानते हुए भी उसे रस-परिपाक का प्रसाधन मात्र स्वीकार किया है। अतः लेखक प्राय: शोध-कर्ताओं में प्राप्त अतिवादों से सर्वथा बच गये हैं। बिम्ब के स्वरूप-विश्लेषण के साथ ही साथ काव्यबिम्ब और मनोवैज्ञानिक बिम्ब में अन्तर भी दिखाया है। द्वितीय अध्याय में पंतजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विचार किया है क्योंकि लेखक की स्पष्ट मान्यता है कि काव्य-बिम्ब कवि के व्यक्तित्व का द्योतक है। तृतीय अध्याय में पंतकाव्य में उपलब्ध ऐन्द्रिय बिम्बों, चतुर्थ में मानव-बिम्बों, पंचम में प्रकृति-बिम्बों, षष्ठ में भावबिम्बों और सप्तम में दार्शनिक बिम्बों का आकलन किया गया है। अष्टम अध्याय में हिन्दी काव्य में बिम्ब-विधान के संदर्भ में पंत के बिम्बों के वैशिष्ट्य का विवेचन है। इस प्रकार समग्र प्रबंध एक आवयविक इकाई के रूप में संग्रथित है। पंत-काव्य का बिम्बों के आधार पर लेखक ने जो परीक्षण-निरीक्षण किया है उससे लेखक के अध्यवसाय एवं वैज्ञानिक शोध की ओर प्रवृत्ति तो झलकती है, बिम्बों के वर्गीकरण में उसकी गहरी रुचि और पैठ भी प्रकट होती है। वस्तुपरक बिम्बों में मानव और प्रकृति-बिम्बों का जैसा विस्तृत विवेचन लेखक ने दिया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। पंत-काव्य से अनेकानेक बिम्ब-प्रकारों के उदाहरणों का चयन और उनका विश्लेषण डा. पिल्लै की विशिष्ट उपलब्धि है। डा. आनंदप्रकाश दीक्षित जी ने बिलकुल सही लिखा है 'पंत-काव्य का अध्ययन प्रस्तुत करने वाला यह अकेला प्रबंध है।' पंत के अद्यतन काव्यों का मंथन कर डा. पिल्लै ने समीक्षा के व्यावहारिक धरातल पर बिम्बों की दृष्टि से उसका परीक्षण किया है। प्रांजल भाषा और विवेचन-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रौढ़ि के कारण पाठकों को कहीं ऐसा नहीं लगता कि इस ग्रंथ का लेखक अहिन्दी भाषी है। अपने इस प्रयास केलिए डा. कुट्टन पिल्लै बधाई के पात्र हैं। हमारा विश्वास है कि इस ग्रंथ का हिन्दी जगत् में निश्चय ही स्वागत होगा। 'प्रकर', हिन्दी प्रचारक पत्रिका, अजन्ता आदि पत्रिकाओं ने मुक्तकंठ से लेखक के समीक्षक स्वरूप की प्रशंसा की है।

डा. सरलादेवी : मैथिलीशरल गुप्त और जयशंकर प्रसाद की काव्यकृतियों में नारीत्व का चित्रण—डा. सरलादेवी ने 'मैथिलीशरण गुप्त और जयशंकर प्रसाद की काव्य-कृतियों में नारीत्व का चित्रण' विषय पर शोध-प्रबंध लिखा है। चार खंडों और आठ अध्यायों में विभक्त इस शोध-प्रबंध में दोनों महाकवियों की नारी संबंधी विचारधाराओं, मान्यताओं, पात्र-सृष्टि तथा दोनों के साम्य-वैषम्य का जो विशद आकलन एवं समीक्षा प्रस्तुत की है, वह लेखिका के वैदुष्य तथा समीक्षक रूप का परिचय देने के साथ ही साथ उसके गंभीर अध्ययन तथा चिन्तन-मनन का भी द्योतक है।

प्रथम खण्ड में दो अध्याय हैं। प्रथम में 'आधुनिक नवजागरण और नारी' शीर्षक से आधुनिक नवजागरण के प्रेरक तत्वों, प्रयत्नों तथा नारी-जागरण के सूत्र-धारों का विशद परिचय देते हुए उसके पूर्व की नारी की सामाजिक स्थिति का भी उल्लेख किया है। निष्कर्ष रूप में लेखिक का अभिमत है कि नवजागरण काल में नारी को उठाने और उसे विकासोन्मुख करने की ओर तत्कालीन समाज-सुधारकों, द्वारा जो चेष्टा की गयी उसने एक ऐसी भावभूमि तैयार कर दी जिस पर बीसवीं शती के समाज सुधारकों, राष्ट्रीय नेताओं, लेखकों तथा महिलाओं ने भी नारी के चतुर्मुखी व्यक्तित्व के प्रासाद का निर्माण कर उसे गौरवान्वित किया। 'भारतीय काव्य-परंपरा में नारी' शीर्षक द्वितीय अध्याय में वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक काव्य-साहित्य तक में नारी के जो भव्य एवं अभव्य, सुन्दर एवं घृणित पक्षों का उद्घाटन हुआ, उसकी विस्तृत समीक्षा एवं लेखा-जोखा किया गया है। एक प्रकार से यह अध्याय शोध-प्रबंध की पूर्व पीठिका है और इसी पीठिका पर इस प्रबंध में यह दिखाने का प्रयत्न हुआ है कि गुप्तजी तथा प्रसाद जी जैसे कवियों ने नारी के सत्-असत् दोनों रूपों की ओर ध्यान दिया और अपने ऐतिहासिक एवं पौराणिक पात्रों के माध्यम से दोनों की पुनर्व्याख्या की।

द्वितीय खण्ड-तीन अध्यायों में गुप्तजी के साहित्य परक दृष्टिकोण, गुप्तजी के पूर्व के रासो, पद्मावत, रामचरित मानस, रामचन्द्रिका, प्रियप्रवास आदि में चित्रित नारी विषयक मान्यताओं की पृष्ठ-भूमि में गुप्तजी के काव्य में अभिव्यक्त नारी स्वरूप, नारी-पात्र-सृष्टि, नारी-पात्रों का वर्गीकरण आदि पर प्रकाश डालता है। लेखिका ने रचनाकाल, युग तथा प्रवृत्तियों को दृष्टि में रखते हुए नारीपात्रों का वर्गीकरण किया है और यह सिद्ध किया है कि प्रत्येक काल के कवियों की पात्र-सृष्टि अपने समयानुकूल होती है। चतुर्थ अध्याय में गुप्त जी के बहुप्रशंसित नारी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पात्र ऊर्मिला, यशोधरा और विष्णुप्रिया का तुलनात्मक अध्ययन है। सशक्त तथ्यात्मक तर्कों के आधार पर लेखिका ने यह स्पष्ट किया है कि ऊर्मिला का त्याग एक कौटुंबिक समस्या पर आधृत है, जबकि यशोधरा और विष्णुप्रिया के त्याग का आधार लोकमंगल की भावना है। पंचम अध्याय में गुप्त जी के अन्य नारी पात्रों का परिचय एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन है।

तृतीय खण्ड का संबंध 'प्रसाद साहित्य में नारी' से है। यहाँ षष्ठ अध्याय में प्रसादजी की सामाजिक, कौटुम्बिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं दार्शनिक विचारधाराओं के परिपार्श्व में उनकी नारी-विषयक मान्यताओं और उनपर रोमान्टिसिज्म के प्रभाव का मौलिक दृष्टि से विश्लेषण किया गया है। साथ ही प्रसाद-साहित्य में उपलब्ध नारीपात्रों के विविध स्वरूपों का भी दिग्दर्शन कराया गया है। सप्तम अध्याय में श्रद्धा, इडा और कमला-इन तीन प्रमुख नारी-पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन मौलिक चिन्तन पर आधारित है।

चतुर्थ खण्ड का अष्टम अध्याय 'गुप्तजी तथा प्रसादजी के नारी-चित्रण की तुलना' सम्पूर्ण शोध-प्रबंध का सारतत्व एवं प्राणतत्व है। दोनों कवियों की नारीपात्र की सृष्टि में स्पष्ट दिखाई देने वाले साम्य-वैषम्य पर प्रकाश डाला गया है।

समग्र रूप से आलोच्य शोधप्रबंध गंभीर अध्ययन, विषय की सूक्ष्म पकड़ निर्भीक उपस्थापना एवं सफल भाषाशैली के कारण अपने आप में विशिष्ट शोध उपलब्धि है। लेखिका की विषय-प्रतिपादन की अपूर्व क्षमता, तार्किक विश्लेषण एवं मौलिक चिन्तनस्रोत अवश्य ही प्रशंसनीय एवं स्तुत्य है। केरल के शोधकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत कुछ चुने हुए शोध-प्रबंधों में इसका स्थान है।

डॉ. सुनीता : मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में सांस्कृतिक पक्ष– डॉ. सुनीता ने 'मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में सांस्कृतिक पक्ष' पर शोधकार्य किया। मैथिलीशरण गुप्त पर दर्जनों शोधग्रंथ लिखे गये हैं और कई आलोचनात्मक कृतियाँ भी निकल चुकी हैं। डॉ. उमाकान्त ने लगभग इसी विषय पर—मैथिलीशरण गुप्त : कवि और भारतीय संस्कृति के आख्याता, शोधकार्य किया और पुस्तक भी छप गयी है। डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना की पुस्तक 'साकेत में काव्य, संस्कृति और दर्शन' भी प्रकाशित है। इस प्रकार जब पहले से उक्त विषय पर शोधग्रंथ एवं आलोचनात्मक ग्रंथ उपलब्ध हैं, तब इसी विषय को पुनः शोध का विषय बनाने केलिए लेखिका क्यों प्रेरित हुई और ऐसी कौन सी बात रह गयी थी, जिस पर बल देना आवश्यक था, यह लेखिका के शोधप्रबंध के प्रकाशित होने पर ही विदित होगी।

डॉ. रामचन्द्रदेव : निर्गुण भक्ति साहित्य के दार्शनिक स्रोत—डॉ. रामचन्द्र देव के शोध-विषय 'निर्गुण भक्ति साहित्य के दार्शनिक स्रोत' के संबंध में भी यही विचार प्रस्तुत करना पड़ता है। डॉ. रामचन्द्र देव के उक्त शोध-प्रबंध के बहुत पहले ही डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत की पुस्तक 'हिन्दी की निर्गुण काव्यधारा और उसकी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दार्शनिक पृष्ठभूमि' प्रकाशित हुई थी। वैसे ही निर्गुण काव्यधारा के चिन्तन पक्ष, साधना पक्ष, वैचारिक तत्व आदि पर शोधकार्य के होते हुए पुनः ऐसे ही विषय को शोध का आधार बनाने पर स्वाभाविक रूप से पिष्टपेषण का भय लगा रहता है। हाँ, हम यह अवश्य स्वीकार करेंगे कि प्रत्येक लेखक का दृष्टिकोण अलग होता है और उसे किसी आलोच्य विषय की पुन: परीक्षा का भी अधिकार है। फिर भी आज हिन्दी में शोध-प्रबंध के नाम पर जो पुस्तकें निकलती हैं, उनमें से अधिकांश पुस्तकों का कोई विशेष मूल्य नहीं है। वही पुरानी बातें दुहरायी हुई हैं। इसलिए जबतक डॉ. रामचन्द्र देव का शोध-प्रबंध छप नहीं जाता, तबतक हमें मौन रहना पड़ता है। फिर भी 'तुलसी और तुंचन' के लेखक के शोध-प्रबंध में भी कुछ नया चिन्तन, नया विचार पाने की हम आशा रख सकते हैं।

डॉ. फिलिप : भक्ति-साहित्य में विरह-भावना—'भक्ति साहित्य में विरह भावना' पर डॉ. फिलिप ने शोधकार्य किया था और यह शोध-प्रबंध भी अभी प्रकाश में नहीं आया है। 'भक्ति साहित्य में विरह भावना' पर इसके पूर्व संभवतः शोधकार्य नहीं हुआ, हाँ प्रकीर्ण लेख तथा अन्य विषयों के प्रसंग में इस विषय पर अवश्य चर्चा हुई है। डॉ. फिलिप ने अपेक्षाकृत नया विषय चुना और उसपर शोध-प्रबंध भी लिखा। उनके शोध-प्रबंध की टंकित प्रति देखने का अवसर तो मिला है और उससे यह भासित हुआ है कि डॉ. फिलिप ने बड़ी निष्ठा के साथ भक्ति-साहित्य का अध्ययन किया तथा विरह-भावना पर काव्यशास्त्रीय तथा मनोवैज्ञानिक स्तर पर भी विचार किया। लेखक ने अपना मन्तव्य सरल भाषाशैली में प्रस्तुत किया। लेखक ने भक्ति साहित्य में प्रस्फुटित विरह-भावना का लौकिक एवं आध्यात्मिक धरातल पर मूल्यांकन किया। शोध के क्षेत्र में एक नयी दिशा की ओर संकेत देने वाला यह शोध-प्रबंध अवश्य ही प्रशंसनीय है।

डॉ. सुशीलाम्मा ने हिन्दी भक्ति काव्य की सामाजिक भूमिका पर शोधकार्य किया, पर शोध-प्रबंध अप्रकाशित है।

डा. गोपीनाथन : केरलीयों की हिन्दी को देन—डॉ. जी. गोपीनाथन को 'केरलीयों की हिन्दी को देन' पर पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त हुई और उक्त शोध-प्रबंध प्रकाशित भी हुआ है। इस शोध-प्रबंध के प्रसंग में यह कहना ही पड़ता है कि इसके पूर्व डॉ. विलास गुप्ते ने तथा डॉ. उषारानी ने 'अहिन्दी भाषियों की हिन्दी को देन' पर शोध-कार्य किया था तथा पी-एच. डी. की उपाधि भी प्राप्त कर ली थी। डॉ. विलास गुप्ते का शोध-प्रबंध छप भी गया है। उपर्युक्त दो शोधप्रबंधों की पृष्ठभूमि में ही डॉ. गोपीनाथन के शोध-प्रबंध का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। डॉ. विलास गुप्ते ने हिन्दीतर भाषा-भाषी समस्त हिन्दी लेखकों को अपने शोध की सीमा में समेटने का प्रयास किया तो डॉ. उषारानी ने समस्त दक्षिण भारतीय लेखकों को अपना केन्द्र बनाया। इन दोनों के शोध-प्रबंधों की तुलना में डॉ.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोपीनाथन के शोध की सीमा इतनी संकुचित है कि शंका होती है कि आखिर अकेला 'केरलीयों की हिन्दी को देन' एक शोध का पर्याप्त विषय बन सकता है ? खैर, यह तो विश्वविद्यालय की पंजीकरण समिति को देख लेने का काम है। हमारे कथन का तात्पर्य इतना ही है कि डॉ. गोपीनाथन का शोध-क्षेत्र अत्यन्त सीमित रहा। इस सीमित क्षेत्र में वे अत्यन्त गहराई में जाकर शोध-प्रबंध प्रस्तुत कर सकते थे। पर जो शोध-प्रबंध छप कर बाहर आया, उसे देखने पर अत्यन्त निराशा होती है। प्रथम अध्याय में केरलीय हिन्दी साहित्य की पृष्ठभूमि, द्वितीय अध्याय में पुराने कोश और पाठमालाएं, तृतीय में केरलीय हिन्दी कवि महाराजा स्वातितिरुनाल् : व्यक्तित्व और कृतित्व, चतुर्थ अध्याय में आधुनिक युग (हिन्दी प्रचार आन्दोलन के समय से लेकर) पर विवेचना है। परिशिष्ट में स्वातितिरुनाल् के गीत प्रस्तुत हैं। चतुर्थ अध्याय में वर्तमान काल के केरलीय साहित्यकारों की रचनाओं, सेवाओं पर इतना संक्षिप्त लिखा गया है कि लेखक ने इने-गिने साहित्यकारों की ओर ही अपना ध्यान सीमित रखा है। शोधार्थी में अपने विषय के प्रति जो लगन एवं निष्ठा की अपेक्षा है, वह इस शोधप्रबंध के लेखक में नहीं है। केवल उपाधि को लक्ष्य बनाकर शोध-ग्रंथ तैयार करना अलग बात है। इस 120 पृष्ठों से कम के शोध-प्रबंध में शोधार्थी ने ऐसा क्या तत्व उजागर किया है जो हिन्दी केलिए अविदित था ? मलयालम-भाषी हिन्दी के असंख्य प्रसिद्ध विद्वान जो हिन्दी-भाषियों केलिए चिर-परिचित हैं, लेखक की दृष्टि में नहीं पड़ सके। इसमें ऐसे गण्यमान्य विद्वानों के साहित्य का उल्लेख तक नहीं हुआ है। लेखक की यह भ्रांत धारणा रही कि हिन्दी साहित्यकार केवल विश्वविद्यालयों के पीठाधीश हैं, उनके बाहर रहकर स्वतंत्र रूप से राष्ट्रभारती की सेवा में अनवरत तल्लीन यशस्वी एवं कर्मठ साहित्यकारों को विस्मृत कर यह शोध-प्रबंध लिखा गया है। फिर जिन साहित्यकारों और उनकी कृतियों का उल्लेख हुआ, उनके सही मूल्यांकन की दिशा में कोई कार्य नहीं हुआ। संभवतः लेखक ने उल्लिखित कई रचनाओं को देखा तक नहीं होगा। अतः यह प्रकाशित पुस्तक एक अनुसंधित्सु की निष्ठा, श्रम, योग्यता, तत्वग्राहिका प्रत्युत्पन्नमति, पूर्वाग्रह से विमुक्त तटस्थ दृष्टि और अध्यवसाय का द्योतक न होकर एक लघु शोध-प्रबंध (डिसर्टेशन) की भूमिका तक निभाने में असमर्थ है। बहुधा यह शिकायत सुनी जाती है कि हिन्दी शोध-प्रबंधों का स्तर गिरता जा रहा है। यह आलोच्य पुस्तक इस शिकायत का अपवाद नहीं हो सकती।

डा. एस. एन. गणेशन् : हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन—मलयालम भाषी हिन्दी शोधार्थियों में डा. एस. एन. गणेशन् का कार्य प्रशंसनीय है। उनका शोध-प्रबंध 'हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन' जो प्रकाशित है, एक श्रमसाध्य रचना है, जो शोधार्थी की अपूर्व तत्परता, मौलिक चिन्तन एवं तटस्थ चिन्ताधारा का सुन्दर उदाहरण है। डा. गणेशन ने अपने विषय से संबंधित रचनाओं का गंभीर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अध्ययन किया है। यह इस बात से स्पष्ट होगा कि डा. गणेशन् ने हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास में दृष्टिगोचर विभिन्न प्रवृत्तियों का मूल्यांकन करते हुए उनके आविर्भाव के प्रेरक तत्वों, प्रभावों, परिस्थितियों का गहराई में जाकर अपग्रथन किया है। हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य विचारधाराओं का प्रभाव समय-समय पर पड़ता रहा। लियो टालस्टोय, मानिसम गोर्की, कार्ल मार्क्स, फ्रायड, युंग आदि के चिन्तनों के प्रभाव पर लेखक ने तर्कपूर्ण प्रमाण प्रस्तुत किये। शोध-प्रबंध में आद्यन्त लेखक की सत्यान्वेषी दृष्टि एवं मौलिक उद्भावनाओं का परिचय प्राप्त होता है। लेखक की तत्वान्वेषी दृष्टि से कोई प्रमुख उपन्यास छूटने नहीं पाया, सब का यथास्थान नियोजन किया गया है। विचारों की अभिव्यक्ति में लेखक की भाषा पर्याप्त सक्षम है। हिन्दी जगत में इस ग्रंथ ने आदर प्राप्त किया है और अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में भी यह स्थान पा चुका है। मथुरा की कला-साहित्य-संस्कृति परिषद ने इस ग्रंथ के महत्व को पहचान लिया और उसने डा. गणेशन् को साहित्य मार्तण्ड की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया।

डा. एन. रवीन्द्रन्; डा. पी. के. पद्मजा—डा. एन. रवीन्द्रन् ने 'प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यास-साहित्य पर मार्क्सवाद का प्रभाव' पर तथा डा. पी. के. पद्मजा ने 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास-साहित्य पर समकालीन सामाजिक एवं राजनीतिक विचारधाराओं का प्रभाव' पर शोध कार्य किया। ये दोनों शोध-प्रबंध एक दूसरे के पूरक माने जा सकते हैं। पाश्चात्य विचारकों में कार्ल मार्क्स का अक्षुण्ण स्थान रहा और उनकी चिन्तनधारा ने विश्व के साहित्यकारों पर अपना अमिट प्रभाव डाला। भारतीय उपन्यासकार प्रेमचन्द भी अपने अंतिम समय में कार्ल मार्क्स की विचारधारा से प्रभावित हुए से लगते हैं। जो भी हो, 1936 में भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना के साथ ही साथ उपन्यास-क्षेत्र में भी मार्क्स की चिन्ताधारा से प्रभावित रचनाओं का बड़ी मात्रा में आविर्भाव हुआ। डा. रवीन्द्रन् ने हिन्दी उपन्यासों पर मार्क्स के इस प्रभाव का मूल्यांकन किया है। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास सामाजिक एवं राजनैतिक विचार-धाराओं से भी प्रेरणा ग्रहण करते रहे। भारतीय जन-जीवन विगत 30 वर्षों से नयी सामाजिक एवं राजनैतिक विचारधाराओं, समस्याओं से आक्रान्त रहा, जिसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ना अवश्यंभावी था। डा. पद्मजा का शोध-प्रबंध उपन्यास के क्षेत्र में दिखाई देने वाले इन प्रभावों का अध्ययन प्रस्तुत करता है। उपर्युक्त दोनों शोध-प्रबंध अप्रकाशित हैं।

डा. अनन्तरामन् : भारतेन्दु के नाटक—डा. अनन्तरामन् ने भारतेन्दु के नाटकों पर अनुसंधान किया। हिन्दी नाटक साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का आगमन एक अभूतपूर्व घटना है। हिन्दी नाटक साहित्य संस्कृत की प्राचीन नाट्य-शैली तथा पारसी नाट्य शैली से प्रभावित होता जा रहा था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने मौलिक एवं अनूदित नाटकों के द्वारा हिन्दी नाटक-साहित्य में एक नवीन प्रणाली का सूत्रपात

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करने का स्तुत्य प्रयास किया। स्वयं अभिनेता होने के कारण भारतेन्दुजी रंगमंच के अनुकूल नाटकों की सृष्टि में सफल हुए। डा. अनन्तरामन ने भारतेन्दु के मौलिक एवं अनूदित नाटक-साहित्य का युगीन परिप्रेक्ष्य में अध्ययन प्रस्तुत कर हिन्दी नाटक-साहित्य केलिए उनके योगदान का मूल्यांकन किया है। यह शोध-प्रबंध भी अभी प्रकाशित नहीं हुआ।

हिन्दी गद्य साहिय को अपनी समीक्षा का विषय बनाकर दो शोध-प्रबंध प्रस्तुत किये गये हैं। डॉ. सिस्टर कलेमेंट मेरी ने 'हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य' पर सागर विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. उपाधि प्राप्त की तो डॉ. जेकब पी. जार्ज ने 'आधुनिक हिन्दी गद्य और गद्यकार' को अपने शोध का आधार बनाकर सागर विश्वविद्यालय से डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। सौभाग्यवश ये दोनों शोधप्रबंध प्रकाशित भी हो चुके हैं।

डा. सिस्टर क्लेमेन्ट मेरी : हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य—मलयालम भाषियों के द्वारा प्रस्तुत शोधप्रबंधों में डॉ. सिस्टर क्लेमेंट मेरी के शोध-प्रबंध 'हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य' का अपना विशिष्ट स्थान है। लेखिका ने सन् 1947 से 1967 तक दो दशकों के भीतर लिखे गये विचारात्मक गद्य साहित्य का सर्वांगीण अध्ययन प्रस्तुत किया है। लेखिका ने हिन्दी के वैचारिक साहित्य के चार सोपान माने हैं—(1) भारतेन्दुयुग (1867-1906) (2) द्विवेदीयुग (1867-1917), (3) गांधीयुग अथवा छायावादी युग (1917-1947) तथा (4) नेहरू-युग अथवा स्वातंत्र्योत्तर युग। स्पष्ट है, लेखिका ने भारतेन्दु युग और द्विवेदी युग की अवधि लगभग एक ही मानी है, जो किसी ठोस आधार पर नहीं है। चौथे सोपान को नेहरू-युग की संज्ञा देने का औचित्य सिद्ध नहीं होता, क्योंकि राजनैतिक विचाराधारा के प्रवर्तक के रूप में नेहरूजी का भले ही आदरणीय स्थान रहा हो, हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में उनका कोई अतिशय व्यक्तित्व नहीं रहा। इसलिए नेहरूयुग न कहकर उसे स्वातंत्र्योत्तर युग मात्र कहना अधिक प्रामाणिक होगा। यही चौथा सोपान और उस अवधि में लिखित साहित्य ही लेखिका का शोध-विषय है। लेखिका ने वैचारिक गद्य को चार श्रेणियों में विभाजित करना उपयुक्त समझा है, जो हैं विवेचन, तार्किक व्याख्या, वर्णन और विवरण। संभवतः शैली को दृष्टि में रखकर यह विभाजन किया गया है।

यह शोध-प्रबंध द्वादश अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय पीठिका रूप में जिसमें स्वातंत्र्योत्तर युग के शास्त्रीय, राजनैतिक, भाषात्मक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिवेश का अध्ययन है। द्वितीय अध्याय में स्वातंत्र्योत्तर युग के साहित्य पर, तृतीय में आलोच्य युग के वैचारिक गद्य पर, विवेचन हुआ है। चतुर्थ अध्याय से नवम अध्याय तक को साहित्यिक चिन्तन, नैतिक एवं सामाजिक चिन्तन, सांस्कृतिक चिन्तन, राजनैतिक चिन्तन, दार्शनिक एवं धार्मिक चिन्तन तथा प्रेरणार्थक और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भावात्मक गद्य शीर्षकों के अन्तर्गत रखकर प्रत्येक विषय से संबंधित साहित्य और उनकी पृष्ठ-भूमियों का सुविशद एवं श्रमसाध्य अध्ययन किया गया है। दशम में वैचारिक गद्य की शैलियों पर विचार प्रस्तुत है तो एकादश अध्याय में उपसंहार रूप में ही सही आलोच्य युग के वैचारिक गद्य की तत्कालीन सर्जनात्मक गद्य से तुलना करते हुए आलोच्य युग की उपलब्धियों का विवेचन-विश्लेषण किया गया है। इस प्रकार यह समग्र शोध-प्रबंध एक इकाई के रूप में परस्पर संबद्ध है। लेखिका ने बीस वर्ष के भीतर लिखे गये वैचारिक गद्य साहित्य का प्रमुख लेखकों को दृष्टि में रखते हुए विशद एवं गहरा अध्ययन प्रस्तुत किया है। केवल मुद्रित पुस्तकों को ही नहीं, त्रैमासिक आलोचना के स्वातंत्र्योत्तर विशेषांकों तथा ऐसे अन्य विशेषांकों को भी अपने अध्ययन की सीमा में रखकर लेखिका ने अनुसंधान के प्रति अपनी लगन, निष्ठा, तथा परिश्रम का परिचय दिया है। इस अध्ययन में जहाँ लेखिका ने विशेष रुचि प्रदर्शित की है वहाँ कई स्थानों पर अपने पूर्वाग्रह रहित निर्भीक विचार भी प्रकट किये हैं, जो इस शोधग्रंथ की विशेष उपलब्धि है। डा. क्लेमेन्ट मेरी का यह शोध-प्रबंध श्रमसाध्य है और उनके विचारों में पर्याप्त प्रौढता का आभास मिलता है। लेखिका का भाषा पर पूर्ण अधिकार है और उसकी शैली सरस एवं गतिशील है। इस सुन्दर शोध-लेखन केलिए डा. क्लेमेन्ट मेरी बधाई की पात्री हैं और वे भविष्य में ऐसी मौलिक रचनाओं से हिन्दी-आलोचना साहित्य को समृद्ध बना सकेंगी, ऐसी आशा है।

डा. जेकब पी. जार्ज : आधुनिक हिन्दी गद्य और गद्यकार—डा. जेकब पी. जार्ज का शोध-प्रबंध 'आधुनिक हिन्दी गद्य और गद्यकार' प्रकाशित हुआ है। यह शोध-प्रबंध सात अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय विषय-प्रवेश है, जहाँ विषय का आशय, गद्य शैली से प्रयोजन, गद्य और गद्य शैली में अन्तर आदि पर प्रकाश डाला गया है। लेखक ने शैली के तीन तत्व निश्चित किये हैं—शैली व्यक्ति-सापेक्ष है, वस्तु-सापेक्ष है और समय-सापेक्ष भी। शैली का तात्पर्य समझाते हुए लिखा गया है कि वक्तव्य की पूर्ण तथा प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति ही शैली है और इस दृष्टि से मानव-मात्र के दैनिक जीवन का अंग है। दूसरे अध्याय में शैली का सैद्धान्तिक विवेचन है। यहाँ देशी-विदेशी विद्वानों के मंतव्यों को आधार बनाकर शैली को अभिव्यक्ति तत्व मानते हुए भाषा के महत्व पर विचार किया गया है। लेख के अनुसार भाषागत वैशिष्ट्य, जो भाव-प्रसूत है, वही शैली का सारतत्व है। तीसरे अध्याय में गद्य-शैली के उपकरणों ध्वनि, शब्द, वाक्य, अनुच्छेद, आदि पर विवेचना की गयी है। गद्यशैली के प्रमुख तत्व रूप में बौद्धिक तत्व, भावतत्व और सौन्दर्य को स्वीकार करके उन तत्वों पर विचार प्रस्तुत किया गया है। उसी अध्याय में गद्य शैली की विशेषताओं और उसके भेद-प्रभेदों पर भी ध्यान रखा गया है। चौथे अध्याय में सार्वजनिक शैली के अन्तर्गत बालमुकुन्द गुप्त, महावीरप्रसाद द्विवेदी, गणेशशंकर विद्यार्थी, बाबूराव विष्णुराव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पराडकर आदि की शैली पर आलोचना प्रस्तुत की गयी है। पाँचवें अध्याय में विवेचनात्मक गद्य शैली के अन्तर्गत बीसवीं शती के प्रमुख शैलीकार डा. श्यामसुन्दरदास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य नंददुलारे वाजपेयी तथा डा. रामविलास शर्मा को आलोचना का विषय बनाया गया है। छठे अध्याय 'वर्णनात्मक गद्य शैली' के अन्तर्गत कथात्मक गद्य को स्वीकार करके प्रेमचन्द, जैनेन्द्र कुमार, यशपाल, इलाचन्द्र जोशी तथा अज्ञेय की शैली पर प्रकाश डाला गया है। सातवाँ अध्याय ललित गद्य शैली से संबंधित है। ललित शैली को मूलतः संस्कृत की देन सिद्ध किया गया है। इस प्रकार लेखक ने आधुनिक हिन्दी के प्रतिनिधि गद्य-शैलीकारों को अपनी विवेचना का आधार बनाया है। लेखक अपने शोध-प्रबंध में प्रमुख सभी गद्य शैलीकारों के साथ न्याय नहीं कर सका। कई प्रमुख शैलीकार लेखक की दृष्टि से छूट गये हैं। और लेखक की दृष्टि मुख्यतः छायावाद काल तक सीमित रही है। आगे के शैलीकारों में एकाध ही स्थान पा सके हैं। इतना होते हुए भी हमें यह कहना पड़ेगा कि डा. जेकब पी. जार्ज ने भारी अध्यवसाय किया है और लेखकों की भाषा का सुन्दर विश्लेषण किया है। साथ ही प्रत्येक शैलीकार की साहित्यिक मान्यताओं पर भी दृष्टि रखी-गयी है। इस प्रकार यह ग्रंथ हिन्दी के गद्य शैलीकारों की शैली तथा साहित्यिक मान्यताओं का अपग्रथन करता है और भावी शोधकार्य केलिए दिशा-निर्देश भी करता है। यह इस ग्रंथ की उपलब्धि है। अवश्य ही यह ग्रंथ एक अहिन्दी-भाषी हिन्दी लेखक का सराहनीय प्रयास है।

डा. एच. परमेश्वरन : तुलसी कृत रामचरितमानस का भाषाशास्त्रीय अध्ययन—डा. एच. परमेश्वरन ने तुलसीदास कृत रामचरित मानस का भाषाशास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत करके केरल विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. उपाधि प्राप्त की। यह शोध-प्रबंध जो अभी अप्रकाशित है, दो भागों में विभक्त है—व्याकरण भाग तथा परिशिष्ट। व्याकरण संबंधी अध्ययन स्वानिमी, संधि, क्रियाएँ, संज्ञाएँ और क्लिटिक्स नाम के पाँच अध्यायों में विभक्त है। परिशिष्ट में क्रमानुसार शब्दों का अर्थ, वर्ग तथा रामचरित मानस में उनका अवतरण आदि दिया गया है। यह बृहदाकार शोध-प्रबंध लेखक की निष्ठा, व्यापक अध्ययन, विस्तृत विवेचन एवं पैनी दृष्टि का परिचायक है। विस्तृत परिशिष्ट भावी अनुसंधाताओं केलिए अवश्य ही मार्गदर्शक सिद्ध होगा। लेखक ने अपना शोधकार्य बड़े ही वैज्ञानिक ढंग से संतोषजनक शैली में प्रस्तुत किया है। यह लेखक की विद्वत्ता एवं विषय पर पूर्ण अधिकार का द्योतक है। अवश्य ही शोधकर्ता ने स्तुत्य कार्य संपन्न किया है और यह शोध-प्रबंध प्रकाशनोपरांत विद्वानों की प्रशंसा का पात्रीभूत होगा।

निष्कर्ष—ऊपर मलयालम भाषियों द्वारा स्वतंत्र हिन्दी विषयों पर शोधकार्य का सर्वेक्षण किया गया है, जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि संख्या में कम होते हुए भी इस दिशा में कुछ महत्त्वपूर्ण शोध-ग्रंथों की रचना हुई है। इनमें से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अधिकांश ग्रंथ मौलिक विषय पर मौलिक चिन्तन एवं अभिव्यक्ति की प्रौढ़ि के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान के अधिकारी हैं। सबसे बड़ी उपलब्धि यह भी है कि लगभग सारे के सारे शोध-प्रबंध प्रकाशित हो चुके हैं तथा उत्तर-दक्षिण के विद्वानों, समीक्षकों से समादृत भी हुए हैं। पंत-काव्य में बिम्ब-योजना, हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन तथा हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य—ये तीन शोधग्रंथ अपने प्रौढ गंभीर विचार एवं सशक्त अभिव्यक्ति के कारण हिन्दी में लिखे उच्च स्तरीय शोधग्रंथों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करते हैं और इनको हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में पर्याप्त आदर प्राप्त हो चुके हैं।

इस दिशा में कुछ और भी ठोस कार्य करने के हैं। हिन्दी काव्य में प्रतीक-योजना, छायावादोत्तर काव्य में बिम्ब-योजना, छायावादोत्तर काव्य का सौन्दर्य शास्त्रीय अध्ययन, हिन्दी की नयी कविता का रूप पक्ष, हिन्दी की नयी कविता में वैचारिक तत्व, आदि ऐसे अनेक मौलिक विषय हैं, जिनपर केरलीय शोधार्थियों को कुछ ठोस कार्य करना है। दो भाषाओं तथा साहित्यों से परिचित केरल के शोधार्थी ऐसे गंभीर विषयों में कुछ दिशा-निर्देश कर पाएँगे, ऐसी आशा की जा सकती है।

हिन्दी तथा मलयालम साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन—केरल के अधिकतर शोधार्थियों का ध्यान तुलनात्मक अध्ययन की ओर केन्द्रित रहा। यह तुलनात्मक अध्ययन कुछ तो कवियों, साहित्यिक विधाओं पर तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों पर हुआ है। हिन्दी तथा मलयालम के काव्य-साहित्य तथा प्रवृत्तियों पर तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने वालों में डॉ. के. भास्करन नायर, डॉ. एन. चन्द्रशेखरन नायर, डॉ. विश्वनाथ अय्यर, डॉ.रामन नायर, डा. एम. जार्ज, डा. पी. वी. विजयन, डा. के. एस. मणि, डा. पी. के. कुञ्चिरामन्, डा. सुभद्राम्मा, डा. राधादेवी, डा. वी. राधम्मा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

डॉ. के. भास्करन नायर : हिन्दी तथा मलयालम के कृष्णभक्ति-काव्य—डा. के. भास्करन नायर ने सबसे पहले हिन्दी तथा मलयालम के कृष्णभक्ति काव्य, का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया तथा लखनऊ विश्वविद्यालय से डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। लेखक ने संपूर्ण देश में व्याप्त वैष्णव भक्ति-आन्दोलन की पृष्ठभूमि में दोनों भाषाओं के कृष्णभक्ति साहित्य की तुलनात्मक आलोचना की। भारत की भावात्मक एकता की ओर संकेत करना लेखक का लक्ष्य रहा। इसलिए हिन्दी के कृष्णभक्त कवियों के साथ मलयालम के एपुत्तच्छन्, पून्तानम नम्पूतिरी, चेरुश्शेरी, रामपुरत्तु वारियर, आदि कवियों के भावों की तुलना प्रस्तुत कर भाव-साम्य का दिग्दर्शन कराया गया है और बताया गया है कि कवि जिस किसी भी प्रान्त के क्यों न हों, उनके भावों तथा विचारों में आन्तरिक साम्य है। लेखक ने प्रमाण स्वरूप दोनों भाषाओं के कवियों के उद्धरण प्रस्तुत किये हैं। हिन्दी का भक्ति साहित्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तथा मलयालम का भक्ति साहित्य इतने विशाल हैं कि दोनों पृथक्-पृथक् अनेक शोधप्रबंधों केलिए पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत कर सकते हैं। लेखक ने दोनों को एक ही शोध-प्रबंध की परिधि में लाकर रूपरेखा मात्र प्रस्तुत की है। विषय की व्यापकता के कारण वह विषय की गहराई में पहुँच नहीं सका। दोनों साहित्यों पर एक विहंगम दृष्टि डाली है, शोध के क्षेत्र में यह केरल का पहला प्रयास रहा, इसलिए संभव है, इस शोध ग्रंथ की अपनी कुछ न्यूनताएँ हों। किन्तु लेखक का श्रम प्रशंसनीय है क्योंकि उसी से केरल में तुलनात्मक अध्ययन का सूत्रपात होता है। विहार राष्ट्र भाषा परिषद तथा केन्द्र सरकार दोनों ओर से यह पुस्तक पुरस्कृत हुई है।

डॉ. एम. जार्ज : एषुत्तच्छन् और तुलसीदास—डॉ. एम. जार्ज ने 'एषुत्तच्छन् और तुलसीदास' का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कर पी-एच. डी. प्राप्त की तो 'हिन्दी तथा मलयालम का भक्ति-साहित्य' पर डी. लिट उपाधि भी प्राप्त की। मलयालम में एषुत्तच्छन् की अध्यात्म रामायण का वही स्थान है, जो कि हिन्दी में तुलसीकृत रामचरित मानस का है। अतः दोनों की तुलना उचित ही है। डा. जार्ज ने दोनों कवियों की भावगत एवं शैलीगत विशेषताओं का सम्यक् अध्ययन प्रस्तुत किया है। दूसरे शोध प्रबंध में मलयालम तथा हिन्दी के भक्ति साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन है। हिन्दी में निर्गुणधारा विशेष महत्व रखती है। जहाँ तक सगुण भक्ति से संबंधित साहित्य का प्रश्न है हिन्दी और मलयालम दोनों भाषाएँ समृद्ध हैं, किन्तु हिन्दी में जिस प्रकार निर्गुण भक्ति से संबंधित कविता अधिक मात्रा में लिखी गयी वैसी मलयालम में नहीं है। अतः शोधकर्ता दोनों भाषाओं के सगुण भक्ति साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन तक अपना क्षेत्र सीमित रखता तो यह शोधकार्य और भी प्रामाणिक एवं उपादेय सिद्ध होता।

डा. रामन नायर : हिन्दी तथा मलयालम भक्तिकाव्य में वात्सल्यरस—डा. रामन नायर ने 'हिन्दी तथा मलयालम भक्ति-काव्य में वात्सल्यरस' पर शोधकार्य किया था। यह शोधप्रबंध हाल ही में प्रकाशित भी हुआ है। शोधकर्त्ता ने बड़ी तत्परता के साथ दोनों साहित्यों के भक्तिकाल में निसृत वात्सल्यरस का तुलनात्मक अध्ययन पर्याप्त विस्तार से किया और यह सिद्ध किया कि वात्सल्य-भक्ति की दृष्टि से हिन्दी तथा मलयालम में उद्भुत साम्य है।

डा. विश्वनाथ अय्यर : आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम काव्य की मुख्य प्रवृत्तियाँ—डा. विश्वनाथ अय्यर का शोध विषय रहा—"आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ (1917-47 तक)।" डा. अय्यर ने तीस वर्षों के भीतर हिन्दी तथा मलयालम के काव्य-साहित्य की मुख्य प्रवृत्तियों का अनुशीलन किया है और दोनों साहित्य में उपलब्ध साम्य-वैषम्य पर भी प्रकाश डाला है। डा. अय्यर का यह शोधप्रबंध हिन्दी तथा मलयालम काव्य-साहित्य की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

डा. के. पद्मावती : हिन्दी और मलयालम के प्रगतिवादी काव्य—हिन्दी और मलयालम के प्रगतिवादी काव्य पर शोध प्रबंध प्रस्तुत कर डा. के. पद्मावती ने पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। प्रस्तुत शोधप्रबंध दोनों भाषाओं के छायावादोत्तर काव्य की मुख्य प्रवृत्तियों का आकलन करता है।

डा. विजयन : 'जयशंकर प्रसाद और कुमारन आशान के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन'—यह निर्विवाद सत्य है कि हिन्दी में जयशंकर प्रसाद छायावादी काव्यधारा के उन्नायक एवं प्रवर्त्तक महाकवि हैं। मलयालम काव्य-साहित्य में स्वच्छन्दतावादी काव्य प्रवृत्तियों का प्रारंभिक रूप कुमारन आशान की कविताओं में उपलब्ध होता है। इस दृष्टि से प्रसाद और आशान का तुलनात्मक अध्ययन कुछ महत्व रखता है। दार्शनिक दृष्टि से भी प्रसाद और आशान में कुछ साम्य परिलक्षित हो सकते हैं। दोनों शिवोपासक कवि थे। लेकिन इतने मात्र से प्रसाद और आशान की तुलना नहीं हो सकती। मलयालम भाषा-साहित्य में आशान की महिमा एक विद्रोही कवि एवं जाति-पांति के दुराचारों के कटु आलोचक के रूप में है। आशान-काव्य में उपलब्ध चुनौती के स्वर एवं विद्रोहात्मक आक्रोश जयशंकर प्रसाद में नहीं है और प्रसाद-काव्य में प्राप्त भावुकता, गंभीर चिंतन एवं प्रौढ़ दार्शनिक तत्व तथा गरिमामय भाषा-शैली आशान की कविताओं में प्राप्त नहीं हैं। अतः प्रसाद की तुलना आशान से करना वास्तव में प्रसाद के महान व्यक्तित्व केलिए एक प्रकार का लांछन ही होगा।

डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर : हिन्दी और मलयालम के (दो) सिम्बॉलिक [प्रतीकात्मक] कवि—केरल के लोकप्रिय साहित्यकार तथा हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठित लेखक प्रोफसर एन. चन्द्रशेखरन नायर का, बिहार विश्व-विद्यालय की पी-एच. डी. उपाधि केलिए प्रस्तुत किया गया यह शोध-प्रबंध केरल में लिखे अन्य श्रेष्ठ तुलनात्मक शोध-प्रबंधों में गिना जाता है।

प्रतिपादन और प्रतिस्थापना की दृष्टि से इस शोध-प्रबंध का विशेष महत्व है। दो विभिन्न भाषाओं के दो समान-धर्मी कवियों का केवल तुलनात्मक अध्ययन इसका प्रतिपाद्य नहीं है। शोध-परक साहित्यिक विषय पर व्यापक और सूक्ष्म गवेषणा करने का अवसर इसके द्वारा लेखक को प्राप्त हुआ है। 'काव्य में सिम्बॉलिज्म' अथवा प्रतीकवाद पर अध्ययन हिन्दी में यह प्रथम प्रयास है। लेखक ने 102 पृष्ठों में प्रतीक-विधान की परिभाषा करते हुए प्रतीक संबंधी असंख्य धारणाओं पर बारीकी से चर्चा की है और प्रतीक का वस्तु-निर्णय करने में पश्चिमी एवं भारतीय प्रतीक-क्रिया के समस्त तथ्यों को एकत्र किया है। प्रतीक-परिभाषा; प्रतीकों का महत्व; प्रतीक और प्रस्तुत-अप्रस्तुत; प्रतीक का क्षेत्र-विस्तार; प्रतीक-परम्परागत और नवीन; प्रतीक-रूपक, उपमा और सादृश्य; प्रतीक-वक्रोक्ति समासोक्ति, अन्योक्ति, रूपकातिशयोक्ति और दृष्टांत; प्रतीक-मिथक और संदर्भ; प्रतीक और बिम्ब; प्रतीकों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का भेद निरूपण; प्रतीक-भारतीय और पश्चिमी; प्रतीकवाद और रहस्यवाद; प्रतीकवाद और छायावाद; प्रतीक और उपनिषद; फ्रांसीसी प्रतीकवाद; प्रतीकवाद: हिन्दी और मलयालम में—प्रथम अध्याय की विषय-वस्तु है।

विषय वस्तु संबंधी यह विशद एवं व्यापक शोधपरक पठन एक श्रेष्ठ पठनीय ग्रंथ की सामग्री प्रस्तुत करता है। दूसरे अध्याय में लेखक ने हिन्दी के सिम्बॉलिक कवि के रूप में सुमित्रानन्दन पंत की पृष्ठभूमि तैयार की है। तीसरे अध्याय का विषय पंत जी पर भारतीय चिंतन एवं दर्शन का प्रभाव है। अध्याय चार में पंतजी की प्रतीक-योजना का गंभीर अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। अध्याय पांच में सिम्बॉलिक कवि के रूप में जी. शंकर कुरुप की पृष्ठभूमि का अध्ययन है। छठे अध्याय में जी. शंकर कुरुप की प्रतीकी कविताओं का मूल्यांकन है। अध्याय सात में पंत और कुरुप दोनों का अनेक पहलुओं पर तुलनात्मक अध्ययन और समर्थन है। परिशिष्ट के 24 पृष्ठों में संदर्भ-ग्रंथों एवं सहायक ग्रंथों की सूची दी गयी है।

लेखक का पुरोवाक् शोध-प्रबंध का संपूर्ण दर्शन देने वाला है जिसमें से थोड़ा अंश नीचे उद्धृत है।

"कला में मानव-मन के भाव एवं भावना को रूपायित किया जाता है, किन्तु यह भाव और भावना सब चेतन स्तर की ही नहीं, अवचेतन स्तर की भी होती है। इस अवचेतन मन के स्तर में मनुष्य के जो सब चिन्तन नित्य क्रियाशील होते रहते हैं, उनका रूप मनुष्य के ज्ञान-जगत में अस्पष्ट और धूमिल रहता है। यह अस्पष्ट भाव, अनुभूति, अभीप्सा या वेदना जब शिल्पी या कलाकार की कला-सृष्टि में अभिव्यक्त होती है तब उसमें अस्पष्टता आ जाती है। कला में इस अस्पष्टता की स्वीकृति एवं अभिव्यक्ति पाश्चात्य देशों के प्रतीकवादी आन्दोलन (Symbolist movement) में हुई है। रवीन्द्रनाथ ने भी इस सिम्बॉलिक 'आर्ट' का समर्थन किया है। × × × आधुनिक काल में संसार के प्रायः सभी देशों के अनेक कलाकारों एवं विदग्ध शिल्प-समालोचकों ने प्रतीकी कला को श्रेष्ठ कला के निदर्शन के रूप में प्रधानता दी है। × × × ऋग्वेद तथा संसार के अन्य प्राचीन धर्म-ग्रंथों एवं काव्यों में प्रतीक के अजस्र निदर्शन पाये जाते हैं। × × × उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में बॉदलेयर, मलार्मे, वर्लेन प्रभृति फ्रेंच कवियों ने अपनी रचनाओं में तात्विक रूप से प्रतीक व्यवहार किया है। फ्रांसीसी प्रतीकवादियों की विशेषता यह है कि उन्होंने प्रतीकों की सहायता से काव्य को संगीत के स्तर पर उन्नीत करने की चेष्टा की है। × × × प्रतीक-धर्मी कविता की बिम्ब-सृष्टि (Imagery) अपने प्रकाश से ही प्रकाशित होती है, कारण बिम्ब-सृष्टि यहाँ प्रतीक विशेष होती है और प्रतीक ही रचना का केन्द्र-बिन्दु होता है। साधारणतः गम्भीर आत्मचेतन की अभिव्यक्ति केलिए कवि प्रतीकता का आग्रह ग्रहण करता है। × × × कविता के अन्तर्गत प्रतीक की विशेषता उसकी सर्वमयता में है, मूल भाव के आनुषंगिक रूप में उसका प्रयोग नहीं होना चाहिए।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रतीकी कला का यह गहरा तथा सफल अध्ययन हिन्दी शोध-क्षेत्र को विशिष्ट देन है। सिम्बॉलिक काव्य के प्रशस्त कवियों के रूप में पंत जी एवं कुरुप जी की स्थापना करके लेखक ने उत्तर और दक्षिण के बीच साहित्यिक सेतुबंधन ही नहीं किया है, बल्कि सांस्कृतिक सेतुबंधन का महान कार्य भी किया है। आज पंत जी और कुरुप जी दोनों हमारे देश के महान कवि हैं और उनके जीवन, साहित्य-सृजन एवं सांस्कृतिक पृष्ठाधार में ऐसा गहरा और अनोखा साधर्म्य प्राप्त होता हैं, जो अवश्यमेव अध्ययन का रोचक विषय है। इस शोध-ग्रंथ में इन दोनों विख्यात कवियों का नाना पहलुओं में साधर्म्य मनोयोग से प्रस्तुत किया गया है। प्रतिस्थापना में तटस्थ दृष्टि अपनायी गयी है और भारत के दो महान कवियों का तुलनात्मक अध्ययन करके देश की संस्कृति एवं प्रतिभा की वैज्ञानिक तरीके से पुनः प्रतिष्ठा की है। वस्तुत: एक अत्यंत श्रेष्ठ शोध-ग्रंथ प्रस्तुत करके डा. चन्द्रशेखरन नायर ने ललित साहित्य के इस क्षेत्र में भी अपनी दक्षता एवं सफलता का पद-चिह्न छोड़ दिया है।

डा. के. एस. मणि : वल्लत्तोल तथा मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन—डा. के. एस. मणि ने वल्लत्तोल तथा मैथिलीशरण गुप्त के काव्य के तुलनात्मक अध्ययन को अपना शोध-विषय बनाया। मलयालम के महाकवि वल्लत्तोल तथा हिन्दी के महाकवि मैथिलीशरण समकालीन थे और दोनों भारतीय स्वतंत्रता-आन्दोलन, भारत की संस्कृति आदि से प्रभावित थे। दोनों अपनी-अपनी भाषा के राष्ट्रीय कवि का अभिधान भी प्राप्त कर सके हैं। अतः रचना काल, वैचारिक दृष्टिकोण, आदर्श आदि की दृष्टि से दोनों कवियों का तुलनात्मक अध्ययन अवश्य ही समीचीन है और भारतीय भावात्मक एकता का द्योतक है।

छः अध्यायों में विभक्त इस शोध-प्रबंध में वल्लत्तोल तथा गुप्त जी के समग्र काव्यों का तुलनात्मक अध्ययन है। प्रथम अध्याय में पृष्ठभूमि के रूप में वल्लत्तोल तथा मैथिलीशरण के पहले की मलयालम तथा हिन्दी काव्यधारा पर प्रकाश डाला गया है। राजनैतिक, सामाजिक परिस्थितियों के साथ ही साथ दोनों भाषाओं में उपलब्ध काव्य की रूप-विधाओं की भी चर्चा की गयी है। इस प्रकार दोनों कवियों के काव्यों की आधारभूमि एवं प्रेरणा का दिग्दर्शन कराया गया है। द्वितीय अध्याय में मैथिलीशरण के जीवन और काव्य का लेखा-जोखा है तो तृतीय अध्याय वल्लत्तोल के जीवन तथा काव्य से संबंधित है। चतुर्थ में दोनों की प्रबंध-शैली तथा प्रगीत शैली पर सविस्तार विवेचन हुआ है। इसी अध्याय में गीतिकाव्य के स्वरूप तथा गीत और प्रगीत के भेदों पर भी मंतव्य प्रकट किया गया है। पंचम अध्याय मैथिलीशरण तथा वल्लत्तोल काव्य में सांस्कृतिक चेतना तथा राष्ट्रीय भावना पर प्रकाश डालता है। दोनों की संस्कृति संबंधी भावना का अपग्रथन करने के साथ ही दोनों की राष्ट्रीयता की सीमा निर्धारित की गयी है। इस अध्याय के दो भाग हैं। प्रथम में मैथिलीशरण के सामाजिक आदर्श एवं कौटुंबिक कल्पना का परिचय देने के बाद वल्लत्तोल का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जीवन-दर्शन, धार्मिक दृष्टि, सामाजिक आदर्श, परिवार कल्पना आदि की समीक्षा है। द्वितीय भाग में राष्ट्रीय भावना के अन्तर्गत दोनों कवियों की राष्ट्रीय कविताओं में प्रकट हुई देशभक्ति पर समग्र रूप से विचार किया गया है। षष्ठ अध्याय में मैथिलीशरण और वल्लत्तोल की अभिव्यंजना-शैली पर विचार करते हुए उनकी भाषा, अलंकार-योजना (भारतीय एवं पाश्चात्य) तथा दोनों भाषाओं के छन्द विधान पर संक्षिप्त अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

लेखक की दृष्टि लगभग तटस्थ है। उसने यह स्पष्ट बताया है कि गुप्त जी में प्रसाद, पंत, निराला या महादेवी के काव्यगुण एवं मौलिक विशिष्टताओं का दर्शन नहीं किया जा सकता। उनकी महत्ता इस बात में है कि वे अपनी परिस्थिति के अनुसार स्वर-साधना करते गये। किन्तु वल्लत्तोल की बात ऐसी नहीं, वे परंपरा और परिस्थिति के अनुकूल जाते हुए भी काव्य-शैलियों में तुरन्त परिवर्तन भी लाते रहे। वे जल्दी-जल्दी अपने स्वर बदलते थे। अर्थात् उनमें नवीनता के भी दर्शन किये जा सकते हैं। यही कारण है कि आधुनिक कवि ओ. एन. वी. कुरुप, ओ. एन. अनुजन, वयलार रामवर्मा पर भी उनका प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। इस प्रसंग में थोड़े मतभेद केलिए गुंजाइश है। वल्लत्तोल प्राचीनता और नवीनता के संगम-स्थल हैं तो क्या गुप्त जी काव्य-शैली में एकदम परंपरावादी थे? वास्तव में देखा जाए तो आगामी छायावादी काव्यधारा का बीज गुप्तजी के प्रगीतों में छिपा हुआ है। अंत में उपसंहार के रूप में लेखक ने यह मंतव्य प्रकट किया है कि दोनों कवियों की महत्ता इसमें है कि दोनों का आदर्श एक समष्टि हित-चिन्तन से युक्त सर्वोदय भावना है तथा दोनों कवि आधी शताब्दी तक स्वर-साधना करते रहे।

दोनों कवियों की तुलना में कभी-कभी लेखक की प्रान्तीयभावना एवं मातृभाषा-प्रेम अधिक स्पष्ट होता सा जान पड़ता है। फिर भी दोनों कवियों की तुलना करके लेखक ने यह स्पष्ट कर दिया है कि दोनों कवि भावनात्मक एकता एवं विश्वबंधुत्व के पुरोधा थे। लेखक लंबे वाक्य-गठन तथा समास-बहुल शब्द-प्रयोग से पूर्णतया बच नहीं सका। वाक्य-गठन एवं भाषाशैली पर अंग्रेजी का प्रभाव देखा जा सकता है। उसका उर्दू शब्दों से परहेज नहीं है। उर्दू शब्दों का खुल कर प्रयोग किया गया है। इन सीमाओं के बावजूद भी लेखक का शोधप्रबंध एक सफल प्रयास है।

डा. शशिधरन पिल्लै: महाकवि निराला तथा जी. शंकर कुरुप की कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन—डा. शशिधरन पिल्लै ने महाकवि निराला तथा जी. शंकर कुरुप की कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कर पी-एच. डी. उपाधि प्राप्त की। यह शोधप्रबंध प्रकाशित नहीं हो पाया है। मलयालम साहित्य में महाकवि जी शंकर कुरुप का अप्रतिम महत्व है तो महाप्राण निराला हिन्दी काव्यक्षेत्र में एक विराट व्यक्तित्व लिये हुए हैं। अद्वैतवादी दार्शनिक चिन्तन, रहस्यात्मक अनुभूति,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रतीक-शैली आदि दृष्टियों से देखा जाए तो दोनों कवियों में अद्भुत समानता है। इस दृष्टि से दोनों कवियों की तुलना उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

वी. राधम्मा : चिदंबरा और ओटक्कुषल्—श्रीमती वी. राधम्मा ने 'चिदंबरा और ओटक्कुषल' काव्यों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करके दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के स्नातकोत्तर विभाग की 'साहित्याचार्य' उपाधि प्राप्त की। सुमित्रानंदन पंत कृत 'चिदंबरा' तथा मलयालम के कवि शंकर कुरुप कृत 'ओटक्कुषल' दोनों भारतीय ज्ञानपीठ से पुरस्कृत हुए हैं। इस दृष्टि से ही नहीं, भावपक्ष एवं शैलीपक्ष की दृष्टि से भी दोनों ग्रंथ महत्वपूर्ण हैं। दोनों में अभिव्यक्त प्राकृतिक सौन्दर्य, दार्शनिक उद्भावनाएँ, रहस्यात्मकता, स्वानुभूति एवं शैलीगत लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता, चित्रमयता दोनों ग्रंथों के तुलनात्मक अध्ययन को सार्थक बना देते हैं।

डॉ. राधादेवी : बालामणि अम्मा और महादेवीवर्मा का तुलनात्मक अध्ययन—डॉ. राधादेवी का शोध-विषय 'बालामणि अम्मा और महादेवी वर्मा का तुलनात्मक अध्ययन' रहा। भारतीय संस्कृति एवं मातृत्व की गरिमा से ओतप्रोत नालप्पाट्टु बालामणि अम्मा की आद्यन्त कविताएँ एक नयी सरणी को उद्भासित करती हैं। उनकी 'कूप्पुकै', अम्मा, कुटुंविनी, सब भारतीय मातृत्व की यशगाथा हैं। इस दृष्टि से बालामणि अम्मा का भावक्षेत्र तथा महादेवी का भावक्षेत्र भिन्न सिरे पर हैं। बालामणि अम्मा मातृत्व की अधीश्वरी है तो महादेवी में अपरिमेय परमात्मा के प्रति असीम प्रेम तथा उससे उत्पन्न वियोग जन्य पीड़ा का वर्णन है। बालामणि का भावना-क्षेत्र महादेवी में नहीं है और महादेवी का चिन्तन-क्षेत्र बालामणि अम्मा को प्राप्त नहीं है। प्रथम में हृदयपक्ष प्रधान है तो द्वितीय में बुद्धि पक्ष। हाँ दोनों ने स्वानुभूतिमय गीतों की सरस सृष्टि की है। अन्यथा दोनों की तुलना का कोई विशेष महत्व परिलक्षित नहीं होता। दोनों कवयित्रियाँ हैं, केवल इस आधार पर दोनों की तुलना अनुचित है।

डा. सुभद्राम्मा—डा. सुभद्राम्मा ने हिन्दी-मलयालम रामकाव्यों पर शोधकार्य किया था और उनका शोधप्रबंध अभी प्रकाश में नहीं आया है।

डा. पी. के. कुञ्ञिरामन् : आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम के खंडकाव्यों का तुलनात्मक अध्ययन—डा. पी. के. कुञ्ञिरामन ने 'आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम के खण्डकाव्यों का तुलनात्मक अध्ययन' प्रस्तुत कर आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि ली है। यह शोधप्रबंध नौ अध्यायों में विभक्त है। प्रथम में प्रबंध काव्य के भेदोपभेदों पर विचार करके खण्डकाव्य का स्थान निर्धारित किया गया है। द्वितीय अध्याय में प्राक् आधुनिक काल की खंडकाव्य-विधा का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। तृतीय अध्याय में हिन्दी तथा मलयालम के प्रमुख आधुनिक खंडकाव्यों का विवेचन है तो चतुर्थ में कथावस्तु, सर्गीकरण तथा छंदयोजना के आधार पर खंड-काव्य का वर्गीकरण किया गया है। पंचम में आधुनिक खंडकाव्यों के स्रोत की खोज तथा निष्कर्ष रूप में यह उपस्थापना है कि साहित्य में विभिन्नता में एकता परिलक्षित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होती है। षष्ठ तथा सप्तम में कथाविधान के साम्य-वैषम्य तथा काव्य-सौष्ठव का निरूपण किया गया है। अष्टम अध्याय में नवीन उपलब्धियों के आलोक में खंड-काव्य की परिभाषा तथा उसके भेदों पर विवेचन है। अंतिम अध्याय में काल-क्रमानुसार खण्डकाव्यों की सूची और सहायक ग्रंथों की तालिका है। इस प्रकार इस शोधप्रबंध में दोनों भाषाओं के खंडकाव्यों की अद्भुत समानता दर्शाने का प्रयास किया गया है। कथावस्तु के उत्स तथा खंडकाव्य की रचनागत शैली दोनों की दृष्टि से दोनों भाषाओं के खंडकाव्यों में आश्चर्यजनक समानता का दर्शन किया गया है। दोनों काव्यों की प्रवृत्तियाँ समान हैं। शोधकर्त्ता का विनम्र दावा है कि भावनात्मक एकता की स्थापना में, पारस्परिक स्नेह तथा आदर के विकास में यह शोध-प्रबंध अपना योगदान दे सकता है।

ए. गणेश अय्यर : आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम कविता में प्रेम और सौन्दर्य—एक तुलनात्मक अध्ययन—ए. गणेश अय्यर ने आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम कविता में प्रेम और सौन्दर्य—एक तुलनात्मक अध्ययन पर शोध प्रबंध मेरठ विश्वविद्यालय में प्रस्तुत कर लिया है। इसमें हिन्दी तथा मलयालम में सन् 1900 से 1935 ई. की समय-सीमा के अन्तर्गत आनेवाले प्रतिनिधि महाकाव्यों, खंडकाव्यों तथा मुक्तक काव्यों में प्रतिपादित प्रेम और सौन्दर्य के लौकिक स्वभाव का तुलनात्मक अध्ययन 13 अध्यायों के भीतर प्रस्तुत है। प्रथम अध्याय में दोनों भाषाओं की आधुनिक साहित्य-प्रवृत्तियों का परिचय देने के साथ ही प्रेम और सौन्दर्य की व्याख्या है। प्रेम-सौन्दर्य को सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं काव्यशास्त्रीय भूमिका में देखा-परखा गया है। आधुनिक युग-पूर्व कविताओं में अभिव्यक्त प्रेम-सौन्दर्य पर सरसरी दृष्टि डाली गयी है। द्वितीय अध्याय में हिन्दी की आधुनिक कविता पर पश्चिमी काव्यधारा का प्रभाव दर्शाया गया है। तृतीय में मलयालम की आधुनिक कविता पर पश्चिमी काव्यधारा का प्रभाव, चतुर्थ में हिन्दी महाकाव्यों में प्रेम-सौन्दर्य, पंचम में मलयालम महाकाव्यों में प्रेम-सौन्दर्य, तथा षष्ठ में दोनों काव्यों में प्रेम सौन्दर्य की अभिव्यक्ति की तुलना प्रस्तुत है। सप्तम, अष्टम और नवम अध्यायों में क्रमशः हिन्दी खंडकाव्य में प्रेम-सौन्दर्य, मलयालम खंडकाव्य में प्रेम-सौन्दर्य तथा दोनों खंड-काव्यों में व्यंजित प्रेम-सौन्दर्य का तुलनात्मक अध्ययन है। दशम में हिन्दी मुक्तक काव्यों में अभिव्यक्त प्रेम-सौन्दर्य, एकादश में मलयालम मुक्तक काव्यों में प्रेम-सौन्दर्य, एकादश में मलयालम मुक्तक काव्यों में प्रेम-सौन्दर्य और द्वादश में दोनों मुक्तक काव्यों में अभिव्यक्त प्रेम-सौन्दर्य की तुलना प्रस्तुत है। त्रयोदश अध्याय उपसंहार-रूप में लिखा गया है।

इस प्रकार गणेश अय्यर ने अपना शोध-प्रबंध पर्याप्त निष्ठा एवं श्रम से तैयार किया है। उनकी मान्यताएँ ठोस, सतर्क एवं प्रामाणिक हैं। आद्यंत लेखक की तुलनात्मक दृष्टि की प्रभूत सामग्री उपलब्ध है। भाषा परिमार्जित, और शोध-प्रबंध की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दृष्टि से समीचीन है। शैली विवरणात्मक होने के कारण प्रबंध के कलेवर में अनावश्यक वृद्धि हो गयी है, पर कहीं भी असंगत एवं प्रसंग से भ्रष्ट होने जैसी कोई बात नहीं है। इस प्रकार शोध-प्रबंध प्रामाणिक उच्चकोटि की सामग्री से युक्त और मौलिक मान्यताओं से समन्वित हो तुलनात्मक शोधकार्य की दिशा में एक स्तुत्य प्रयास है।

डा. एन. आई. नारायणन् : हिन्दी तथा मलयालम के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन—'हिन्दी तथा मलयालम के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध-प्रबंध प्रस्तुत करके डा. एन. आई. नारायणन् ने आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की और यह प्रबंध छप भी गया है। नाटकों के तुलनात्मक अध्ययन पर संभवतः यही पहला शोध-प्रबंध है। इसमें हिन्दी तथा मलयालम के नाटक-साहित्य का प्रारंभ से लेकर सन् 1960 तक का अध्ययन है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध आठ अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में दोनों भाषाओं के नाटक-साहित्य का सामान्य परिचय देते हुए हिन्दी की नाट्य-विधा रासलीला, रामलीला एवं नौटंकी तथा मलयालम की नाट्य-शैली आट्टम्, कूत्तु और नाटक (पुराट्टु नाटकम् और चविट्टु नाटकम्) का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही भारतीय एवं पाश्चात्य नाट्य शैलियों का परिचय देते हुए उनका दोनों भाषाओं के नाटकों पर प्रभाव भी दर्शाया गया है। द्वितीय अध्याय में हिन्दी और मलयालम के पौराणिक नाटकों का संक्षेप में उल्लेख किया गया है। तृतीय अध्याय में हिन्दी-मलयालम ऐतिहासिक नाटकों का परिचय और तुलनात्मक अध्ययन है। इस अध्याय के अन्तर्गत प्रसाद, बेचन शर्मा उग्र, प्रेमचंद, जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद, हरिकृष्ण प्रेमी, वृन्दावनलाल वर्मा जैसे हिन्दी के ऐतिहासिक नाटककारों तथा मलयालम के ई. वी. कृष्ण पिल्लै, सी. वी. रामन पिल्लै, कैनिक्करा पद्मनाभ पिल्लै, नागवल्ली आर. एस. कुरुप, सरदार के. एम. पणिक्कर जैसे नाटककारों के नाटकों का संक्षिप्त परिचय देते हुए दोनों भाषाओं के नाटकों की तुलना की गयी है। चतुर्थ अध्याय में सामाजिक नाटक, पंचम में समस्या नाटक, षष्ठ में प्रहसन और सप्तम में एकांकीनाटक अध्ययन के विषय रहे हैं। अष्टम अध्याय रंगमंच से संबंधित है। यहाँ यह दिखाया गया है कि दोनों भाषाओं के रंगमंच में अद्भुत साम्य है तथा उत्तर-दक्षिण में कभी भावात्मक एकता का अभाव नहीं रहा।

वास्तव में दोनों भाषाओं की नाट्य संपदा का तुलनात्मक अध्ययन एक सराहनीय कार्य है और भारत की भावात्मक एकता में सहायक भी है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध में यही लेखक का उद्देश्य रहा कि दोनों भाषाओं के नाटक-साहित्य में भावात्मक एकता का दर्शन करें। लेखक ने इतना विस्तृत क्षेत्र चुना कि सहस्रावधि ग्रंथ इसकी सीमा में आ जाते हैं। समस्त नाट्य कृतियों का गहरा अध्ययन करके दोनों भाषाओं के नाटकों के शिल्पगत साम्य-वैषम्य को दर्शाने केलिए उसके पास अवकाश नहीं रहा। हाँ नाटक-साहित्य पर लिखे गये कई ग्रंथ दोनों भाषाओं में उपलब्ध हैं; समयाभाव

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के कारण लेखक को उन्हीं ग्रंथों को उपजीव्य बनाकर अपना काम चलाना पड़ा। प्रस्तुत शोध-प्रबंध में अपेक्षित व्यापक अध्ययन एवं चिन्तन-मनन का परिचय नहीं मिलता; यह कोई समीक्षात्मक ग्रंथ न रहकर या तो परिचयात्मक ग्रंथ रहा या संग्रहात्मक ग्रथ। इसमें लेखक को दोषी नहीं ठहराया जा सकता; उसने अपनी क्षमता एवं सामर्थ्य के परे विषय को अत्यन्त विस्तार प्रदान किया। प्रस्तुत शोध-प्रबंध के प्रत्येक अध्याय के विषय पर एक-एक शोध-प्रबंध लिखा जा सकता है।

लेखक का भाषा पर अधिकार है। पुस्तक की भाषा साहित्यिक हिन्दी का रूप प्रस्तुत करती है। हाँ, लंबे वाक्य-गठन के मोह में पड़कर कहीं-कहीं लेखक ने अपनी भाषा-शैली को कृत्रिम रूप प्रदान किया है। इस कारण कई स्थानों पर लेखक का आशय समझने में दुरूहता अनुभव होती है। शोध-प्रबंध की भाषा सरल सहज होनी चाहिए, ताकि आशय सुगमता से समझ में आ जाए। मलयालम शब्दों के उच्चारण को तदनुरूप हिन्दी में प्रस्तुत करने में जिस कठिनाई का सामना करना पड़ता है, उसके उदाहरण इस पुस्तक में अनायास ढूंढे जा सकते हैं।

डा. दामोदर प्रसाद; डा. पी. कृष्णन नायर; डा. गोविन्द शेनाय; डा. शीला—उपन्यास पर भी कुछ केरलीय भाइयों ने शोधकार्य किया है, जिनमें डा. दामोदर प्रसाद तथा डा. पी. कृष्णन नायर का नाम उल्लेखनीय है। डा. दामोदर प्रसाद ने हिन्दी और मलयालम के सामाजिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया। डा. कृष्णन नायर ने 'प्रेमचन्द तथा उनके समकालीन हिन्दी तथा मलयालम के सामाजिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर शोधकार्य संपन्न किया। दोनों शोधकर्ताओं ने हिन्दी तथा मलयालम उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक समस्याओं, रीति-रिवाजों का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है। कथा-साहित्य पर अनुसंधान करने का श्रेय डा. गोविन्द शेनाय तथा डा. शीला को प्राप्त होता है। डा. गोविन्द शेनाय का विषय रहा "वर्तमान हिन्दी तथा मलयालम कथा-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन।" शोधकर्ता ने सन् 1915 से 1950 के बीच 35 वर्षों के भीतर हिन्दी तथा मलयालम कथासाहित्य में जो गतिविधियाँ तथा शिल्पगत वैशिष्ट्य दिखाई दिये, उनका विस्तार पूर्वक परिचय दिया है। इसमें उपन्यास तथा रेखाचित्रों पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है। डा. शीला ने मलयालम के प्रसिद्ध साहित्यकार तकषि शिवशंकर पिल्लै तथा प्रेमचन्द के कथा-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करके अपना शोध-प्रबंध प्रस्तुत किया है। तकषि और प्रेमचंद के कथा-साहित्यों के आदर्शों एवं मान्यताओं में पर्याप्त समानता परिलक्षित होती है। शोध-प्रबंध में इन समानताओं का परिचय दिया गया है।

डा. ईश्वरी; डा. वेल्लायणि अर्जुनन्—भाषाशास्त्रीय एवं समालोचनात्मक क्षेत्र में भी कुछ शोध-कार्य हुए हैं। डा. ईश्वरी ने 'हिन्दी तथा मलयालम की तुलनीय शब्दावली' को शोधविषय बनाया तो डा. वेल्लायणि अर्जुनन् ने 'हिन्दी तथा मलयालम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की समान शब्दावली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन' पर पी-एच. डी. तथा 'दक्षिण भारतीय भाषाओं पर हिन्दी शब्दावली का प्रभाव' पर डी. लिट् की उपाधि प्राप्त की। ये दोनों शोध-प्रबंध अपने क्षेत्र में अद्वितीय हैं। ये दोनों प्रकाशनाधीन हैं।

डा. रामन् एलेडम : हिन्दी तथा मलयालम में साहित्य-समीक्षा—एक तुलनात्मक अध्ययन—डा. रामन एलेडम् ने हिन्दी तथा मलयालम में साहित्य समीक्षा—एक तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध-कार्य किया। डा. एलेडम् ने हिन्दी तथा मलयालम के साहित्यों के समीक्षात्मक ग्रंथों, उनके लेखकों तथा उनके सिद्धान्तों का सम्यक् विवेचन प्रस्तुत किया है। इस शोध-प्रबंध में साहित्य-समीक्षा के क्षेत्र में ख्याति प्राप्त आचार्यों के कृतित्व पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला गया है। लेखक ने दोनों साहित्याचार्यों के विचारों, मान्यताओं में अद्भुत एकता का दर्शन किया है और उसका कारण ढूंढ़ते हुए बताया है कि दोनों की उत्सभूमि संस्कृत का विशाल वाङ्मय रहा। प्रस्तुत शोध-प्रबंध चार खंडों में विभाजित है। सन् 1870 से 1950 तक के दोनों साहित्यों में उपलब्ध समीक्षा-प्रणालियों का तुलनात्मक अध्ययन शोध-प्रबंध की सीमा में आता है। हिन्दी में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और मलयालम में केरलवर्मा वलिय कोयित्तम्पुरान आधुनिक समीक्षा के जन्मदाता माने जाते हैं। हिन्दी को रीतिकाल से छुटकारा मिला तो मलयालम को मणिप्रवाल से। इस प्रकार दोनों साहित्य नयी स्फूर्ति के साथ समृद्ध होने लगे। लेखक सन् 1870 को आधुनिक समीक्षापद्धति का प्रारंभकाल मानता है। प्रत्येक युग के तीन-तीन प्रमुख आलोचकों की समीक्षात्मक प्रवृत्तियों का उल्लेख करने के बाद उस युग की दोनों साहित्यों की समानताओं के दिग्दर्शन का क्रम रखा गया है। प्रत्येक समीक्षक के काव्यहेतु, काव्यात्मा, काव्य की परिभाषा और काव्य-प्रयोजन के संबंध में मंतव्यों का विवेचन करते हुए उनके समीक्षा-कार्य की तुलना प्रस्तुत की गयी है। 'आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम के समीक्षासाहित्य की पृष्ठभूमि' शीर्षक प्रथम खंड के प्रथम अध्याय में संस्कृत के आचार्य मम्मट की काव्य संबंधी समन्वयात्मक दृष्टि का विवेचन करते हुए यह स्थापना की गयी है कि मम्मट का प्रभाव दोनों साहित्यों पर समान रूप से पड़ा है। केरल पाणिनि ए. आर. राजराजवर्मा, आचार्य शुक्ल, साहित्य पंचानन पी. के. नारायण पिल्लै, नंद दुलारे वाजपेयी, जोसफ मुंडश्शेरी, महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि विद्वान समीक्षकों की देन पर विस्तृत एवं तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस प्रकार यह शोध-प्रबंध पर्याप्त अध्ययन एवं चिन्तन का फल है और यह शोध-प्रबंध दोनों भाषाओं को परस्पर बांधने का एक सेतु है। "काव्य का विषय मानव है और आलोचना का विषय काव्य है। अतः आलोचना मनुष्य के काव्यबिंबित स्वरूप का अध्ययन प्रस्तुत करनेवाली साहित्यिक प्रक्रिया है। इसलिए समीक्षा के मानवमूल्यों को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए।" लेखक का उक्त निष्कर्ष इस शोध-प्रबंध की सार्थकता की ओर संकेत करता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निष्कर्ष—हिन्दी तथा मलयालम की साहित्यिक विधाओं का तुलनात्मक शोधकार्य बड़ी मात्रा में हुआ है और यह कार्य भारत की भावात्मक एकता को सुदृढ़ करने में अत्यन्त सहायक सिद्ध होगा। अतः तुलनात्मक अध्ययन की ओर अधिकाधिक शोधार्थियों का ध्यान आकृष्ट किया जाना चाहिए। अबतक जो शोधकार्य इस दिशा में हुए हैं वे मुख्यतः काव्य से संबंधित हैं। कथा, उपन्यास, नाटक, आलोचना, निबंध साहित्यों के क्षेत्र में अब तक अल्पमात्रा में ही कार्य हुआ है। अतः इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

ऊपर जो तुलनात्मक शोधपरक अध्ययन की ओर संकेत किया गया है, उससे यह विदित होगा कि शोधार्थियों ने जो विषय चुने हैं, वे या तो मामूली विषय हैं या फिर ऐसे विस्तृत विषय हैं जिनपर असंख्य शोधकार्य केलिए गुंजाइश है। शोध के क्षेत्र में कुछ नये तत्वों, प्रवृत्तियों को उजागर करने की ओर शोधार्थियों को आकर्षित करना होगा। वैसे ही पूरे के पूरे हिन्दी तथा मलयालम के काव्य, कथा, उपन्यास या नाटक साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन अपनी विषयसीमा के विस्तार के कारण न्यायसंगत नहीं हो सकता। शोधार्थी अपने विषय के साथ पूरा न्याय नहीं कर पाएँगे। फलतः केवल परिचयात्मक प्रबंध ही प्रस्तुत कर पाएँगे। इससे शोध का स्तर गिर जाने की बड़ी संभावना है। इसलिए शोध-पंजीकरण-समिति को चाहिए कि वह पहले से कुछ ऐसे शोध विषयों की एक लंबी सूची तैयार करे और शोधार्थियों को उनमें से किसी विषय को चुन लेने की स्वतंत्रता दे। विषय की सूची भी कुछ ऐसी हो जिसमें पर्याप्त सीमित क्षेत्र से संबंधित विषयों को स्थान दिया हो। ऐसा करने से शोधकर्ता अधिक गहराई में जा सकेंगे और ठोस सामग्री प्रस्तुत कर सकेंगे। तुलनात्मक अध्ययन में बहुधा देखा गया है कि दो भाषाओं के कवियों, साहित्यकारों या प्रवृत्तियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत होता आ रहा है। यह तो कोई तुलनात्मक अध्ययन नहीं है। तुलनात्मक अध्ययन में शोधकर्ता को चाहिए कि वे अपने विषय से संबंधित साहित्यकारों या प्रवृत्तियों में साम्य-वैषम्य पर अधिक ध्यान दें और ऐसे पक्षों को स्पष्ट करने का प्रयास करें। तभी तुलनात्मक अध्ययन सार्थक होगा। अन्यथा तुलनात्मक अध्ययन मात्र उपहास्य वस्तु रह जाएगा। अबतक लिखे गये शोध-प्रबंधों में एक-दो ही एसे होंगे जो शुद्ध तुलनात्मक अध्ययन की कोटि में आ सकेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विविधा

यहाँ हम साहित्य से संबंधित पूर्वोक्त विधाओं को छोड़ शेष विधाओं पर विचार करेंगे। हिन्दी स्वबोधिनी, कोषग्रंथ, व्याकरण संबंधी ग्रंथ, बालकोपयोगी जीवनियाँ, पाठय पुस्तकें, सहायक-ग्रंथ आदि इस अध्याय में रख सकेंगे। ये सब साहित्य के अभिन्न अंग हैं, और उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

हिन्दी स्वबोधिनी—पहले-पहल जब हिन्दी का प्रचार केरल में होने लगा था, तब सुयोग्य अध्यापकों की छत्रछाया में हिन्दी सीखने का सौभाग्य बहुत कम लोगों को प्राप्त हुआ था। बात यह थी कि तब हिन्दी सिखाने की योग्यता प्राप्त अध्यापक ही अल्प मात्रा में थे और वे केरल भर में व्याप्त उत्साही विद्यार्थियों को हिन्दी सिखा जाएँ, यह असंभव था। अतः इन स्वबोधिनियों की उपयोगिता और महत्ता बढ़ गयी। वे एक प्रकार से हिन्दी का सामान्य ज्ञान प्राप्त करने का साधन थीं। अतः हिन्दी स्वबोधिनियों की रचना की ओर कई हिन्दी विद्वानों का ध्यान गया और एक-से-एक सुन्दर उपयोगी पुस्तक प्रकाश में आयी। इन स्वबोधिनियों ने मलयालम के माध्यम से हिन्दी का ज्ञान कराने का प्रयत्न किया। केरल में हिन्दी सिखाने के उद्देश्य से लिखी गयी प्रथम स्वबोधिनी केरल के प्रथम हिन्दी प्रचारक-बंधु प्रो. चन्द्रहासन तथा प्रो. पी. के. केशवन नायर विरचित हिन्दी मलयालम स्वबोधिनी थी, जो दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास की तरफ से प्रकाशित हुई। यह स्वबोधिनी बहुत-कुछ वैज्ञानिक ढंग से लिखी गयी थी और हिन्दी-प्रेमियों में इसकी बड़ी धूम मच गयी थी। इस पुस्तक की हजारों प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक गयीं। इससे उत्साहित एवं प्रेरित हो उपर्युक्त लेखकों ने 'हिन्दी मलयालम अनुवादमाला' का भी निर्माण किया। पी. के. केशवन नायर तथा चन्द्रहासन की स्वबोधिनी के उपरांत तिरुवितांकूर हिन्दी प्रचार सभा के कर्मठ कार्यकर्त्ता विद्वान के. वासुदेवन पिल्लै ने अपनी स्वबोधिनी तैयार की और यह स्वबोधिनी पाठ-चयन, शब्द-चयन आदि की दृष्टि से प्रथम स्वबोधिनी से सरल एवं सरस थी। इसलिए यह अत्यन्त जनप्रिय बन गयी। केरल के सैकड़ों हिन्दी-प्रेमियों ने इसे अपना मार्गदर्शक मान लिया और इसके द्वारा हिन्दी का सामान्य ज्ञान प्राप्त किया। उपर्युक्त स्वबोधिनियों की माँग एवं प्रचार को देखकर व्यावसायिक लाभ के मोह में पड़कर कई प्रकाशकों ने कई स्वबोधिनियाँ तैयार करवायीं और प्रकाशित कीं। वर्षा के कुकुरमुत्तों के समान ये आयीं और चली भी गयीं। व्यावसायिक एषणा से प्रेरित ये स्वबोधिनियाँ जनता को संतुष्ट नहीं कर सकीं और उनकी अकालमृत्यु भी सुनिश्चित थीं। किसी ने हिन्दी स्वयंशिक्षक नाम दिया तो किसी का नाम हिन्दी महोपाध्याय या हिन्दुस्तानी बोधिनी या कुछ और ही। डा. विश्वनाथ अय्यर ने 'स्वतंत्र हिन्दी बोधिनी' लिखी थी, जिसकी कई

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रतियां बिक गयी हैं। ए. एन. राघवन नायर ने भी 'हिन्दुस्तानी बाल बोधिनी' के नाम से एक सहायक पुस्तक तैयार की थी, जिसमें मलयालम लिपि के माध्यम से हिन्दी का प्रारंभिक ज्ञान कराने का प्रयत्न था। डा. पी. कृष्णन नायर ने त्रिभाषा स्वबोधिनी' 'तैयार की जिसमें यह बराबर ध्यान रखा गया कि हिन्दी, मलयालम या अंग्रेजी में से किसी एक भाषा का जानकार व्यक्ति अन्य दोनों भाषाएँ सीख सके।

उपर्युक्त जितनी भी स्वबोधिनियाँ हैं, उन सब में मलयालम के माध्यम से हिन्दी सिखाने की पद्धति अपनायी गयी थी। इन सब में एक विचित्रता भी दर्शनीय है। सब का ध्येय हिन्दुस्तानी सिखाने का था, शुद्ध हिन्दी का नहीं था। इसलिए इनमें प्रयुक्त अस्सी प्रतिशत शब्द अरबी-फारसी के थे। इनमें प्रयुक्त शब्दों की एक लंबी तालिका बनायी जा सकती है, जैसे उस्ताद, लड़का, जमीन, औरत, आदमी, किताब, खत, कलम, मेहनत, होशियार, महीना, साल, हफ्ता आदि। इसका नतीजा ही समझिए केरल के सामान्य हिन्दी शिक्षित लोग आज भी इसी हिन्दुस्तानी शैली का प्रयोग करते हैं। यहाँ तक कि उच्च शिक्षा प्राप्त प्राध्यापकों, रीडरों, प्रोफसरों की भाषा में भी अनजाने ही अरबी-फारसी के शब्द अपना रोब दिखाते हैं। इसका पूरा दोष इन स्वबोधिनियों पर मढ़ा नहीं जा सकता। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की प्रकाशित पुस्तकों, पाठ्यक्रमों का भी इसमें हाथ रहा। सभा एक प्रकार से हिन्दुस्तानी का प्रचार कर रही थी और आज भी करती आ रही है। उसके प्रकाशनों तथा पाठ्यक्रमों में निर्धारित कुछ पुस्तकें जैसे रामचर्चा, हजरत मोहम्मद, अस्सी दिन में दुनिया की सैर, रानी लक्ष्मी बाई, बच्चों की किताब, पहली, दूसरी किताब आदि प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत की जा सकती हैं।

हिन्दी स्वबोधिनियों के उपरांत हिन्दी-व्याकरण या हिन्दी-रचना की पुस्तकें आती हैं। केरल में हिन्दी मलयालम के माध्यम से अनुवाद-प्रणाली में सिखायी जाती थी। इस कारण कई मलयालम-भाषी हिन्दी-अध्यापकों ने मलयालम माध्यम से कई व्याकरण-ग्रंथों की रचना की। किसी का नाम हिन्दी व्याकरण था तो किसी का हिन्दी रचना। इन व्याकरण ग्रंथों के अंत में एकाध छोटे-छोटे निबंध भी रखे जाते थे। एन. पी. कृष्ण पिल्लै का हिन्दी रचना बोध इस दिशा में उल्लेखनीय रचना है। इसमें विद्यार्थियों के लाभार्थ कई सामग्री प्रस्तुत है।

कालेजी स्तर पर हिन्दी के पठन-पाठन के प्रचार के साथ ही हिन्दी के अपेक्षाकृत उच्चस्तरीय व्याकरण ग्रंथों, रचनाओं, निबंध-संग्रहों का प्रणयन भी आरंभ हुआ। ऐसे ग्रंथों में प्रोफसर चन्द्रहासन् कृत व्याकरण तत्व प्रवेश, डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै कृत 'सरल हिन्दी व्याकरण एवं रचना' तथा 'हिन्दी मलयालम तुलनात्मक व्याकरण' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। प्रोफसर चन्द्रहासन ने बड़ी सरल भाषा-शैली में हिन्दी के व्याकरणिक नियमों को समझाने का प्रयत्न किया है। डा. कुट्टन पिल्लै ने अपनी पुस्तक में विद्यार्थियों को दृष्टि में रखते हुए अत्यन्त सरल भाषा-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शैली में व्याकरण के सभी अंगों को समझाने के साथ ही साथ अनुवाद, पत्र-लेखन, निबंध आदि का व्यावहारिक ज्ञान कराते हुए उदाहरण भी प्रस्तुत किये हैं। छात्रों का जैसा स्तर होता है, वैसा ही सरल विवेचन भी हुआ है। इस प्रसंग में डा. कुट्टन पिल्लै कृत हिन्दी मलयालम तुलनात्मक व्याकरण (सन् 1959, किताब महल प्रकाशन) विशेष महत्वपूर्ण है। यह पुस्तक उस समय लिखी थी जिस समय तुलनात्मक व्याकरण संबंधी कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं थी। हिन्दी में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को हिन्दी तथा मलयालम के व्याकरणों के तुलनात्मक अध्ययन केलिए कुछ सामग्री प्रस्तुत करने के अतिरिक्त व्याकरण के अंग-प्रत्यंगों पर व्याख्या या विवेचना करना लेखक का उद्देश्य नहीं रहा। फिर भी हिन्दी तथा मलयालय के स्वरोच्चारण की तुलना, दोनों भाषाओं के व्यंजन, शब्द-समूह आदि के साम्य-वैषम्य का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया गया है। दोनों भाषाओं के समानार्थी-भिन्नार्थी शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों के भी उदाहरण दिये गये हैं। पुस्तक में मलयालम के उदाहरण देवनागरी लिपि में प्रस्तुत हैं। देवनागरी लिपि में मलयालम के कुछ विशिष्ट वर्णों के प्रस्तुतीकरण में जो संभावित कठिनाइयाँ हैं, वे यहाँ दिखाई देती हैं। यह पुस्तक भावी तुलनात्मक अध्ययन केलिए मार्गदर्शक सिद्ध होगी।

कालेजी स्तर के निबंध-लेखन का कार्य कई उत्साही विद्वानों ने किया है। ऐसे निबंध संग्रहों में निबंध मंजूषा, निबंधोपहार, प्रबंध प्रदीप तथा विद्यार्थी हिन्दी निबंध भाव-विचार तथा शिल्पगत विशेषताओं के कारण यहाँ उल्लेख-योग्य हैं।

डा. चन्द्रशेखरन नायर : निबंध मंजूषा—'निबंध मंजूषा' केरल के उत्साही एवं दीर्घकालीन अनुभवी प्राध्यापक डा. चन्द्रशेखरन नायर के बीस निबंधों का एक सुन्दर एवं उपयोगी संकलन है, जिसमें बी. ए. स्तर के छात्रों केलिए उपयोगी विभिन्न विषयों का समाहार हुआ है। अधिकतर निबंध छात्रों के मानसिक एवं बौद्धिक स्तर को दृष्टि में रखकर लिखे गये हैं और लेखक की दृष्टि अधिकतर समसामयिक विषयों पर केन्द्रित रही। विषयों की दृष्टि से इस संग्रह का साहित्यिक महत्व भी कम नहीं है। प्रत्येक निबंध अपनी पूर्णता लिए हुए है। विषय प्रतिपादन की सरस एवं सुगम शैली तथा सम्यक सुचिन्तित विचारों से युक्त यह पुस्तक एक स्तुत्य एवं महान प्रयास है। संकलिन निबंधों में अनेकों का उपयोग हिन्दी क्षेत्र में संकलित साहित्यिक ग्रंथों में भी हो पाया है, जो प्रस्तुत निबंधों के महत्व को उजाकर कर देता है।

डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर : निबंधोपहार—डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर कृत 'निबंधोपहार' भी कालेजी स्तर को दृष्टि में रखकर तैयार किया गया है। इसमें विविध क्षेत्र से गृहीत विविध स्तर के निबंध हैं। भाषा सरल एवं मुहावरेदार है। विभिन्न परीक्षाओं के छात्र इससे लाभान्वित हो सकते हैं।

पं. नारायणदेव : हिन्दी प्रबोध—केरल के पुराने अनुभवी प्रचारक पं. नारायण देव ने छात्रों को हिन्दी सिखाने तथा ललित विषयों पर स्वतंत्र निबंध लिखने का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभ्यास कराने के उद्देश्य से 'हिन्दी प्रबोध' की रचना की है। इसमें केरल से संबंधित कई छोटी कथाएँ भी प्रस्तुत हैं।

डा. पी. कृष्णन नायर : हिन्दी-निबंध मालिका—डा. कृष्णन नायर ने कालेजी स्तर के विद्यार्थियों को दृष्टि में रखकर अपनी यह पुस्तक लिखी है। इस पुस्तक में ऐसे निबंध स्थान पा सके हैं, जो बहुधा परीक्षाओं में पूछे गये हैं, या जिनके परीक्षा में आने की संभावना है। अधिकतर निबंध सामयिक विषयों पर हैं और इन निबंधों की प्रतिपादन-शैली सरल एवं सुगम है। विद्यार्थी लोग अवश्य ही इस पुस्तक से लाभान्वित होंगे।

डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै : प्रबंध प्रदीप—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै ने अपने 'प्रबंध प्रदीप' में बी. ए. स्तर के विद्यार्थियों को ध्यान में रखते हुए काव्यशास्त्र, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, व्याकरण के विशिष्ट प्रयोग, अनुवाद, सार-लेखन, निबंध—सामान्य तथा साहित्यिक—सब का समाहार किया है। इसके सोलह प्रकरणों में विश्वविद्यालयों की बी. ए. परीक्षा तथा उसके समकक्ष परीक्षाओं के विद्यार्थियों केलिए तरह-तरह की सामग्री मिलती है, जैसे भारत की वैदेशिक नीति, विश्व-शांति, नारी-धर्म, सहशिक्षा, अनिवार्य सैनिक शिक्षा, अन्नोत्पादन की समस्या, विद्यार्थी और अनुशासन आदि। साहित्यिक निबंधों में हिन्दी काव्य में नारी-भावना, सूफीमत और जायसी, मीरा की काव्य-साधना, प्रयोगवाद आदि सुन्दर हैं। इस कृति से विद्यार्थी वर्ग असंदिग्ध रूप ने लाभान्वित होगा। निबंधों का स्तर ऊँचा और विषय-प्रतिपादन की शैली रोचक एवं मुहावरेदार है। लेखों में साहित्यिक भाषा का अपूर्व निखार है। हिन्दी प्रचारक पत्रिका, दक्षिण भारत, हिन्दी प्रचार समाचार, राष्ट्रवाणी आदि पत्रिकाओं ने बड़ी प्रशंसात्मक समीक्षाएँ प्रस्तुत की हैं। हिन्दी प्रदेश से प्रकाशित हिन्दीतर भाषी के ग्रंथों में इसकी गणना विशेष रूप से की जा सकती है।

विद्यार्थी हिन्दी निबंध—डा. पिल्लै का दूसरा निबंध-संग्रह है 'विद्यार्थी हिन्दी निबंध'। इस पुस्तक में कालेजी स्तर के 27 निबंध हैं, जिनमें से अधिकतर निबंध समसामयिक विषयों पर हैं। भारत में भावात्मक एकता, बांगला देश, भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ, भूमि-परिसीमन, नागरिक के अधिकार और कर्तव्य, प्रजातंत्र, गांधीवाद, भाषावार प्रांतों का विभाजन, वर्तमान शिक्षा-प्रणाली आदि विषयों के पक्ष-विपक्ष में लेखक के तर्क एवं चिन्तन-मनन अत्यन्त गंभीर एवं गहन हैं। प्रवाहमयी भाषा-शैली है। इस निबंध-संग्रह की उपयोगिता एवं विद्यार्थी-वर्ग में इसके प्रचार का इस बात से अनुमान लगाया जा सकता है कि गत चार वर्षों के भीतर इसके चार संस्करण प्रकाशित हुए हैं।

पाठ्य पुस्तकें—त्वरित गति से हिन्दी के पठन-पाठन तथा शिक्षा के अनिवार्य विषय के रूप में हिन्दी के स्कूली-कालेजी शिक्षा में प्रवेश के साथ ही चारों ओर से अनुयोज्य पाठ्य पुस्तकों की माँग आने लगी। पहले-पहल दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सभा के प्रकाशनों से यह कार्य चलाता रहा। लेकिन कालान्तर में यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि केरल के छात्रों की रुचि, संस्कृति एवं सभ्यता के अनुकूल पाठों से युक्त पुस्तकें पाठ्य-क्रमों में स्थान प्राप्त करें। अतः इस कार्य में पहले हिन्दी के अनुभवी कार्यकर्ता प्रोफसर चन्द्रहासन, पी. के. केशवन नायर, एब्रहाम, कुमारन नायर आदि ने पथ-प्रदर्शन किया। उन्होंने छात्रोपयोगी अनेक वाचक स्वयं तैयार किये और दूसरों से तैयार करवाये। आगे चलकर डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, पी. जी. वासुदेव, डॉ. कुट्टन पिल्लै, डॉ. गोविन्द शेनाय आदि ने यह कार्य संभाला। डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर ने 'गद्यांजलि' शीर्षक गद्य-संग्रह तैयार किया तो पी. जी. वासुदेव ने 'मंजरिका' शीर्षक से प्राचीन तथा नवीन हिन्दी कवियों का काव्य-संग्रह बनाया। डॉ. कुट्टन पिल्लै ने शालोपयोगी छात्रों केलिए राजभाषाप्रसून, प्रभात रीडर भाग 1 व 2 तथा विश्वविद्यालय स्तर को दृष्टि में रखते हुए 'गद्य चन्द्रिका' तथा 'काव्यांजलि' का संपादन किया।

आज अनेक प्राध्यापकों, शिक्षकों का ध्यान पाठ्य पुस्तकों के संपादन की ओर केन्द्रित है। पर पुस्तकों की अनुपलब्धि के कारण सब का सही विवरण नहीं दिया जा रहा है।

सहायक ग्रंथ—हिन्दी के प्रचार-प्रसार के कारण बहुत से छात्र स्वाध्याय से भी नाना परीक्षाएँ देने लग गये हैं। अतः विषय को समझने केलिए सहायक ग्रंथों की आवश्यकता हुई। पहले सहायक ग्रंथ प्रस्तुत करने का यह कार्य उत्तर भारत के प्रकाशक संभालने लगे और कई वर्षों तक इस क्षेत्र में हिन्दी पुस्तक भण्डार, लखनऊ का एकछत्र शासन था। पर धीरे-धीरे यह वातावरण परिवर्तित होने लगा। केरल के प्राध्यापकों, हिन्दी अध्यापकों ने यह कार्य संभालने का आरंभ किया। परीक्षोपयोगी सहायक ग्रंथों की रचना में एन. ई. मुत्तुस्वामी अय्यर ने खूब कार्य किया। एच. बालसुब्रह्मण्यम्, डा. एच. परमेश्वरन्, डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, डॉ. दामोदर प्रसाद आदि ने विशिष्ट कृतियों के आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किये।

डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर—का मधुमंजरी का आलोचनात्मक अध्ययन एक सुन्दर एवं उपयोगी सहायक पुस्तक है, जिसमें लेखक ने प्रत्येक कहानी को भूमिका, कथांश एवं आलोचना-तीन भागों में विभक्त कर दिया है। भाषा मुहावरेदार है। उनकी कृति 'सेवासदन की समीक्षा' बी. ए. स्तर के छात्रों के उपयोगार्थ रची गयी है।

डा. कुट्टन पिल्लै—गत पन्द्रह वर्षों से उच्च स्तरीय कृतियों के आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते आ रहे हैं। दर्जनों गद्य-संग्रहों, पद्य-संग्रहों, नाटकों, उपन्यासों के समीक्षात्मक अध्ययन उनकी लेखनी से निसृत हैं। इन सहायक ग्रंथों में भी लेखक का समीक्षक रूप उभर आया है। प्रेमचंद कृत 'निर्मला' एवं 'प्रतिज्ञा' की समीक्षाएँ,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपेन्द्रनाथ अश्क कृत 'चेतन' उपन्यास की समीक्षा तथा भगवतीप्रसाद वाजपेयी के 'अधिकार के प्रश्न' की समीक्षा, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास-प्रश्नोत्तरी' आदि विशेष रूप से प्रशंसनीय हैं। लेखक ने लंबी भूमिका के साथ प्रत्येक पुस्तक की विभिन्न तत्वों पर समीक्षा प्रस्तुत की है। विद्यार्थियों ने इन समीक्षात्मक अध्ययनों से पर्याप्त लाभ उठाया है। डा. सुनीता का 'द्वापर एक विश्लेषण' भी पर्याप्त उपयोगी रचना है। इसमें द्वापर की विषयगत एवं शिल्पगत विशेषताएँ प्रकाश में लायी गयी हैं।

पं. नारायण देव—ने 'आँसू' काव्य पर एक सुन्दर व्याख्यात्मक सहायक ग्रंथ लिखा था। केरल विश्वविद्यालय की विद्वान परीक्षा के पाठ्यक्रम में 'आँसू' निर्धारित हुआ तो विद्यार्थियों को यह काव्य कठिन-सा जान पड़ा। पं. नारायण देव ने प्रत्येक छन्द का पांडित्यपूर्ण ढंग से विश्लेषण किया, जिसे देखकर छायावादी स्वच्छन्द शैली एवं प्रतीक-योजना को हृदयंगम करने तथा पकड़ पाने की उनकी क्षमता का परिचय मिलता है।

डा. दामोदर प्रसाद—की 'सेवासदन समीक्षा' भी उल्लेखनीय है। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक-परिचय, कथावस्तु, चरित्र-चित्रण आदि नाना शीर्षकों में समीक्षा प्रस्तुत की गयी है। समीक्षा बिलकुल परीक्षोपयोगी दृष्टि से लिखी गयी है। इसलिए किसी समस्या पर गहराई से विचार नहीं किया गया है। भाषा सरल एवं वाक्य आकार में छोटे-छोटे हैं। केवल पैंतीस पृष्ठों की यह पुस्तक मात्र विद्यार्थियों केलिए उपयोगी है।

बालकोपयोगी साहित्य—इस प्रसंग में हम उन्हीं रचनाओं पर विचार करेंगे जो मात्र किशोरों केलिए लिखी गयी हैं। केरल के लेखकों ने किशोरों के चरित्र-निर्माण में सहायक कई जीवनियाँ तथा शिक्षात्मक और नीति परक कहानियाँ लिखी हैं। सर्वप्रथम लघुजीवनियों पर विचार करेंगे।

पी. जी. वासुदेव : बच्चों के राम—पी. जी. वासुदेव ने बालकों केलिए प्रेरणादायक कई महापुरुषों तथा संतों का जीवन-चरित्र अत्यन्त संक्षेप में प्रस्तुत किया है। केवल बत्तीस पृष्ठों के 'बच्चों के श्रीराम' में राम के जन्म से लेकर राजतिलक तक की कहानी राम ही सब के आगे थे, राक्षस कांपने लगे, आसानी से तोड़ दिया, राम ने सीता का हाथ ग्रहण किया, सारी अयोध्या रो पड़ी, प्राण-पखेरू उड़ गये, पादुका शासन करती है, खून से लथपथ शूर्पणखा, रावण को बड़ी निराशा हुई, सुग्रीव को राज्य मिला, श्रीराम विजयी हुए, वापस अयोध्या में, इन उपशीर्षकों में बतायी गयी है। स्पष्ट है, उपशीर्षक और भी सुन्दर बनाये जा सकते थे। कहीं-कहीं वाक्य छोटे-छोटे और सरल हैं तो कहीं-कहीं लंबे-लंबे और दुरूह हैं। अधिक सावधानी रखते तो पुस्तक की उपयोगिता और बढ़ जाती थी।

बच्चों के श्रीशंकर—'बच्चों के श्रीशंकर' इसी सिलसिले में पी. जी. वासुदेव की दूसरी रचना है। 36 पृष्ठों की यह लघु रचना आदि शंकर के जन्म से लेकर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शरीर-त्याग तक की कथा प्रस्तुत करती है। इसमें कुछ भ्रामक बातों को भी स्थान मिला है। सबसे विचित्र बात है कि लेखक ने शंकर का जन्म ईसा पूर्व पाँच सौ वर्ष पहले और मृत्यु कांचीपुरम में ई. पू. 477 बतायी है। वास्तविकता यह है कि शंकर का जन्म वि. संवत् 845 के आसपास वैशाख शुक्ल पंचमी को हुआ था और मृत्यु बत्तीस साल की अवस्था में वि. सं. 877 के एक शुभ मुहूर्त में केदार क्षेत्र की ओर जाते हुए हुई थी। वैसे ही लेखक ने शंकर की माता का नाम उमादेवी लिखा है, जो आर्याम्मा सुभद्रा होना चाहिए था। पुस्तक की शैली सरल एवं बालकोपयोगी है।

बच्चों के बुद्ध–बच्चों के बुद्ध तीसरी माला है। इसमें बुद्धदेव की संपूर्ण कथा 10 अध्यायों में लिखी गयी है। बुद्धदेव के जन्म, बचपन, दयालु स्वभाव, विवाह, सांसारिक दुखों का परिचय, महाभिनिष्क्रमण, सुख की खोज, नये धर्म का प्रचार, शरीर-त्याग सब का वर्णन करने के बाद बुद्ध के उपदेश को 'बुद्ध ने कहा' शीर्षक में प्रस्तुत किया है। पुस्तक ज्ञानवर्द्धक, सरल एवं रसात्मक ढंग से लिखी गयी है। बुद्ध का जीवन अवश्य ही बालकों केलिए प्रेरणादायक सिद्ध होगा।

बच्चों के श्री कुंचन—'बच्चों के श्री कुंचन' वासुदेव की इसी कड़ी की एक और रचना है। मलयालम साहित्य में तुळ्ळल नृत्य-विधा के जनक तथा हास्य-व्यंग्य के प्रबल कवि महाकवि कुंचन नंपियार के जीवन एवं साहित्य पर प्रकाश डालने वाली इस पुस्तक में कुंचन के अतिरिक्त ओट्टन, शीतकन और परयन् आदि तुळ्ळल के नाना रूपों का भी इसमें संक्षिप्त विवरण दिया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में मुद्रण की अशुद्धियाँ इधर-उधर पायी जाती हैं। फिर भी मलयालम की साहित्य-विधाओं का परिचय कराने वाली यह पहली कृति है, इसलिए इसका और भी महत्व बढ़ जाता है।

बच्चों के श्री नारायण—बत्तीस पृष्ठों वाली लघुकृति बच्चों के श्री नारायण भी वासुदेव जी की तूलिका की देन है। केरल में ईज़वा जाति के पुनरुद्धारक श्री नारायण गुरु का बहुत बड़ा स्थान रहा। मलयालम के महाकवि कुमारन आशान के वे प्रेरणास्रोत रहे। ऐसे श्री नारायण गुरु के जीवन से बच्चों का परिचय कराकर वासुदेवजी ने बड़ा ही अच्छा कार्य किया। पिछड़ी हुई जाति को संगठित करने, उसे उन्नति पर लाने का प्रयत्न करके श्रीनारायण गुरु आज केरल में पर्याप्त प्रसिद्ध है। एक समाज-सुधारक के रूप में उनकी महती सेवा रही। अतः यह पुस्तक बच्चों को प्रेरणादायक है।

बच्चों के श्री चट्टम्पी—'बच्चों के श्री चट्टम्पी' के लेखक भी पी. जी. वासुदेव हैं। केरल के एक संत चट्टम्पी की जीवन-गाथा प्रथम बार हिन्दी में आयी है। इसमें यह दिखाया गया है कि एक निर्धन परिवार में जन्मे कुंजन पिल्लै अपनी अनवरत साधना के बल पर कैसे एक संत बन सके हैं। इस पुस्तक की शैली भी सरल एवं सहज है। चट्टम्पी का जीवन बालकों को निश्चय ही रसात्मक लगेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आदर्श बालक—पी. जी. वासुदेव ने आदर्श बालक-तीन भागों में भारत के महापुरुष गांधी, जवाहरलाल, वल्लभ भाई पटेल, महादेव रानडे, बालगंगाधर तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सर आशुतोष मुखर्जी तथा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के बाल्य जीवन और मार्मिक घटनाओं से अवगत कराया है। ये सारे महापुरुष अपने-अपने क्षेत्र के नेता रहे। इन नेताओं के बाल्य-जीवन की घटनाएँ रोचक एवं मज़ेदार हैं। लेखक ने बालकों के स्तर को दृष्टि में रखकर तीनों भाग लिखे हैं।

महान पुरुष—महान पुरुष के तीन भाग भी शिक्षाप्रद, रोचक एवं विद्यार्थियों की रुचि के अनुकूल हैं। वासुदेव जी की बाल कहानियों के भी तीन भाग प्रकाशित हुए थे। उनमें आयी कथाएँ कोई न कोई शिक्षा देती हैं। अतः स्पष्ट है, लेखक पी. जी. बालकों के उज्ज्वल भविष्य केलिए चिन्तित हैं और वे जानते हैं कि वे भावी भारत के कर्णधार हैं। इसलिए उनका चरित्र ही राष्ट्रीय चरित्र है। अतः उन्हें बाल्य से ही अच्छे कार्यों केलिए प्रेरित करना भावी राष्ट्र की सुस्थिरता केलिए आवश्यक एवं उपादेय है। इस प्रकार पी. जी. वासुदेव की बालकोपयोगी रचनाओं के पीछे सुचिन्तित लक्ष्य है।

आर. जनार्दन पिल्लै : जवाहरलाल नेहरू—आर. जनार्दन पिल्लै ने पंडित जवाहरलाल नेहरू की संक्षिप्त जीवनी हिन्दी में प्रस्तुत की थी। 'मेरी कहानी' को आधार मानकर जवाहर जी के जीवन, वंश-परंपरा आदि का परिचय दिया है तो भारत छोड़ो आन्दोलन, जेलवास, विश्वयुद्ध, शरणार्थी-समस्या आदि विविध स्तर की बातों पर संक्षिप्त विचार प्रस्तुत है। जनार्दन पिल्लै कर्मठ प्रचारक एवं साहित्य-सेवी हैं।

डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर : महाकवि रवीन्द्रनाथ, विज्ञान योगिनी, स्वातितिरुनाल्—डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर ने भी कुछ लघु जीवनियाँ लिखी थीं। उनमें महाकवि रवीन्द्रनाथ, विज्ञानयोगिनी और स्वातितिरुनाल् प्रमुख है। विश्व कवि रवीन्द्र का जन्म, परिवार, उनकी साहित्यिक सेवाएँ आदि पर प्रकाश डाला गया है तो विज्ञान योगिनी में रेडियम् की आविष्कर्ता मेरी क्यूरी के जीवन, सतत अनुसंधान और उसकी सफलता से प्राप्त सम्मान आदि का संक्षेप में जिक्र किया गया है। वैज्ञानिक को लेकर लिखी जानेवाली यह प्रथम पुस्तक है। इसलिए इसका महत्व और भी बढ़ जाता है। डॉ. अय्यर की एक अन्य रचना है होनहार बालक और अन्य कहानियाँ। यह छात्रों, बालकों के मनोरंजनार्थ लिखी गयी है। इसमें संगृहीत प्रत्येक कहानी नीतिपरक एवं शिक्षाप्रद है। भाषा भी अकृत्रिम, सहज एवं सरल है। इसी प्रसंग में उनकी एक और रचना 'हिन्दी के प्रथम गीतकार' भी महत्वपूर्ण है। इसमें मलयालम के महाराजा स्वातितिरुनाल् की जीवनी के साथ ही उनके सैंतीस पदों का संकलन किया गया है। इस प्रकार केरल के महान कवि एवं संगीतज्ञ का यह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जीवन अवश्य ही उपयोगी होगा। केरल के सर्वप्रथम स्वतंत्रता के प्रमुख सेनानी वीर योद्धा वेलुत्तम्पी की जीवनी डॉ. रामन नायर ने प्रस्तुत की है।

डा. दामोदर प्रसाद : स्वतंत्रता के सिपाही—बालकों को कर्तव्य-भावना, देशप्रेम आदि की शिक्षा देने के उद्देश्य से विरचित डॉ. दामोदर प्रसाद की पुस्तक 'स्वतंत्रता के सिपाही' भी इस प्रसंग में उल्लेखनीय है। पुस्तक में झाँसी की रानी, लोकमान्य तिलक, सरदार भगतसिंह, नेताजी बोस, गोखले, महात्मा गांधी, सरदार पटेल तथा जवाहरलाल के कर्ममय जीवन एवं देश प्रेम से प्रेरित हो किये गये अनुष्ठानों का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। प्रत्येक पाठ के पहले उनके वाक्य को स्थान दिया गया है, जैसे रानी का नारा था 'लड़ो, स्वतंत्रता ही जीवन है।' तिलक की बुलन्द एवं निर्भीक वाणी थी 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।' इस प्रकार प्रत्येक पाठ के प्रारंभ में पाठ का लक्ष्य-सकेत भी प्रस्तुत है। यह पुस्तक विद्यार्थियों के मन में देशप्रेम की भावना जगाने के साथ ही स्वतंत्रता केलिए मर मिटने का संदेश भी प्रदान करती है। संकलित समस्त जीवनचरित विशेष-विशेष लक्ष्य से प्रेरित हो चुने गये हैं। डॉ. दामोदर प्रसाद की कथनशैली भावुकतापूर्ण एवं आकर्षक है। भाषा मुहावरेदार एवं चुस्त है। लेखक ने आद्यन्त विद्यार्थी की रुचि बनाये रखने का प्रयत्न किया है। इसलिए यह संकलन अवश्य ही अपने लक्ष्य में पूर्ण सफल है।

कुन्नुकुषि कृष्णनकुट्टी : स्वातितिरुनाल्—भास्करन नायर की केरल की महान विभूतियाँ (संतों की जीवनी), कुन्नुक्कुषि कृष्णन कुट्टी की बालकोपयोगी रचनाएँ जैसे कविवर रवीन्द्रनाथ, गौरीशंकर, शकुन्तला नाटक, धनुषयज्ञ और स्वातितिरुनाल्, आदि भी विशेष महत्वपूर्ण हैं। इनमें भी 'स्वातितिरुनाल्' पुस्तक का महत्व इसलिए बढ़ जाता है कि हिन्दी-जगत केलिए बिलकुल अज्ञात मलयालम-भाषी हिन्दी के प्रथम गीतकार 'गर्भ श्रीमान्' महाराजा स्वातितिरुनाल् के जीवन एवं व्यक्तित्व पर तथा संगीत शास्त्र पर उनके असाधारण अधिकार एवं प्रेम का दिग्दर्शन कराने वाली यह सर्वप्रथम कृति है। लेखक ने 'सागर कन्या का संगीत' शीर्षक से केरल के संगीत पर एक संक्षिप्त विवरण भी इसमें भूमिक के रूप में जोड़ दिया है। फिर स्वाति-तिरुनाल के अबतक प्राप्त सैंतीस गीतों का 'स्वातिकृत हिन्दी कीर्तन' शीर्षक से इसमें संकलन हुआ है। लेखक का भाषा पर पूर्ण अधिकार परिलक्षित होता है। पर लंबे वाक्य-विन्यास की ओर लेखक का अतिशय मोह कभी-कभी कथ्य को समझने में व्याघात उत्पन्न करता है। भाषा संस्कृत निष्ठ, आलंकारिक एवं सशक्त है। प्रत्येक भजन के नीचे पाद-टिप्पणियाँ दी गयी होतीं तो इस पुस्तक का और भी महत्व होता था। अवश्य ही हिन्दी क्षेत्र में इस पुस्तक का समादर होना चाहिए।

डा. पी. कृष्णन नायर : श्री नारायण गुरु—डा. कृष्णन नायर ने जीवनी-साहित्य के क्षेत्र में भी अपना योगदान दिया है। उनकी पुस्तक 'श्री नारायण गुरु' केरल के प्रसिद्ध संत एवं समाज-सुधारक श्री नारायण गुरु की संक्षिप्त जीवनी प्रस्तुत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करती है। लेखक ने श्री नारायण गुरु के जन्म, बाल्यकाल, सामाजिक परिस्थितियाँ, समाज-सुधार के क्षेत्र में श्री नारायण गुरु के कार्य—आदि पर प्रकाश डाला है। इस प्रकार यह पुस्तक बालकों केलिए शिक्षाप्रद एवं प्रेरणादायक है। सरल एवं सहज भाषा-शैली में प्रस्तुत पुस्तक रोचक लगती है।

उपर्युक्त जीवनी-साहित्य का अध्ययन करने पर यह विदित होगा कि लेखकों की दृष्टि मुख्यतः बालकों पर केन्द्रित रही और अधिकतर पुस्तकें केरल के महापुरुषों, साहित्यकारों पर हैं। इससे केरलीय संस्कृति और जीवन पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। जीवनी-साहित्य को पी. जी. वासुदेव की देन अवश्य ही मार्के की है।

कोष-ग्रंथ—मलयालम-भाषी हिन्दी-लेखकों का ध्यान कोष-ग्रंथों की रचना की ओर भी केन्द्रित हुआ है। यह कार्य इसलिए महत्वपूर्ण है कि पहले-पहल हिन्दी के प्रेमी पाठकों का मार्ग-दर्शन करने केलिए पर्याप्त योग्य अध्यापकों का अभाव-सा था। उन दिनों हिन्दी प्रेमियों की जिज्ञासा-पूर्ति में सहायक स्वयंशिक्षक और कोष-ग्रंथ ही थे। अतः इस बात से अवगत हो प्रो. चन्द्रहासन तथा पी. के. केशवन नायर के संपादकत्व में एक हिन्दी मलयालम कोष की रचना हुई, जिसे दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ने प्रकाशित किया। यह हिन्दी मलयालम कोष अपने लघु आकार तथा सीमित शब्द-संख्या के कारण केवल हिन्दी के प्रारंभिक विद्यार्थियों केलिए उपयोगी रहा। इसमें हिन्दी शब्दों के अर्थ मलयालम में दिये गये थे। इस कोष के व्यापक प्रचार से प्रेरित हो कई हिन्दी विद्वानों ने कालान्तर में कई हिन्दी मलयालय कोषों का निर्माण किया। ऐसे कोषग्रंथों में डा. रामन नायर के हिन्दी-मलयालय कोष तथा श्रीमती अम्मिणि अम्माल् कृत तथा श्रीराम विलासम प्रेस से प्रकाशित हिन्दी मलयालम व्यावहारिक कोष का अपना स्थान है। दिवाकरन पोट्टी के संपादन में एक हिन्दी मलयालम कोश नेशनल बुकस्टाल, कोट्टयम से प्रकाशित हुआ। किन्तु ये सारे कोष-ग्रंथ काम चलाऊ ढंग के थे। इनमें से किसी में भी कोष-विज्ञान की शास्त्रीय पद्धति का अनुसरण नहीं किया गया था। फिर भी विद्यार्थी-वर्ग केलिए उपयोगी इन कोषों का अपना महत्व है।

डा. कृष्णन नायर—श्री पी. कृष्णन नायर ने इस क्षेत्र में स्तुत्य प्रयास किया है। उन्होंने त्रिभाषा कोष (मलयालम हिन्दी अंग्रेजी कोष), त्रिभाषा कोष (हिन्दी-मलयालम-अंग्रेजी) हिन्दी स्वबोधिनी तथा लोकोक्ति कोष की रचना की। इनमें से प्रथम त्रिभाषा कोष प्रकाशित है और दूसरा अब प्रकाशनाधीन है, जो निकट भविष्य में बाहर आएगा। श्री कृष्णन नायर का 'लोकोक्ति कोष' अवश्य ही स्तुत्य प्रयास है और इसमें हिन्दी तथा मलयालम में प्राप्त समानार्थी लोकोक्तियों का संग्रह किया गया है, जो संभवतः केरल में उस ढंग का प्रथम प्रयास है। आकार में छोटी होने पर भी यह रचना अपना विशेष महत्व रखती है। भावी कोषकारों केलिए यह प्रेरणादायक सिद्ध होगी।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभयदेव—उपर्युक्त कोष-ग्रंथों का अपना महत्व है ही। फिर भी उनमें शब्द-संख्या बहुत कम ही दी गयी है। अतः उनका उपयोग केवल विद्यार्थी-वर्ग तक सीमित है। उपर्युक्त कोषों की इस कमी को देखकर अभयदेव ने एक बृहत् हिन्दी मलयालम कोष की रचना की। इसमें लगभग एक लाख शब्द सम्मिलित हैं और उनके अर्थ मलयालम में दिये हुए हैं। यह कोष विद्वानों तथा विद्यार्थियों को समान रूप से उपयोगी है। अब तक प्रकाशित कोष-ग्रंथों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

डा. विश्वनाथ अय्यर—डा. विश्वनाथ अय्यर ने भी हिन्दी मलयालम कोष की रचना की है और यह कोष पर्याप्त प्रशंसा अर्जित कर सका है। विद्यार्थी-वर्ग ने इसका खूब स्वागत किया है।

पद्मिनी मेनन—केरल की विदुषी लेखिका पद्मिनी मेनन का कोष-ग्रंथ के प्रसंग में स्मरण आता है, जिन्होंने अनवरत परिश्रम, अध्ययन एवं पूरे लगन के साथ 'पुराण संदर्भ कोष' की रचना की है, जो ग्रंथम, कानपुर से सन् 1969 में प्रकाशित भी हुआ है। इस विशालकाय ग्रंथ में भारतीय पुराणों में आयी प्रासंगिक कथाओं, पात्रों-चरित्रों का बड़ा ही प्रामाणिक विवरण दिया गया है। यह अवश्य ही संग्रहणीय है और प्रत्येक पुस्तकालय केलिए शोभा की वस्तु है। उक्त संदर्भ ग्रंथ की रचना करके लेखिका विद्वानों के साधुवाद की पात्री बन गयी है।

डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै—तेलुगु भाषी-हिन्दी विद्वान डा. भीमसेन निर्मल तथा डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै के संयुक्त प्रयास से एक बृहदाकार 'हिन्दी हिन्दी-तेलुगु कोष' का संपादन किया गया है। लगभग एक लाख शब्दों का यह कोष हिन्दी शब्दों का अर्थ हिन्दी तथा तेलुगु दोनों भाषाओं में प्रस्तुत करता है। यह अहिन्दी प्रान्त से निकले किसी भी कोष से आकार एवं गुणात्मक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण एवं अपने ढंग का सर्वोत्तम कोष है। स्कूलों-कालेजों केलिए निर्धारित असंख्य पाठ्य-पुस्तकों तथा अन्य ग्रंथों को दृष्टि में रखकर शब्द-चयन किया गया है और इसमें विद्यार्थियों के लाभार्थ बड़ी मात्रा में प्राचीन हिन्दी के शब्दों का भी समावेश किया गया है।

प्रशिक्षणोपयोगी पाठ्य पुस्तकें—हिन्दी के प्रचार-प्रसार के फलस्वरूप आज लाखों प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता आ पड़ी है। आज देश के कोने-कोने में प्रशिक्षण महाविद्यालय खोले गये हैं, जहाँ हिन्दी प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले हजारों अध्यापक हैं। उनके लिए हिन्दी माध्यम की पाठ्य-पुस्तकों की कमी का अनुभव किया जा रहा है। इस कमी को पूरा करने के उद्देश्य से अनुयोज्य पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण करने केलिए कुछ अनुभवी प्राध्यापक आगे बढ़े। उनमें प्रोफसर लक्ष्मीकुट्टि अम्मा तथा एस. राजप्पन नायर अन्यतम हैं।

प्रो. लक्ष्मी कुट्टि अम्मा—लक्ष्मी कुट्टि अम्मा वर्षों से प्रशिक्षण महाविद्यालयों से संबद्ध रहीं और उन्होंने अपने दीर्घकालीन अनुभव के आधार पर तीन ग्रंथ (1) संपर्क भाषा हिन्दी और शिक्षण, (2) शिक्षा भारती तथा (3) शिक्षा-शिक्षण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिखे। प्रथम पुस्तक में संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का स्थान, उसकी विशेषताओं तथा उसके शिक्षण की पद्धतियों को सरल भाषा में समझाया गया है। 'शिक्षा भारती' पाँच अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में शिक्षा के संबंध में विभिन्न कालों में भारतीय दृष्टिकोण का परिचय दिया गया है। द्वितीय अध्याय 'लोकतंत्र और शिक्षा' से संबंधित है। तृतीय अध्याय में आदर्श शिक्षा के रूप का सम्यक् विचार है। चौथे अध्याय में पाठ की योजना के स्वरूप और अध्यापन में उसकी उपयोगिता पर विचार किया गया है। पंचम अध्याय में आधुनिक शिक्षा प्रणाली में अपनायी जानेवाली विभिन्न पद्धतियों और उनके मनोवैज्ञानिक आधारों पर सविस्तार प्रकाश डाला गया है। लेखिका का भाषा पर अधिकार है और शास्त्रीय विषयों को भी वह सरलता से समझा देने में सफल हुई है। उनकी तीसरी पुस्तक 'शिक्षा-शिक्षण' पर भारत सरकार का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।

शिक्षा-शिक्षण—शिक्षा-शिक्षण प्रो. लक्ष्मीकुट्टि अम्मा की तीसरी पुस्तक है। यह पुस्तक दो खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड शिक्षा से संबंधित ग्यारह अध्यायों का है। जीवनदर्शन और शिक्षा, शिक्षा की परिभाषा, शिक्षा का रूप, शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षा और भारतीय दृष्टिकोण, लोकतंत्र और शिक्षा, अंतर्राष्ट्रीयता और शिक्षा, शिक्षा के सहायक साधन, आदर्श शिक्षा, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यक्रम और हिन्दी ये ग्यारह अध्याय हैं। स्पष्ट है लेखिका ने इस खण्ड में शिक्षा संबंधी विभिन्न मान्यताओं तथा आदर्शों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

द्वितीय खण्ड 'शिक्षण' भी ग्यारह अध्यायों में विभक्त है। शिक्षण का स्वरूप तथा सिद्धांत, शिक्षण की कुछ सामान्य विधियाँ, पाठ-योजना—उसका महत्व, प्रश्न व उत्तर का महत्व, आधुनिक-शिक्षा और नवीन प्रवृत्तियाँ, नियोजित शिक्षण, स्वामी विवेकानंद और मानवतावादी शिक्षा, बुनियादी शिक्षा, गुरुकुल शिक्षा, अन्य शिक्षा-प्रणालियाँ, एवं प्रधानाध्यापक—इन ग्यारह शीर्षकों में यह खण्ड शिक्षण संबंधी आदर्शों, प्रणालियों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है।

समग्र रूप में यह पुस्तक हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालयों के छात्रों को दृष्टि में रखकर तैयार की गयी है। लेखिका का ध्यान विभिन्न विषयों का समग्र रूप में परिचय प्रस्तुत करना मात्र रहा है। विभिन्न कालों में शिक्षा के उद्देश्यों का आलोचनात्मक परिचय इस पुस्तक में नहीं मिलता। यही बात 'शिक्षण' संबंधी खण्ड के बारे में भी सही निकलती है। लेखिका ने अपनी तार्किकता के बल पर नीर-क्षीर विवेचन का प्रयास नहीं किया है। बुनियादी शिक्षा को भारतीय संस्कृति के अनुकूल बताकर उसे पूर्णतया अमल में न लाने पर लेखिका ने खेद प्रकट किया है। अगर विचार पूर्वक देखा जाए तो गांधीजी के शिक्षा-संबंधी सिद्धांत कई अंशों में भ्रामक सिद्ध होंगे। दस्तकारी द्वारा शिक्षा, 6 ठे वर्ष शिक्षा का आरंभ आदि कुछ ऐसे सिद्धान्त हैं, जो मनोवैज्ञानिक नहीं ठहराये जा सकते। उनका 'स्वावलंबी शिक्षा सिद्धान्त' भ्रामक सिद्ध

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हुआ है। स्वावलंबी शिक्षा का गांधीजी ने जो भी अर्थ सोचा हो, व्यवहार में वह बहुत ही घातक सिद्ध होगा। पढ़ते समय ही पढ़ाई के खर्च केलिए विद्यार्थी कुछ दस्तकारी के काम भी करें, यही तात्पर्य निकाला जाए तो स्कूल स्कूल न रहकर कारखाना ही बन जाएगा। छठे वर्ष से शिक्षा का आरंभ भी मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक नहीं है। आज बालक की शिक्षा लगभग चौथे वर्ष से आरंभ होती है। गांधीजी के अनुसार अगर छः वर्ष से शिक्षा प्रारंभ की भी जाए तो उसके पहले के दो-तीन वर्ष बालक क्या करेंगे ? दस्तकारी के द्वारा क्या संपूर्ण विषय-ज्ञान कराना संभव है ? ऐसे कई प्रश्न हैं, जिनकी ओर लेखिका का ध्यान नहीं गया है।

इस पुस्तक की उपयोगिता इस बात में है कि इसमें शिक्षा तथा शिक्षण संबंधी कुछ मौलिक सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है, जो छात्राध्यापकों केलिए मार्गदर्शक सिद्ध होगा। जो छात्राध्यापक इन विषयों पर गंभीर अध्ययन करना चाहेंगे, उनके लिए दूसरे ग्रंथों का सहारा लेना होगा। यह पुस्तक मात्र नोटस का काम करेगी जिसके सहारे छात्राध्यापक गहन अध्ययन केलिए आवश्यक ग्रंथ स्वयं तलाश कर सकेंगे।

एस. राजप्पन नायर : राजभाषा शिक्षण—एस. राजप्पन नायर ने 'राजभाषा शिक्षण' तथा 'शिक्षा मनोविज्ञान' नाम से दो ग्रंथों की रचना की। राजप्पन नायर भी प्रशिक्षण महाविद्यालय में वर्षों से प्राध्यापक पद पर कार्यरत हैं। 'राजभाषा शिक्षण' में अहिन्दी प्रदेश के छात्रों को हिन्दी सिखाने की पद्धतियों पर विस्तार से विचार किया गया है। हिन्दी के अध्यापकों की कठिनाइयों पर भी इसमें विचार प्रस्तुत हैं। प्रथम अध्याय राजभाषा-शिक्षण के प्रमुख उद्देश्यों से संबंधित है। द्वितीय अध्याय में हिन्दी शिक्षण की विभिन्न अवस्थाओं पर विचार प्रस्तुत हैं। तृतीय अध्याय में अहिन्दी-भाषी छात्रों की वर्ण संबंधी अशुद्धियों और कारणों पर उदाहरण के साथ प्रकाश डाला गया है। चौथे अध्याय का संबंध कविता की शिक्षा से है। लेखक ने अनेक शिक्षाशास्त्रियों के विचारों का आश्रय लेकर अपने ग्रंथ की रचना की है। लेखक के अपने विचार अपेक्षाकृत कम हैं। समग्र पुस्तक को देखने पर पता चलता है कि लेखक का भाषा पर पूर्ण अधिकार नहीं है। इस कारण कई स्थानों पर उसका विचार स्पष्ट नहीं हो पाया है। लेखक ने 'शिक्षा मनोविज्ञान' पर भी एक अन्य ग्रंथ प्रस्तुत किया है। यह ग्रंथ भी कई अंग्रेजी ग्रंथों के अध्ययन एवं पथ-प्रदर्शन में लिखा गया है।

एम. के. रामन् एषुत्तच्छन् : राजभाषा-शिक्षण—प्रशिक्षण महाविद्यालय, तृशूर के वरिष्ठ प्राध्यापक एम. के. रामन् एषुत्तच्छन् केरल के वातावरण और परिस्थिति को दृष्टि में रखते हुए हिन्दी-शिक्षण के नाना पहलुओं पर विचार करते हुए अपनी पुस्तक 'राजभाषा शिक्षण' की रचना की। लेखक की दृष्टि आलोचनात्मक है और अपने मंतव्यों की स्थापना में उन्होंने कई तर्क प्रस्तुत किये हैं। विभिन्न शिक्षाविधियों

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर विचार करते हुए केरल के हिन्दी छात्रों को द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी सिखाने की सर्वोत्तम विधि निर्धारित की गयी है। साथ ही साहित्य की नाना विधाओं के शिक्षण केलिए अनुयोज्य प्रणालियों को निश्चित किया गया है।

उपयुक्त शिक्षा-संबंधी ग्रंथों का सम्पूर्ण अध्ययन करने के उपरांत हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इन ग्रंथों के लेखकों का संबंध केवल अध्यापकों के साथ रहा है, कक्षा के विद्यार्थियों के साथ नहीं। उनके अधिकतर निष्कर्ष प्रश्नावलियों द्वारा प्राप्त शिक्षकों के उत्तरों पर आधारित हैं। द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी सीखने वाले छात्र अपनी मातृभाषा के प्रभाव से बच नहीं पाते हैं। अतः अध्यापकों को चाहिए कि वे दोनों भाषाओं की वर्तनी संबंधी साम्य-वैषम्य का परिचय करा दें। अभ्यास एवं निरंतर गृहकार्य आदि से तथा अध्यापकों के शुद्ध उच्चारण को सुनकर छात्र बहुत हद तक अपनी अशुद्धियों का सुधार कर सकेंगे। यही नहीं अहिन्दी-भाषी बालकों को हिन्दी सिखाने का तात्पर्य यह कदापि नहीं कि वे योग्य हिन्दी विद्वान बनें, बल्कि इतना मात्र है कि वे अपने विचार-विनिमय केलिए आवश्यक हिन्दी ज्ञान प्राप्त करें। इसलिए उनके लिए निर्धारित पाठय पुस्तकों में कविता की अपेक्षा गद्य को अधिक स्थान दिया जाना चाहिए। कविता के अध्ययन से छात्रों के भाषा-ज्ञान में वृद्धि की संभावना नहीं है। अतः अध्यापन की प्रणालियों पर विचार करने के पूर्व पाठ्य पुस्तक का स्वरूप निर्धारित करना आवश्यक है। उसके लिए आवश्यक शब्दावली निर्धारित की जानी चाहिए। यह कितनी निरर्थक बात है कि स्कूली छात्रों को कबीर जैसे कवियों के दोहे, पद आदि पढ़ाये जाते हैं, जो भावी जीवन में उनके किसी काम के नहीं हैं। अतः शिक्षण-पद्धतियों पर विचार करने के पूर्व छात्रों की आवश्यकता, उसके अनुकूल शब्दावली तथा पाठों का स्वरूप निश्चित करना आवश्यक है। उपर्युक्त लेखकों ने इस पक्ष पर विशेष ध्यान नहीं दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुवाद

हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने के साथ ही साथ समूचे भारतवर्ष में एक भावात्मक क्रांति का जन्म हुआ। अहिन्दी प्रदेश के लोग हिन्दी भाषा सीखने-समझने तथा उसकी विशाल साहित्य संपदा से अपनी मातृभाषा को संपन्न करने की ओर विशेष रुचि एवं तन्मयता का भाव प्रदर्शित करने लगे। फलतः अहिन्दी प्रदेश में बड़ी संख्या में हिन्दी के विद्वान तैयार हुए और उन्होंने हिन्दी के श्रेष्ठ साहित्य को अनुवाद के द्वारा अपनी भाषा में लाने का समारंभ किया। इसी के साथ ही हिन्दी प्रदेश के सहृदयों के मन में भारतीय भाषाओं के उत्तमोत्तम साहित्य से परिचित होने की ललक पैदा हुई, जिस कारण प्रान्तीय भाषाओं के विशिष्ट ग्रंथों के अनुवाद की माँग बढ़ती गयी। इसका परिणाम यह हुआ कि आज विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में हिन्दी की श्रेष्ठ रचनाओं के अनुवाद प्रस्तुत किये जा रहे हैं तो प्रान्तीय भाषा की सुन्दर रचनाओं से राष्ट्रभारती भी अपनी संपन्नता प्रकट करती आ रही है। अनुवाद के द्वारा साहित्यों का यह अदल-बदल भारत की भावात्मक एकता केलिए एक शक्तिशाली कड़ी है।

अनुवाद का कार्य मौलिक लेखन से अधिक कष्ट-साध्य है। अनुवाद केलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि अनुवादक का स्रोतभाषा तथा अनूदित भाषा दोनों पर समान अधिकार हो, दोनों भाषाओं के भाषागत वैशिष्ट्य एवं शैली से पूर्णतया परिचित हो। अनुवाद दो प्रकार का होता है—शाब्दिक अनुवाद एवं भावानुवाद। शाब्दिक अनुवाद अपनी जटिलता, क्लिष्टता एवं दो भिन्न भाषाओं की शैली के कारण अपेक्षाकृत कठिन है। शाब्दिक अनुवाद करते समय सबसे बड़ी कठिनाई मूलभाषा की लोकोक्तियों, मुहावरों, स्थानीय प्रयोगों के अनुरूप अनुवाद की भाषा की लोकोक्तियों, मुहावरों तथा स्थानीय प्रयोगों को खोजने में है। यह कार्य अत्यन्त कष्टसाध्य है; फिर भी इस अनुवाद की अपनी विशेषता है क्योंकि यही अनुवाद मूल-भाषा के लेखक की शैली, विशिष्टता या त्रुटि को सामने दिखा देता है। भावानुवाद अपेक्षाकृत सुगम है क्योंकि यहाँ अनुवादक मूल लेखक के भाव की रक्षा मात्र पर ध्यान दिया करता है। भावानुवादक अपनी ओर से थोड़ी-बहुत स्वतंत्रता ले सकता है।

स्वतंत्रता-प्राप्ति तथा हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित करने के साथ केरल प्रदेश के प्रबुद्ध हिन्दीप्रेमी लोग साहित्य के आदान-प्रदान में अपना योग अदा करने में विशिष्ट गर्व का अनुभव करने लगे। फलतः अनेक हिन्दी-ग्रंथों का मलयालम में और कई मलयालम रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत हुआ। इस अवसर पर हम यह स्वीकार करेंगे कि अनुवाद के इस कार्य में कुछ लेखकों को असफलता ही हाथ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लगी और कुछ ने बड़ी योग्यता से अपना कार्य संपन्न किया। इस प्रसंग में पहले-पहल मलयालम से हिन्दी में अनुवाद के क्षेत्र में जो कार्य हुए, उनपर एक सरसरी दृष्टि डालेंगे।

मलयालम से हिन्दी में अनुवाद—गत एक दशक के भीतर मलयालम से कई ग्रंथ—काव्य, उपन्यास, नाटक, कहानी, निबंध—हिन्दी में अनूदित होकर आये। हिन्दी में अनूदित काव्यों की संख्या अपेक्षाकृत कम है। काव्य के अनुवाद में सब से बड़ी कठिनाई मूल भाषा के छंद, स्वर, लय एवं तान को अनूदित भाषा में लाने की है। इस कार्य में सफलता पाना कठिन है। फलतः बहुत कम अनुवादक मलयालम काव्यों का पद्यानुवाद प्रस्तुत करने केलिए आगे बढ़े। इतना होते हुए भी यह मानना पड़ेगा कि कुछ अनुवादकों का ध्यान इस ओर केन्द्रित हुआ और कई पत्र-पत्रिकाओं में ऐसे प्रकीर्ण अनुवाद प्रकाशित हुए और कुछ अनुवाद पुस्तकाकार प्रकाशित हुए हैं। हिन्दी प्रचार समाचार, केरल भारती, युग प्रभात, अनुवाद आदि पत्रिकाओं का प्रोत्साहन भी इसमें सहायक रहा। पर खेद के साथ कहना पड़ेगा कि उन प्रकीर्ण काव्यानुवादों को संगृहीत कर पुस्तकाकार प्रकाशित करने की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। अनुवादकों में विशेष उल्लेखनीय श्रीमती रत्नमयी देवी, एम. श्रीधर मेनन, जी. नारायण पिल्लै, डॉ. विश्वनाथ अय्यर, डॉ. चन्द्रशेखरन नायर, डॉ. कुट्टन पिल्लै, कृष्णन कुट्टी तथा डॉ. जी. गोपीनाथन् हैं।

काव्य—पुस्तकाकार प्रकाशित रचनाओं में महाकवि जी. शंकर कुरुप के ओटक्कुषल् का प्रथम स्थान है। भारतीय ज्ञान-पीठ से पुरस्कृत 'ओटक्कुषल्' काव्य-संकलन अपनी रहस्यात्मक अभिव्यक्ति, दार्शनिक चिन्तन, प्रकृति के हृद्कंपन की सुकुमारता एवं प्रतीकात्मक शैली के कारण अनुपम ग्रंथ है और इसका अनुवाद-कार्य बहुत ही कष्टसाध्य रहा। भारतीय ज्ञानपीठ के स्तुत्य प्रयास से यह ग्रंथ 'बांसुरी' के शीर्षक से मलयालम के विद्वान जी. नारायण पिल्लै तथा हिन्दी-भाषी विद्वान लक्ष्मीचंद्र जैन के संयुक्त प्रयास से पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ। मलयालम तथा हिन्दी के दो प्रसिद्ध विद्वानों के अथक प्रयास के फलस्वरूप यह अनुवाद मूल-ग्रंथ के भावों की रक्षा करता है। 'बांसुरी' के प्रकाशन तथा जी. शंकरकुरुप के ज्ञानपीठ से पुरस्कृत होने के कारण स्वाभाविक रूप से श्री कुरुप की कविताओं के प्रति देश की जिज्ञासा जाग उठी। जी. शंकर कुरुप की 1950 के बाद की रचनाओं से चुनी गयी दस कविताओं के एक संकलन 'वेरोरु नचिकेतस्सु' का हिन्दी अनुवाद 'एक और नचिकेता' उपर्युक्त दोनों अनुवादकों ने प्रस्तुत किया। इस प्रकार 'बांसुरी' तथा 'एक और नचिकेता' के प्रकाशन से जी. शंकर कुरुप के काव्य की शक्ति, काव्य-सौन्दर्य एवं सामर्थ्य का परिचय प्राप्त हो सका। प्रस्तुत दोनों अनुवाद मूल की भाव-रक्षा इसलिए कर पाये कि श्री कुरुप की भाषा संस्कृत-निष्ठ है, फलतः अनुवाद में भी बड़ी मात्रा में उन्हीं शब्दों से काम चलाया जा सका। अनुवाद का नमूना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रस्तुत करने केलिए 'एक और नचिकेता' पुस्तक की प्रथम कविता 'सर्ग-गीत' की कुछ पंक्तियाँ यहाँ प्रस्तुत हैं—

चिन्तको, हट जाओ !
वाचालो, मौन साधो !
काल रूपी कलिन्दजा की कूल भूमि में
नील गगन रूपी विशाल कदंब तरु में
तारक-सुमन विकस्वर हो सुशोभित हो रहे हैं।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने भी मलयालम कवियों को हिन्दी जगत में लाने का स्तुत्य प्रयास किया। उसने अपनी कवि-श्री माला के अन्तर्गत जी. शंकर कुरुप तथा वल्लत्तोल् नारायण मेनन के दो काव्य-संग्रह प्रकाशित किये और दोनों का अनुवाद-कार्य श्रीधर मेनन ने किया था। श्रीमती रत्नमयी देवी का प्रयत्न भी इस दिशा में स्तुत्य रहा। उनकी ये अनूदित रचनाएँ 'भारतीय साहित्य' (साहित्य अकादमी प्रकाशन) में संग्रहीत हैं। वैसे दोनों कवियों के अनेक फुटकर गीतों के कई अनुवाद हुए, जो समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुए। केरल साहित्य अकादमी ने हाल ही में एक अनुवाद-प्रतिस्पर्धा का आयोजन किया था, जिसमें मलयालम के महाकवि कुमारन आशान की कविताओं का अनुवाद हुआ था। इस प्रतियोगिता में चालीस-पचास लोगों ने भाग लिया था। आशान की 'चिन्ताविष्टयाय सीता' मलयालम काव्य-साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। इसमें राम से परित्यक्ता सीता की विरह-वेदना का मार्मिक चित्रण है तथा कवि ने सीता को एक सामान्य नारी के धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। उक्त काव्य का हिन्दी अनुवाद डा. रामचन्द्रदेव और उनके सहयोगियों के प्रयास से संपन्न हुआ। वल्लत्तोल तथा सी. माधवन पिल्लै की रचनाओं के अनुवाद वी. के. मूत्तन् ने राष्ट्रवाणी में प्रकाशित किये। कुमारन् आशान् ने अपनी 'वीणपूवु' (झड़ कर पड़ा पुष्प) के द्वारा मलयालम साहित्य में एक नयी गति और दिशा प्रदान की और अनेक विद्वानों के अनुसार इसी पुस्तक के साथ मलयालम में स्वच्छन्दतावादी काव्य-प्रवृति का श्रीगणेश होता है। 'वीणपूवु' महादेवी के 'मुरझाया हुआ फूल' के जैसे ही संसार की क्षणिकता, स्वार्थ-परायणता आदि पर प्रकाश डालती है; पर अंत में कवि का आशावादी स्वर भी प्रकट हुआ है। इस पुस्तक का हिन्दी-अनुवाद पंडित नारायणदेव तथा माधवन के सम्मिलित प्रयत्न से हुआ है। इसका अनुवाद चात्तुक्कुट्टी ने भी किया था जो 'युगप्रभात' में प्रकाशित होता आया। इसी प्रसंग में कुमारन् आशान् की 'वीणपूवु' के एक और अनुवाद का भी उल्लेख होना चाहिए। हैदराबाद आयुर्वेद कालेज के प्रधानाचार्य विद्वान दिवाकरन् ने 'वीणपूवु' का संस्कृत पद्यानुवाद बड़ी सफलता के साथ प्रस्तुत किया, जिसका हिन्दी गद्यानुवाद भी डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै के सहयोग से हो गया और यह अनुवाद शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। डा. विश्वनाथ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अय्यर तथा डा. सुनीता के संपादन में 'मलयालम काव्यधारा' (प्राचीन खण्ड) प्रकाशित हुई, जिसमें देवनागरी लिपि में प्रमुख प्राचीन मलयालम-कविताओं का संकलन, परिचय, गद्यात्मक भाषानुवाद और प्रामाणिक शोधपरक एक विस्तृत भूमिका उपलब्ध है।

मलयालम की तीन प्रतिष्ठित रचनाएँ हैं—एळुत्तच्छन् कृत महाभारत, अध्यात्मरामायण तथा उत्तर रामायण। इन ग्रंथों के सानुवाद लिप्यन्तरण के प्रकाशन के कार्य में भुवन-वाणी ट्रस्ट, लखनऊ के मौन तपस्वी पद्मश्री नंदकुमार अवस्थी का सक्रिय सहयोग रहा। उनके अनवरत प्रयत्न एवं प्रोत्साहन के फलस्वरूप 'महाभारत' का हिन्दी अनुवाद सहित देवनागरी लिप्यन्तरण लखनऊ विश्वविद्यालय तथा वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति के. ए. सुब्रह्मण्य अय्यर ने प्रस्तुत किया और 1250 पृष्ठों का यह विशाल काव्य-ग्रंथ जुलाई 1975 में प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत अनुवाद में विद्वान अनुवादक ने 25 पृष्ठों की एक भूमिका में मलयालम भाषा का भाषाशास्त्रीय अध्ययन भी प्रस्तुत कर पुस्तक की उपयोगिता बढ़ायी है। उक्त ग्रंथ की सविशेषता स्पष्ट करने केलिए मूल एवं अनुवाद की थोड़ी-सी पंक्तियाँ नीचे उद्धृत हैं—

श्रीमयमाय रूपं तेटुं पैंकिलिप्पेण्णे !
सीमयिल्लात सुखं नल्कणमेनिक्कुनी ।
श्यामल कोमलनायीटुन्न नारायणन्
तामर साक्षन्कथ केळ्प्पानाग्रहिच्चु ञान् । (महाभारत मूल)

× × ×

(हे श्रीयुत् रूपवाली शुक कन्ये ! मुझे असीम सुख प्रदान करो ! मुझे श्यामल् कोमल, और कमलनेत्र भगवान नारायण की कथा सुनने की बड़ी इच्छा हुई है।) वास्तव में भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ तथा सुब्रह्मण्य अय्यर की मलयालय भाषा के प्रति यह सेवा अविस्मरणीय है। पर दुख के साथ कहना पड़ता है कि 'मलयालियों की हिन्दी को देन' पर प्रकाशित कुछ प्रकीर्ण लेखों में कहीं भी न सुब्रह्मण्य अय्यर का उल्लेख है, न महाभारत का ही। वास्तव में केरल से बाहर रहकर हिन्दी के माध्यम से मलयालम की सेवा में रत श्री सुब्रह्मण्य अय्यर श्रद्धा के पात्र हैं।

मलयालम भाषा के जनक भक्तोत्तंस महाकवि एषुत्तच्छन् (पन्द्रहवीं शती) अपनी अध्यात्म रायायण केलिए समस्त भारत में प्रख्यात हैं और वे भारत के संत-रत्नों में से हैं। 'महाभारत' के प्रकाशन के उपरांत श्री नंदकुमार अवस्थी जी का ध्यान इस ग्रंथ की ओर केन्द्रित हुआ। अतः उनके अनुरोध से हैदराबाद निवासी मलयालम-भाषी डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै ने 'अध्यात्म रामायण' का देवनागरी लिप्यन्तरण सहित हिन्दी-अनुवाद बड़ी दक्षता पूर्वक प्रस्तुत किया। अध्यात्म रामायण राम के राज्याभिषेक के साथ समाप्त होती है। अतः एषुत्तच्छन् की संपूर्ण रामायण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को एक साथ प्रस्तुत करने के उद्देश्य से डा. पिल्लै ने 'अध्यात्म रामायण' के साथ 'उत्तर रामायण' का भी सानुवाद लिप्यन्तरण प्रस्तुत किया और एक हजार पृष्ठों से अधिक की दोनों पुस्तकें एक ही जिल्द में भुवनवाणी ट्रस्ट से मुद्रित हो प्रकाशनाधीन हैं और निकट भविष्य में ही वे प्रकाश में आ जाएँगी। उक्त पुस्तक का जितना अंश छप चुका है, उसे देखने से यह पता चलता है कि डा. कुट्टन पिल्लै ने बड़ी लगन एवं निष्ठा से अपना अनुवाद कार्य किया है। अध्यात्म रामायण की भाषा 15 वीं शती की है और तिसपर एषुत्तच्छन् ने मणि-प्रवाल शैली में उसे प्रस्तुत किया है। समास बहुला भाषाशैली और दुरूह दार्शनिक चिन्तन से युक्त उक्त दोनों ग्रंथों के शुद्ध अनुवाद में डा. पिल्लै को बड़ी सावधानी बरतनी पड़ी। मूल की रक्षा करने तथा कवि की भावगत एवं शैलीगत विशेषताओं से परिचित कराने के सोद्देश्य से प्रेरित डा. पिल्लै ने भावानुवाद के स्थान पर शब्दानुवाद को प्राथमिकता दी और मूल भाव की रक्षा तथा अनुवाद के प्रवाह को बनाये रखने केलिए अनुवादक ने भरती के शब्द कोष्ठकों में रखे हैं। इस प्रकार डा. पिल्लै ने अनुवाद के क्षेत्र में बड़ी तत्परता एवं सामर्थ्य का परिचय दिया है। हैदराबाद के हिन्दी वातावरण में वर्षों से रहने वाले डा. पिल्लै हिन्दी की शैली की शक्ति से परिचित हैं और इसी कारण उनका अनुवाद पूर्णतया सफल हुआ है।

एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

धात्रि भारत्तेत्तीर्प्पान् ब्रह्मादि देवगणं प्रार्थिच्चु भक्ति पूर्वं स्तोत्रं चेय्ततुमूलं
दुग्धाब्धि मध्ये भोगि सत्तमनायीटुन्न मेत्तमेल् योगनिन्द्र चेय्तीटुं नारायणन्
धात्री मण्डलं तन्निल् मार्त्तण्ड कुलत्तिङ्कल् धात्रीन्द्रवीरन् दशरथनु तनयनाय्।

[ब्रह्मा आदि देवगणों ने धरित्री को भार-मुक्त करने की (विष्णु से) भक्ति पूर्वक प्रार्थना की तो क्षीरसागर में अनंत शय्या पर सानंद योग-निन्द्रा में तल्लीन नारायण पृथ्वी-मंडल में मार्त्तण्ड-कुल में महीपति (राजा) दशरथ के पुत्र के रूप में अवत्तीर्ण हुए।]

वास्तव में देखा जाए तो अनुवाद के क्षेत्र में भुवनवाणी ट्रस्ट का यह कार्य मील का पत्थर है, जो सदा ही अनुस्मृत रहेगा। इस अनुवाद की सबसे बड़ी विशेषता है—मूल ग्रंथ को भी देवनागरी लिपि में समानांतर प्रस्तुत करना। इस महान कार्य केलिए कृतसंकल्प पद्मश्री नंदकुमार अवस्थी जी ने मलयालम भाषा की विशिष्ट ध्वनियों—ए (ह्रस्व), ओ (ह्रस्व), न (दो रूप) र (दो रूप), ळ, ष़ आदि को यथा रूप प्रस्तुत करने केलिए विशेष टाइप बनवाकर लिप्यन्तरण का मुद्रण किया है। फलतः मूल को निर्विघ्न एवं तीव्र गति से सुचारु रूप से पढ़ा जा सकता है। वास्तव में देवनागरी लिप्यन्तरण के साथ महाभारत तथा रामायण के अनुवाद श्लाघ्य एवं स्तुत्य ही नहीं, अपने ढंग का प्रथम प्रयास हैं।

फुटकर गीतों के अनुवादक के रूप में डा. विजयन, डा. गोपीनाथन, ए. गीता, प्रो. वी. ए. केशवन नम्पूतिरि, राजलक्ष्मी, डा. के. पी. परमेश्वरन पिल्लै, परमेश्वरन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नम्पूतिरि, सोमवर्म राजा, पं. नारायण देव आदि सामने आते हैं। डा. विजयन प्रकृत्या कवि-हृदय संपन्न हैं और फलतः उनका काव्यानुवाद पर्याप्त सहज एवं सफल है। साहित्य-मंडल पत्रिका में प्रकाशित जी. शंकर कुरुप की कविता 'शिव ताण्डव' का पद्यानुवाद इसका प्रमाण है। हाँ, कई स्थानों पर कविता के प्रवाह में बाधा उपस्थित होती है। फिर भी डा. विजयन से भविष्य में कई आशाएँ हैं। डा. गोपीनाथन् ने एन. वी. कृष्ण वारियर, अय्यप्प पणिक्कर, एन. एन. कक्काट, सुगत कुमारी, एम. एन. पालूर, आट्टूर रविवर्मा, सच्चिदानन्दन और कुञ्ञुण्णि, जो मलयालम के अत्याधुनिक कवि हैं, की कुछ कविताओं का अनुवाद 'मलयालम की नयी कविताएँ' शीर्षक से हाल ही में प्रकाशित करवायी हैं। मलयालम कविता की स्वातंत्र्योत्तर दिशा एवं प्रवृत्ति को समझने में यह संग्रह सहायक होगा। डा. गोपीनाथन् की भाषा में मार्जवता नहीं आ पायी है। नव सिखिये अनुवादक की भाषा मूल के भाव का संवहन करने में अपर्याप्त-सी लगती है; बीच-बीच में वह लड़खड़ाती-सी जान पड़ती है। फिर भी अभ्यास करते जाने पर डा. गोपीनाथन में कई संभावनाएँ निहित हैं। साहित्य मंडल पत्रिका में प्रकाशित सुगत कुमारी की 'एकाकी' कविता का अनुवाद (अनु. गीता) तथा अक्कित्तम की कविता 'संगमरमर की कथा' (अनु. वी. ए. केशवन नम्पूतिरि) का अनुवाद अवश्य ही उज्ज्वल भविष्य का द्योतक है। के. पी. परमेश्वरन पिल्लै एक सफल अनुवादक हैं। मलमालम के प्रसिद्ध कवि पाला नारायणन् नायर की कविताओं के अनुवाद उन्होंने किये, जो युगप्रभात एवं केरल-ज्योति में स्थान पाते रहे। इन अनूदित कविताओं का पुस्तकाकार प्रकाशन अभी नहीं हुआ है।

मलयालम नृत्य-विधाओं में कथकलि और तुल्लल् का अपना विशिष्ट स्थान है। लेकिन इन नृत्यविधाओं को अनुवाद के माध्यम से हिन्दी में लाना अवश्य ही कठिन है क्योंकि कथकलि और तुल्लल में प्रयुक्त ताल-लय केरल के अपने हैं, जिनके समानधर्मी ताल-लय हिन्दी में प्राप्त नहीं हैं। फिर भी केरल के कुछ उत्साही अनुवादक इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। परमेश्वरन नंपूतिरि, एन. के. उण्णित्तान, पं. नारायण देव आदि इस दिशा में कार्यरत हैं। ये लोग अपने प्रयत्न में कहाँ तक सफल होंगे, यह भविष्य ही बता सकेगा।

उपन्यास—मलयालम के उपन्यासों को हिन्दी में लाने की ओर पर्याप्त कार्य हो चुका है और होता आ रहा है। इस क्षेत्र में भारती विद्यार्थी, डा. विश्वनाथ अय्यर, दिवाकरन पोट्टि, लक्ष्मणशास्त्री, पी. जी. वासुदेव, रविवर्मा, अभयदेव, रत्नमयी देवी, डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, श्रीमती पद्मिनी मेनन आदि का कार्य प्रशंसनीय है। मलयालम उपन्यासों के अनुवाद की ओर सर्वप्रथम भारती विद्यार्थी का ध्यान आकृष्ट हुआ। जन्म से मलयालम-भाषी और विवाह से बिहारी भारती विद्यार्थी को अपने अनुवाद कार्य में देवदूत विद्यार्थी का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ, जिस कारण अनेक कठिनाइयाँ सहकर भी उन्होंने मलयालम के प्रसिद्ध यथार्थवादी उपन्यासकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तकषि शिवशंकर पिल्लै के कई उपन्यासों का सफलतापूर्वक अनुवाद किया। तकषि के उपन्यास 'तोट्टियुटे मकन् (भंगी का बेटा), रंटिटङ्ङषि (दो सेर) और चेम्मीन (स्वर्णिम मत्स्य) अपनी कथावस्तु एवं पात्र-सृष्टि के कारण मलयालम उपन्यास के क्षेत्र में विशेष स्थान के अधिकारी हैं। मध्य केरल का कुट्टनाडु नामक स्थान अपनी खेती-बारी केलिए प्रसिद्ध है। वहाँ का जन-जीवन जितना अकृत्रिम एवं स्वाभाविक है, वैसा अन्य क्षेत्रों का नहीं। तकषि शिवशंकर पिल्लै ने वहाँ के निम्न वर्गीय जन-जीवन को निकट से देखा-परखा और उसे उपन्यास के रूप में प्रस्तुत किया। तकषि ने अपने उपन्यासों में कथोपकथन एवं भाषा-शैली के द्वारा आंचलिकता का पुट दिया है और फलतः पात्रानुरूप एवं वातावरण के अनुकूल बोलचाल की भाषा लाने में बड़ी कठिनाई थी। लेकिन भारती विद्यार्थी जी ने यथासंभव अनुवाद में भी स्थानीय रूप लाने में सफलता प्राप्त की। उन्होंने तोट्टियुटे मकन् को 'चुनौती', रंटिटङ्ङषि को 'दो सेर धान' तथा चेम्मीन् को 'मछुआरे' के नाम से अनुवाद करके प्रस्तुत किया और उनका यह अनुवाद पर्याप्त सुन्दर बन पड़ने के साथ ही साथ लोक-प्रिय भी हुआ।

उपन्यास के अनुवादक के रूप में डा. विश्वनाथ अय्यर ने प्रशंसनीय कार्य किया। मलयालम के बहुचर्चित एवं बहुप्रशंसित उपन्यासकार पारप्पुरत्तु ने सामाजिक एवं पारिवारिक परिवेश को महत्व देते हुए एक वृद्ध ईसाई अफयूनी के जीवन के सुख-दुख को 'अरनाषिक नेरम्' शीर्षक उपन्यास में वाणी दी है। प्रस्तुत उपन्यास का हिन्दी अनुवाद डा. विश्वनाथ अय्यर ने 'आधी घड़ी' नाम से प्रकाशित कराया, जो हाल ही में उत्तर प्रदेश शासन से पुरस्कृत भी हुआ। यह पुरस्कार ही अनुवाद की श्रेष्ठता का द्योतक है। मलयाट्टूर रामकृष्णन् मलयालम उपन्यास-क्षेत्र में विशिष्ट शैलीकार हैं और उनकी रचनाओं में निम्न वर्गीय मानवता के प्रति विशेष सहानुभूति परिलक्षित होती है। उनकी उपन्यास-कृति 'वेरुकळ्' का अनुवाद भी डा. अय्यर की लेखनी से हुआ जो 'जड़ें' शीर्षक से प्रकाशित भी हुआ।

केरल में जन्मे और दिल्ली में स्थायी रूप से रहने वाले लक्ष्मण शास्त्री एक सफल अनुवादक हैं। हिन्दी प्रदेश के वातावरण में पलने वाले लक्ष्मण शास्त्री भाषा के धनी हैं और फलतः उनका अनुवाद रोचक एवं प्रभावशाली है। मलयालम के यशस्वी उपन्यासकार के. दामोदरन् का उपन्यास 'नरकत्तिल् निन्नु' काजू कारखाने के मालिक की काम-वासना से पीड़ित पद्मावती नामक एक सुन्दर युवती की व्यथा-पूर्ण कहानी प्रस्तुत करता है। उसका अनुवाद शास्त्री जी ने 'पद्मावती' के शीर्षक से प्रस्तुत किया है। वैक्कम मुहम्मद बशीर मलयालम में विशिष्ट शैली के जन्मदाता हैं। उनके उपन्यास आत्मकथा-शैली में प्रस्तुत हैं। उनके 'न्टुप्पुप्पाक्कोरानेण्टार्न्नु' उपन्यास का अनुवाद रविवर्मा ने 'दादा का हाथी' नाम से तथा उनकी 'मरणत्तिन्टे निषलिल्' उपन्यास-कृति का अनुवाद डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै ने 'मृत्यु की छाया में' शीर्षक से प्रस्तुत किया है। उनके 'बाल्यकाल सखी' का पी. एन. भट्टतिरि ने 'साहब-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जादी' के नाम से अनुवाद किया। सरदार पणिक्कर के उपन्यास 'केरलसिंहम्' का अनुवाद कृष्णमेनन ने, वेट्टूर रामन् नायर के उपन्यास 'जीविक्कान् मरन्नु पोय स्त्री' का अनुवाद अभयदेव ने 'जो जीना भूल गयी' शीर्षक से, एम. टी. वासुदेवन नायर की कृति 'नालुकेट्टु' का अनुवाद 'हवेली' के नाम से कृष्ण मेनन् ने प्रस्तुत किया है। इसी उपन्यास का हिन्दी अनुवाद श्रीमती पद्मिनी मेनन ने भी 'चार दीवारों में' शीर्षक से प्रस्तुत किया है। उन्होंने करणसिंह के 'फिलोसफी ऑफ अरविन्दो' का भी हिन्दी अनुवाद किया है। रत्नमयी देवी ने सरदार के. एम. पणिक्कर के उपन्यास कल्याणमल तथा केरलसिंहम् का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया। मलयालम उपन्यासकार नंतनार का 'अनजान इनसान' गिरि का अनुवाद है, जो युग प्रभात में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ।

नाटक—मलयालम के कई लोक-प्रिय नाटकों के भी अनुवाद हुए हैं, स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरांत केरल में साम्यवादी विचारधारा का प्रवाह-सा हुआ और इस प्रवाह में पड़कर नई नाटककारों ने साम्यवादी विचारों को प्रश्रय देते हुए नाटक लिखे। ऐसे नाटककारों में तोप्पिल भासी प्रथम गणनीय हैं, जिनके दो नाटक 'निङ्ङलेन्ने कम्यूनिस्टाक्कि' (तुम ने मुझे साम्यवादी बनाया) तथा 'पुतिय आकाशं पुतिय भूमि' (नया आकाश, नयी धरती) का इतना प्रचार हुआ कि स्थान-स्थान पर उनका मंचन भी होने लगा। तोप्पिल भासी के इन नाटकों के प्रति लोगों की रुझान को देखकर एक-दो व्यक्ति उनका अनुवाद प्रस्तुत करने केलिए आगे बढ़े। लक्ष्मण शास्त्री ने 'निङ्ङलेन्ने कम्यूनिस्टाक्कि' का 'उत्थान' नाम से अनुवाद किया तो डा. विश्वनाथ अय्यर ने 'पुतिय आकाशं पुतिय भूमि' का 'नया आसमान नयी धरती' शीर्षक से अनुवाद किया। सी. जे. तोमस का नाटक 'अवन वीण्टुं वरुन्नु' (वह फिर आ रहा है) अत्यन्त कारुणिक कथा पर आधारित है। इसका परिवेश केरल के ईसाई परिवार से संबंधित है। नव-विवाहिता सारम्मा को अपनी वृद्धा माता के पास छोड़कर उसका पति मात्तुक्कुट्टि सेना में भरती हो जाता है। किन्तु उसका लंगोटिया यार सारम्मा को फुसला-फुसलाकार अपने वश में कर लेता है। चार वर्ष के उपरांत मात्तुक्कुट्टि घर आता है तो वह सारा समाचार जान लेता है। वह सारम्मा को क्षमा कर देता है, किन्तु आगे उससे प्रेम-संबंध बनाये रखने में अपने को असमर्थ पाता है। इसी बीच पड़ोस के एक फैक्टरी की हड़ताल में स्वयं भाग लेकर वह गोली का शिकार बन जाता है। इस अर्से में सारम्मा और कुंजुवक्की दाम्पत्य जीवन बिताने लग गये थे। मात्तुक्कुट्टि की मृत्यु और सारम्मा के शिशु का जन्म एक ही समय होता है। इससे थोड़ी देर पहले एक पादरी की यह आवाज गूँज उठती है "वह आ रहा है" और इसी आधार पर उपन्यास का शीर्षक रखा गया है। पी. जी. वासुदेव का प्रस्तुत नाटक का अनुवाद पर्याप्त सुन्दर है। पी. जी. वासुदेव ने मेक्कोलो परमेश्वरन् पिल्लै के गीतानंद नाटक का भी अनुवाद प्रस्तुत किया है, जिसमें जाति-पाँति, धनमद् नेताओं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की प्रवंचना में पड़कर गुमराह होती जनता, सब का बड़ा ही कलात्मक चित्रण है। साम्यवादी दल के प्रति निष्ठुर लीलाओं, कुचक्रों में फँसी सरकार पर व्यंग्य कसने वाला एक नाटक है तोप्पिल भासी का 'मूलधनम्' (पूँजी) जिसका अनुवाद लक्ष्मण शास्त्री ने किया। एन. कृष्ण पिल्लै के 'कन्यका' का डा. गोविन्द शेनाय से प्रस्तुत अनुवाद, प्रसिद्ध हास्य-व्यंग्य लेखक उरूब के नाटक 'मण्णुं पेण्णुं' (मिट्टी और नारी) का अभय-देव कृत अनुवाद, टी. एन. गोपिनाथन् नायर के 'मृगम्' (पशु) का रघुवीर शरण कृत अनुवाद भी इस प्रसंग में उल्लेख्य है। कुछ इनेगिने नाटकों को हिन्दी में प्रस्तुत करने में युगप्रभात का स्तुत्य प्रयास रहा। कुंञालिमरक्कार पर के. पद्मनाभन नायर के कुछ अंश युगप्रभात में 1964 के आसपास प्रकाशित हुए। अनुवाद का कार्य सी. पुरुषोत्तमन ने किया था। वैसे ही कृष्ण मेनन के 'पषश्शिराजा' का कुछ अंश सी. एन. गोविन्दन से अनूदित हो युगप्रभात में प्रकाशित हुआ। के. टी. मुहम्मद के 'चाबियाँ' नाटक के कुछ दृश्य भी युगप्रभात में प्रकाशित हुए।

वास्तव में पी. जी. वासुदेव ने अनुवाद के क्षेत्र में बड़ी साधना की। उन्होंने पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ तथा रेडियो केलिए कई मलयालम एकांकियों का अनुवाद किया, जिनकी एक लंबी सूची बनायी जा सकती है। ऐसे अनूदित एकांकियों में जी. शंकर कुरुप का 'संध्या' (विश्व भारती में प्रकाशित), पी. केशवदेव कृत 'जीवन चक्र' (केरल भारती में प्रकाशित), के. टी. मुहम्मद का 'टैक्सी' ('भाव और रूप' में प्रकाशित), जी. विवेकानंद कृत 'एक दिव्य व्यभिचार की कथा' (युगप्रभात में प्रकाशित), जी. शंकर पिल्लै का 'शिकार' (रेडियो से प्रसारित), उरूब रचित 'शक्ति' (रेडियो केलिए) तथा के. रामकृष्ण पिल्लै का 'भरत' (रेडियो नाटक) विशेष महत्वपूर्ण हैं। वासुदेव सधे हुए अनुवादक हैं और भाषा पर उनका पर्याप्त अधिकार है। संस्कृत-उर्दू शब्दावली से ओतप्रोत उनकी हिन्दुस्तानी भाषा में पर्याप्त सहजता है, हाँ 'संध्या' में आये गीत का अनुवाद वे प्रवाहमयी भाषा में कर नहीं पाये। यह बड़े दुख की बात है कि पी. जी. वासुदेव के ये सारे अनूदित एकांकी पत्र-पत्रिकाओं में विकीर्ण रहे, उन्हें एक साथ थोड़े संशोधनों के साथ पुस्तकाकार प्रकाशित करने का कोई प्रयास नहीं हुआ; संभवतः अनुवादक को कोई अनुकूल प्रकाशक नहीं मिल सका।

मलयालम नाट्य विधा पर्याप्त विकसित है। वहाँ अनेक और भी नाटक हैं; जो अनुवाद करने योग्य हैं। हर्षवर्धन का ध्यान इस ओर आकृष्ट हो सका है और उन्होंने रेडियो केलिए कई नाटकों का अनुवाद भी किया, किन्तु उन नाटकों को भी पुस्तकाकार प्रकाशित करने का अवसर अभी नहीं आया।

कहानी—मलयालम का कहानी-साहित्य इतर भाषा-साहित्यों की अपेक्षा पर्याप्त विकसित एवं उन्नत है। पर इन कहानियों का अनुवाद भी संतोषजनक नहीं है। मलयालम कहानियों के अनुवाद की माँग दिनों-दिन बढ़ती जा रही है और कई हिन्दी प्रदेश की पत्रिकाएँ उनके प्रकाशन में दिलचस्पी दिखा रही हैं। दक्षिण भारत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी प्रचार सभा तथा नेशनल बुकट्रस्ट के द्वारा दो कहानी-संग्रह प्रकाशित हो सके हैं। सभा ने मलयालम की तेरह प्रख्यात प्रतिनिधि कहानीकारों की श्रेष्ठ रचनाओं का संग्रह निकाला। उक्त ग्रंथ का संपादन पी. नारायण ने किया। अनुवाद की शैली रोचक एवं आकर्षक है। पी. जी. वासुदेव तथा डाक्टर कुट्टन पिल्लै ने कुछ कहानियों के अनुवाद पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ प्रस्तुत किये हैं, जो उत्तर भारत की पत्रिकाओं में छप भी चुके हैं। पी. जी. वासुदेव द्वारा अनूदित एवं प्रकाशित कहानियों में नागवल्ली आर. एस. कुरुप की 'पेशा' (विशाल भारत), पोनकुन्नम् वर्क्की की रिक्शावाला (वीर अर्जुन), तकषी शिवशंकर पिल्लै की 'तलाक' (युगप्रभात), मुंशी परमु पिल्लै की हास्य कहानी 'एक छोटा-सा खत' (कर्मवीर), ललितांबिका अन्तर्जनम् की 'खेत के किनारे' तथा मीठा चुंबन (भाव और रूप), एस. के. पोट्टक्काट्ट की 'निशिगंधा' (संग्राम साप्ताहिक), पी. केशवदेव की 'हमजोली' (विश्व भारती), तकषी की 'तहसीलदार का बाप' तथा 'बाढ़' (केरल भारती) विशेष उल्लेखनीय हैं। पी. जी. वासुदेव के अनुवाद में अगर किसी दोष का दर्शन किया जा सकता है तो वह है भाषा का मलयालीपन तथा भाषा में लोच का अभाव। अन्यथा वे सशक्त अनुवादक हैं।

डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै ने भी मलयालम की कुछ कहानियों का अनुवाद पत्रिकाओं में प्रकाशित करने केलिए किया है। उन कहानियों में प्रमुख हैं—पोनकुन्नम् वर्की की 'काली टोपी' (स्वतंत्र भारत), टी. पद्मनाभन की 'सायंकालीन मेघ' (एकान्त) नागवल्ली आर. एस. कुरुप की 'शहीद' (स्वतंत्र भारत), ई. एम. कोवूर की 'कृतज्ञता' (स्वतंत्र-भारत), नन्तनार की 'छोटी बहन-बड़ा भाई' (स्वतंत्र-भारत), टाटापुरम् सुकुमारन् की 'रेलगाड़ियाँ आगे बढ़ती हैं' (एकांत) तथा सुब्बय्या पिल्लै की 'नग्नता की माया' शीर्षक हास्य कहानी (अभीक)। डा. कुट्टन पिल्लै की संस्कृत-गर्भित साहित्यिक हिन्दी अत्यन्त प्रवाह युक्त एवं सरल है। डा. पिल्लै से भविष्य में भी कई आशाएँ बंधी हुई हैं।

निबंध—मलयालम भाषा में कई मंजे हुए समीक्षक एवं आलोचक हैं, जिन्होंने अपने साहित्यिक निबंधों में मौलिक चिन्तन से प्रसूत नयी उद्‌भावनाओं को स्थान दिया है। पर ऐसे निबंधों के अनुवाद की ओर किसी केरलीय भाई का ध्यान नहीं जा रहा है, यह बड़े दुख की बात है। हाल ही में डा. कुट्टन पिल्लै का ध्यान इस अभाव की ओर केन्द्रित हो सका। उन्होंने मलयालम के सुप्रसिद्ध समीक्षक कुट्टिकृष्ण मारार के निबंध 'युक्तिबोध और सौन्दर्य बोध' (प्रकाशित मन) तथा 'पंचसंधियाँ' (अध्येय) का अनुवाद प्रस्तुत किया। वैसे ही जी. शंकर कुरुप के निबंध 'कविता-बीज' का अनुवाद भी 'अध्येय' में प्रकाशित करवा दिया। अपनी प्रांजल भाषा तथा सुन्दर शैली के कारण डा. पिल्लै इस क्षेत्र में अवश्य ही सफलता प्राप्त कर सकेंगे।

पी. जी. वासुदेव ने मलयालम भाषा आदि से संबंधित कुछ लेखों का अनुवाद निजी पत्रिका 'भाव और रूप' में प्रकाशित किया था। उनमें कैनिक्करा पद्मनाभ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पिल्लै का 'केरल-कला की विशेषता', डा. के. एम. जार्ज का 'मलयालम भाषा,' जनाब पी. ए. सईद मुहम्मद का 'ऐतिहासिक केरल', चेलनाट्टु अच्युत मेनन् का 'केरल की नृत्य, नाट्य कलाएँ', ए. बालकृष्ण पिल्लै के 'प्रागैतिहासिक काल का मिस्र' तथा 'प्राचीन ईजिप्त के इतिहास का पुराना युग' आदि लेख विशेष रूप से उल्लेख किये जा सकते हैं।

एम. गणेश अय्यर ने भी अनुवाद के क्षेत्र में थोड़ा योगदान दिया है। उनका 'केरल का भविष्य' जो एक छोटी-सी पुस्तक है, केरल के प्रसिद्ध धर्म-प्रचारक स्वामी आगमानंद के एक भाषण का अनुवाद है। यह छोटी-सी पुस्तक रामकृष्ण अद्वैताश्रम, कालड़ी से प्रकाशित हुई है। उक्त अनुवाद से यह स्पष्ट विदित होता है कि अय्यर का भाषा पर अधिकार है और भविष्य में वे अच्छे अनुवादक अपने को प्रमाणित कर सकेंगे।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि मलयालम भाषा की कई साहित्यिक विधाओं का प्रचुर मात्रा में अनुवाद हुआ है और होता आ रहा है। केरल में कई प्रतिभाशाली अनुवादक हैं और उनमें अनुवाद करने की अभिरुचि भी है। लेकिन इन सुयोग्य अनुवादकों को प्रोत्साहन एवं प्रेरणा की कमी है। अगर उत्तर भारत के प्रकाशक तथा साहित्यिक संस्थाएँ प्रकाशन का दायित्व उठा सकेंगे तो निश्चय ही मलयालम की कई मौलिक रचनाएँ हिन्दी में सुलभ हो सकेंगी।

हिन्दी से मलयालम में अनुवाद—मलयालम भाषा में हिन्दी की कई श्रेष्ठ कृतियों का अनुवाद हो चुका है, जिस कारण हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठित साहित्यकार आज केरलवासियों केलिए सुपरिचित हो गये। मलयालम में अनूदित काव्य-कृतियों में महाकवि तुलसीदास कृत रामचरितमानस का सर्व-श्रेष्ठ स्थान है। अकेले रामचरितमानस के आठ अनुवाद प्रस्तुत हैं। सर्वप्रथम 1929 में पेट्टयिल रामन पिल्लै आशान ने इसका अनुवाद प्रस्तुत किया, किन्तु उक्त अनुवाद तुलसी के भाव की पूरी रक्षा नहीं कर सका। रामचरितमानस का गद्यात्मक अनुवाद स्वर्गीय कावुंकल नीलकंठ पिल्लै एवं ए. वासुमेनन ने प्रस्तुत किया। वासुमेनन हिन्दी के निष्ठावान प्रचारक हैं और उन्होंने तुलसी के भावों को अपेक्षाकृत उसी रूप में अवतरित करने में सफलता प्राप्त की। किन्तु रामचरितमानस के सर्वाधिक सफल अनुवादक के रूप में मलयालम के प्रसिद्ध कवि वेण्णिक्कुलम गोपाल कुरुप समादरणीय हैं। यह पद्यानुवाद 'तुलसीदास रामायणम्' के नाम से 1968 में नेशनल् बुक स्टाल से प्रकाशित हुआ। वेण्णिक्कुलम का यह छन्दोबद्ध अनुवाद इसलिए सफल हुआ कि वे स्वयं उच्चकोटि के कवि हैं। और फलतः तुलसीकृत रामायण के भावों को यथारूप समझने तथा छन्दोबद्ध शैली में प्रस्तुत करने में उन्हें बड़ी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा। वेण्णिक्कुलम की यह सेवा अनुस्मरणीय रहेगी। टी. के. भट्टतिरि का अनुवाद मातृभूमि, कालिकट से प्रकाशित हुआ। रामचरित मानस का गद्यानुवाद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्षों पहले प्रोफसर एन. चन्द्रशेखरन नायर ने किया था और उसका खण्डशः प्रकाशन भी 'मलयाली' अखबार देवस्वं पत्रिका में होता रहा था। अनुवाद की श्रेष्ठता एवं प्रकाशित करने की रीति से श्री नायर को केरल-तुलसीदास पुकारे जाने लगे थे। पर पुस्तक रूप में उनका अनुवाद प्रकाशित नहीं हुआ।

एरमल्लूर भरतन् ने संत कबीर के दोहों को मलयालम के 'पाना' छन्द में प्रस्तुत किया, जो छप गया है। अनुवाद को देखने पर पता चलेगा कि भरतन् कबीर की भावराशि के साथ पूर्ण न्याय नहीं कर सके। एक तो दोहों को 'पाना' नामक द्रविड छन्द में लाना दुष्कर कार्य था, दूसरे भरतन् कबीर के कई छन्दों का अर्थ ठीक नहीं समझ पाये। फिर भी कबीर जैसे प्राचीन कवि को मलयालम भाषियों में प्रचलित करने का उनका प्रयास अवश्य ही श्लाघ्य है। कूत्ताट्टुकुलम मेरी जान ने कबीर के पदों का अनुवाद प्रस्तुत किया है। मैथिलीशरण गुप्त की 'पंचवटी' नामक कृति का अनुवाद 'केरल भारती' पत्रिका में क्रमशः प्रकाशित होता रहा, श्रीमती भार्गवी अम्मा का अनुवाद पुस्तक रूप में आया, जो सुन्दर निकला है। 'कामायनी' काव्य का अनुवाद वैलोप्पिल्लिल् श्रीधर मेनन् ने किया था, जो केरल साहित्य अकादमी के प्रकाशनाधीन है। अनुवादक ने द्राविड़ छन्दों में यह कार्य संपन्न किया। कामायनी के कुछ अंशों का अनुवाद के. एन. भास्करन नायर एम. ए. ने किया था, जो 'केरल भारती' पत्रिका में प्रकाशित होता रहा। भास्करन नायर ने सर्गों के नामकरण में कुछ परिवर्तन अवश्य किया है। उदाहरण केलिए चिन्ता सर्ग का अनुवाद 'स्वर्गध्वंसनम्' शीर्षक पर किया है। मूलग्रंथ और अनुवाद का तुलनात्मक अध्ययन करने पर यह स्पष्ट विदित होगा कि भास्करन नायर अपने छंदों में प्रसाद जी की निगूढ़ भावराशि को यथावत् प्रस्तुत नहीं कर सके। कई स्थलों पर अर्थ का अनर्थ हो गया है। बात यह है कि प्रसाद की 'कामायनी' के भाव-जगत में उतरने केलिए आवश्यक-कल्पना विलास और अनुभूति-प्रवणता भास्करन नायर में अपेक्षित मात्रा में नहीं रही। संभवतः भास्करन नायर अपनी इस कमी को पहचान गये और थोड़े अंश के अनुवाद के बाद उन्होंने अपने प्रयत्न के आगे विराम चिह्न डाल दिया। प्रसाद के 'आँसू' काव्य का अनुवाद भी इधर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होता रहा; वह भी पुस्तक रूप में प्रकाशित नहीं हुआ। वैसे ही पंत जी की 'नौका-विहार', 'चाँदनी', प्रसाद के कुछ गीत आदि का भी अनुवाद केरल भारती में स्थान पाता रहा। इससे आगे हिन्दी के काव्यों का अनुवाद-कार्य नहीं हो सका।

काव्य के बाद मलयालम में अनूदित हिन्दी उपन्यासों का क्रम आता है। स्वर्गीय प्रेमचन्द का नाम मलयालम भाषियों केलिए सुपरिचित कर देने का कार्य दिवाकरन् पोट्टि ने किया। उन्होंने प्रेमचन्द के प्रसिद्ध सभी उपन्यासों का अनुवाद बड़ी सफलता पूर्वक संपन्न किया। श्रीमती जोशुवा ने इलाचन्द्र जोशी के 'संन्यासी' उपन्यास का अनुवाद किया तो के. वी. मणलिक्करा ने महापंडित राहुल सांकृत्यायन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के कुछ ग्रंथों का भाषान्तरण किया। हिन्दी से मलयालम में भाषान्तरण के इस प्रसंग में भी पी. जी. वासुदेव विशेष स्मरणीय हैं। उन्होंने धर्मवीर भारती के 'सूरज का सातवां घोड़ा' तथा विष्णु प्रभाकर के 'स्वप्नमयी' का मलयालम में भाषान्तरण किया और दोनों अनुवाद क्रमशः दि एजूकेशनल् साप्लाइस डिपो, ट्रिवानड्रम तथा परिषत् बुक स्टाल, एरणाकुलम से प्रकाशित भी हुए। भाषा की मार्जवता की दृष्टि से ये दोनों अनुवाद संतोषजनक हैं। यशपाल कृत 'झूठा-सच' का अनुवाद पी. ए. वारियरने तथा फणीश्वरनाथ रेणु के 'मैला आंचल' का अनुवाद गोपाल कृष्ण कम्मत ने प्रस्तुत किया। श्रीमती रत्नमयी देवी ने हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' का भाषान्तरण किया, जिसे केरल साहित्य अकादमी ने प्रकाशित किया। प्राप्त सूचना के अनुसार सुनीता, मनुष्य के रूप, कंकाल, भूले बिसरे चित्र, चित्रलेखा, झाँसी की रानी आदि का भी अनुवाद मलयालम भाषा में हो चुका है, परन्तु बहुत प्रयत्नों के बावजूद भी उनकी प्रतियाँ हाथ नहीं लगीं। दिवाकरन पोट्टी ने यशपाल के पार्टी कामरेड तथा राजद्रोही का अनुवाद प्रस्तुत किया। लेकिन अनुवाद में दिवाकरन पोट्टी पूर्णतया सफल हुए, यह नहीं कहा जा सकता।

मलयालम में अनूदित हिन्दी नाटकों की संख्या सीमित है। द्विजेन्द्रलाल राय के बंगला नाटक चन्द्रगुप्त, मेवाड़ पतन और राणा प्रतापसिंह मलयालम में आ चुके हैं, पर अनुवादक का आधार इन ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद ही रहा। विभिन्न हिन्दी परीक्षाओं के पाठ्य-क्रम में निर्धारित जयशंकर प्रसाद का चंद्रगुप्त तथा हरि-कृष्ण प्रेमी के 'ममता' तथा 'रक्षा बंधन' मलयालय में भाषान्तरित हो चुके हैं। यह कार्य डा. एन. आई. नारायण ने संपन्न किया। पी. जी. वासुदेव ने विष्णु प्रभाकर के नाटक 'डाक्टर' का भाषान्तरण किया है। पर यह भाषान्तरण अपेक्षित नाटकीय प्रभाव लाने में पूर्णतया सफल नहीं हुआ।

हिन्दी में असंख्य उच्चकोटि के कहानीकार हैं। उनकी विशिष्ट कहानियों का मलयालम भाषान्तरण इस दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी होगा कि मलयालम-भाषी अन्य भाषा में कहानी-क्षेत्र में होने वाले नये टेकनिक से परिचित हो सकेंगे। पर मलयालम में अत्याधुनिक बहुत ही कम हिन्दी कहानियाँ अनूदित हुई हैं। इसलिए केरल की सामान्य जनता आज भी इसी धारणा में है कि हिन्दी में मात्र प्रेमचन्द ही श्रेष्ठ कहानीकार हैं। शेष कहानिकारों के नाम तक कम लोगों ने सुने होंगे। पी. सी. शंकर ने प्रेमचन्द की श्रेष्ठ कहानियों का अनुवाद किया था। केरल साहित्य अकादमी की तरफ से हिन्दी के प्रतिनिधि कहानीकारों की तेईस कहानियों का एक संग्रह प्रकाशित हुआ, और इनके अनुवादक हैं पी. एन. भट्टतिरि। इस दिशा में और कोई संतोष-जनक कार्य नहीं हुआ।

प्रोफसर एन. चन्द्रशेखरन नायर ने मलयालम भाषी उच्चकोटि के हिन्दी रचनाकार होते हुए भी अनुवाद को भी अपना यत्किंचित योगदान दे दिया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामचरितमानस का सुन्दर अनुवाद पत्रिका में प्रकाशित करके उन्होंने तुलसीदास को केरलीय जनता केलिए सुपरिचित कर दिया। जैसे नायर की भाषा विषय के अनुकूल है वैसे अनुवाद के संबंध में भी वे सिद्धहस्त लेखक हैं। उन्होंने अनेक वर्षों तक आकाशवाणी त्रिवेंद्रम केन्द्र केलिए कविता, नाटक आदि रचनाओं का अनुवाद-कार्य किया है। ओ. एन. वी., शंकर कुरुप आदि अनेक कवियों की कविताओं का अनुवाद उन्होंने किया है। मातृभूमि के यशस्वी सम्पादक के. पी. केशव मेनन का 'कर्षित्र कालम' नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया केलिए उन्होंने अनूदित कर दिया है। मलयालम की प्रसिद्ध नाट्य रचना 'युगसमागम' का अनुवाद कर राष्ट्र-भारती में प्रकाशित किया। युग समागम के रचनाकार राम कृष्ण पिल्लै हैं।

प्रोफसर चन्द्रशेखरन नायर के द्वारा मलयालम में अनूदित दो प्रसिद्ध पुस्तकें हैं—(1) डाक्टर सरोजिनी महिषी का अतिथि सत्कार और (2) श्रीपाद जोशी की गांधीजी : एक झलक। दोनों कृतियाँ अनुवाद की दृष्टि से बेजोड़ हैं और मौलिक जैसी लगती हैं।

हिन्दी तथा मलयालम का पारस्परिक आदान-प्रदान दोनों भाषाओं के भंडार की श्रीवृद्धि करेगा, साथ ही भारत की भावात्मक एकता में सहायक भी सिद्ध होगा। यह कार्य मलयालम-भाषी हिन्दी लेखक ही कर पाएँगे, जिन्हें वरदान के रूप में दो भाषाओं का गंभीर ज्ञान प्राप्त है। अतः केरल के हिन्दी विद्वानों को चाहिए कि इस दायित्व को संभालने केलिए आगे बढ़ें। साथ ही उत्तर भारत के प्रकाशकों से अपील है कि वे ऐसी रचनाओं के प्रकाशन एवं बिक्री केलिए समुचित कदम उठायें।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संस्थाएँ तथा पत्रिकाएँ

स्वतंत्रता-प्राप्ति के पहले भारतीय स्वतंत्रता-आन्दोलन के एक पहलू के रूप में हिन्दी प्रचार आन्दोलन को भी महत्व दिया गया। गांधीजी के नेतृत्व में हिन्दी आन्दोलन ने जोर पकड़ा। गांधीजी का विश्वास था कि भारत की भावात्मक एकता को बनाये रखने केलिए एक सामान्य संपर्क भाषा की आवश्यकता है और उन्होंने हिन्दी को इसके लिए उपयुक्त भाषा चुन लिया। गांधीजी ने अपने प्रयत्नों से सन् 1918 ई. में मद्रास के त्यागरायनगर में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा का शिलान्यास किया और आगे चलकर यह संस्था दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार आन्दोलन का कर्णधार बनी। केरल में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में इस संस्था ने अपूर्व योगदान दिया। पहले यह संस्था हिन्दी प्रचार का कार्य मद्रास को केन्द्र बनाकर करती रही, किन्तु कालान्तर में इसकी गतिविधियों का चूंकि अधिक विस्तार हुआ, इसलिए उसने यह अनुभव किया कि सभा के कार्यों को सुगठित एवं सक्रिय बनाने केलिए इसकी प्रान्तीय शाखाएँ खोली जाएँ। इस निर्णय के अनुसार केरल के एरणाकुलम में इसकी प्रान्तीय सभा खोली गयी।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (केरल)—दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की केरल शाखा गत तीस से अधिक वर्षों से केरल के हिन्दी प्रचार आन्दोलन में गति एवं सक्रिय सहयोग देती आ रही है। अपने कार्य को अधिक सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से इसने अपने कार्य को तीन मंडल-शाखाओं में विभक्त किया और तीनों मंडलों के अन्तर्गत सुयोग्य एवं कर्मठ संगठकों की देख-रेख में हिन्दी अध्ययन-अध्यापन का कार्य होता आ रहा है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास ने जब यह अनुभव किया कि स्वयं चारों प्रांतों में परीक्षाएँ संचालित करना, बढ़ती हुई विद्यार्थियों की संख्या के कारण कठिन है, तब उसने प्रारंभिक परीक्षाओं का संचालन-कार्य प्रान्तीय सभाओं के सुपुर्द कर दिया। अतः आज सभा की प्रारंभिक परीक्षाएँ केरल शाखा की देख-रेख में चलती आ रही हैं। यह केरल शाखा परीक्षाएँ संचालित करने के अतिरिक्त हिन्दी वर्ग-संचालन, प्रचारक शिविरों का आयोजन तथा हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालयों का संचालन भी करती आ रही है। इसके फलस्वरूप केरल में असंख्य हिन्दी प्रचारक एवं हिन्दी प्रेमी तैयार होते आ रहे हैं। मुद्रण की सुविधा को दृष्टि में रखकर इसने अपना हिन्दी मुद्रणालय भी स्थापित कर लिया है। हिन्दी प्रचारकों को तैयार करने के साथ ही साथ साहित्यिक प्रतिभाओं को सृजन-कार्य में प्रोत्साहन देना भी आवश्यक है। अतः स्थानीय प्रतिभाओं को लेखन-कार्य का अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से यह संस्था वर्षों से 'केरल भारती' पत्रिका भी प्रकाशित करती आ रही है। इस प्रकार दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की यह केरल शाखा हिन्दी प्रचार-प्रसार के बहुमुखी कार्यों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में दत्तचित्त हो हिन्दी के प्रचार और तद्द्वारा भारत की भावात्मक एकता के कार्य में एक कड़ी बन रही है। असंख्य हिन्दी प्रेमियों को तैयार करने तथा केरलीय जनता में हिन्दी के प्रति एक जागृति पैदा करने के पीछे इस संस्था का बड़ा योगदान है।

केरल हिन्दी प्रचार सभा—दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ने केरल में कुछ कर्मठ कार्यकर्ताओं, प्रचारकों को जन्म दिया था, जिनमें से एक थे विद्वान के. वासुदेवन पिल्लै। उन्होंने प्रथम बार यह अनुभव किया कि केरल में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में प्रगति तभी संभव है जबकि केरल को केन्द्र बनाकर कोई सभा कार्य करे। इस उद्देश्य से प्रेरित होकर उन्होंने केरल प्रान्त के संयोजन के पूर्व ही सन् 1934 ई. में तिरुवनंतपुरम को अपना केन्द्र बनाकर तिरुवितांकूर हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना की और पहले दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की विविध परीक्षाओं केलिए विद्यार्थियों को तैयार करते रहे। सन् 1948 से इस सभा ने अपनी परीक्षाएँ चलाना आरंभ किया और हजारों विद्यार्थी इन परीक्षाओं में बैठने लगे। सन् 1961 से तिरुवितांकूर हिन्दी प्रचार सभा केरल हिन्दी प्रचार सभा में परिवर्तित हो केरल भर को अपनी सीमा में समेट कर कार्यरत होने लगी। परीक्षा-संचालन, विद्यालय संचालन, अध्यापक प्रशिक्षण, ग्रंथालय एवं वाचनालय, पत्रिका का संपादन, पुस्तक प्रकाशन, संगोष्ठियों का आयोजन आदि विविध कार्य आज यह सभा करती आ रही है। विद्यालयों का संचालन सुयोग्य संगठकों द्वारा संपन्न होता आ रहा है। सुयोग्य अध्यापकों को तैयार करने के विचार से सभा के मार्ग-निर्देशन में प्रशिक्षण महाविद्यालय चलाया जा रहा है। सभा-भवन में संचालित स्वर्गीय के. वासुदेवन पिल्लै स्मारक ग्रंथालय केरल का सर्वश्रेष्ठ हिन्दी ग्रंथालय माना जाता है। इसमें शोधार्थियों के लाभार्थ उच्चस्तरीय संदर्भ-ग्रंथों का संग्रह भी किया गया है। यह ग्रंथालय केन्द्र सरकार का अनुदान प्राप्त करता आ रहा है। केरल के लेखकों की सृजनशक्ति को प्रोत्साहित करने केलिए सभा द्वारा 'केरल ज्योति' पत्रिका प्रतिमास प्रकाशित होती आ रही है। इस सभा का उद्देश्य है एक हिन्दी विश्वविद्यालय का रूप लेना तथा हिन्दी-मलयालम के श्रेष्ठ ग्रंथों का प्रकाशन करना। वह अपनी योजनाओं को पूर्णता की ओर पहुँचाने के प्रयत्न में है। इस संस्था का उज्ज्वल भविष्य है क्योंकि आज उसका शासन-सूत्र निष्काम एवं कर्मठ सक्रिय एवं उत्साही कार्यकर्ताओं के हाथ में है।

हिन्दी विद्यापीठ (केरल)—हिन्दी के प्रचार-प्रसार में सक्रियता लाने के विचार से स्थापित यह संस्था यह अनुभव करती आ रही है कि हिन्दी के प्रचार एवं विकास में तभी सफलता हाथ आएगी जबकि समस्त विषय हिन्दी माध्यम से पढ़ाये जाएँ। विद्यापीठ का विचार है कि आसेतु हिमाचल पर्यन्त ऐसी शिक्षा का प्रचार हो जिसके द्वारा राष्ट्रभाषा की समस्या का भी हल हो और सर्वसाधारण की शिक्षा की माँग भी पूरी हो। अतः विद्यापीठ ने हिन्दी माध्यम से शिक्षा दिलाने का आयोजन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किया। आज इसके तत्वावधान में तिरुवनंतपुरम में हिन्दी माध्यम का वनिता महाविद्यालय चल रहा है, जहाँ ग्राम विनोदिनी (मेट्रिकुलेशन), महाविदुषी (इंटर-मिडियट) और भारती (बी. ए.) की शिक्षा दी जा रही है। यह हिन्दी विद्यापीठ, केरल चारिटबिल सोसाइटी एक्ट के अंतर्गत पंजीकृत संस्था है, जो महिला ग्राम विद्यापीठ, प्रयाग तथा शिक्षा-निदेशक केरल से मान्यता प्राप्त है। ग्रामविनोदिनी कक्षा में अंग्रेजी, हिन्दी, ग्राम विज्ञान, नागरिकशास्त्र, इतिहास, भूगोल और स्वास्थ्य-रक्षा तथा गृहविज्ञान, महाविदुषी कक्षा में अंग्रेजी, हिन्दी, ग्राम विज्ञान, इतिहास और नागरिकशास्त्र, और भारती कक्षा में अंग्रेजी, हिन्दी, ग्राम विज्ञान तथा इतिहास की पढ़ाई होती है। ग्राम विनोदिनी में सिलाई तथा पाकशास्त्र की शिक्षा की भी व्यवस्था है। ग्राम विनोदिनी तथा महाविदुषी परीक्षाएँ केरल सरकार तथा विश्वविद्यालय से मान्यता प्राप्त हैं। छात्राएँ महाविदुषी के उपरांत कालेज में प्रविष्ट हो बी. ए. का अध्ययन जारी रख सकती हैं। हिन्दी विद्यापीठ के संस्थापक मंत्री श्री पी. जी. वासुदेव हैं जो सन् 1928 से लेकर हिन्दी प्रचार के कार्यों में अपना मौन योगदान देते आ रहे हैं। वे एक सफल अध्यापक, सशक्त प्रचारक एवं सुयोग्य लेखक हैं।

केरल हिन्दी साहित्य मण्डल, कोचीन—केरल के हिन्दी शिक्षित एवं उत्साही साहित्यकारों, कार्यकर्ताओं के दीर्घकालीन स्वप्नों का साकार स्वरूप है सन् 1970 में स्थापित यह केरल हिन्दी साहित्य मण्डल। केरल के लिटेररी, साइन्टिफिक एण्ड चारिटेबिल सोसाइटीस एक्ट के आधीन पंजीकृत यह संस्था हाई-स्कूल-कालेज तथा अन्य क्षेत्रों के हिन्दी-बंधुओं को एक मंच पर लाने, हिन्दी के लेखन-कार्य को प्रोत्साहित करने तथा उत्तर-दक्षिण में वैचारिक एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान की दिशा में सेतु का कार्य करने के महान लक्ष्यों की पूर्त्ति केलिए संस्थापित है। इन उद्देश्यों की पूर्ति केलिए यह संस्था यथासमय साहित्य संगोष्ठियों, चर्चाओं, शिविरों का आयोजन करती आ रही है। दक्षिण-उत्तर में एकता बनाये रखने तथा स्थानीय प्रतिभाओं को लेखन-कार्य केलिए प्रोत्साहन देने के विचार से साहित्य-मंडल पत्रिका (त्रैमासिक) प्रकाशित करती आ रही है। इस संस्था का प्रकाशन-विभाग भी बहुत ही सक्रिय है। उसकी सक्रियता का इससे अधिक क्या प्रमाण हो सकता है कि इसने अपनी स्थापना के इन थोड़े से वर्षों में उच्चकोटि की लगभग दस पुस्तकों का प्रकाशन किया है। यह प्रकाशन-विभाग स्तरीय पुस्तकों के चयन में इतना सजग है कि उसके यहाँ से प्रकाशित कई पुस्तकें केन्द्र सरकार तथा उत्तर प्रदेश शासन से पुरस्कृत हो चुकी हैं।

मंडल की कार्य-कारिणी समिति ने डा. विश्वनाथ अय्यर जैसे प्रतिभाशाली विद्वानों के नेतृत्व एवं पथ-प्रदर्शन में ऐसा कुछ ठोस कार्य हिन्दी-जगत में करके दिखाया है कि आज यह संस्था केरल में ही नहीं, बाहर भी पर्याप्त यश प्राप्त कर चुकी है। यह संस्था केरल के हिन्दी-प्रेमियों केलिए आशा-केन्द्र बनी हुई है और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसका पूरा श्रेय केरल के हिन्दी प्रेमियों, कर्मठ साहित्य-सेवियों तथा उत्साही कार्य-कर्ताओं को प्राप्त होता है।

विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभाग—केरल के हिन्दी प्रचार तथा अध्ययन-अध्यापन के क्षेत्र में केरल के विश्वविद्यालयों के हिन्दी-विभागों का अमूल्य योगदान अविस्मरणीय है। स्वतंत्रता प्राप्ति के लगभग दस वर्ष पूर्व ही केरल विश्वविद्यालय की स्थापना सन् 1937 में हुई और अपने आरंभ काल में ही विश्वविद्यालय ने अपने पाठ्यक्रम में हिन्दी भाषा को स्थान दिया था। उन दिनों भले ही पढ़ाने केलिए प्राध्यापकों की नियुक्ति बहुत बाद में हुई और हिन्दी लेकर अध्ययन जारी रखने वाले छात्रों की संख्या सीमित थी तो भी अधिकतर विद्यार्थियों का हिन्दी स्तर पर्याप्त संतोष-जनक ही रहा क्योंकि उनमें से अधिकतर विद्यार्थी हिन्दी प्रचार संस्थाओं की परीक्षाएँ पास किये हुए थे। स्वतंत्रता-प्राप्ति तथा हिन्दी को राजभाषा के रूप में घोषित करने के साथ ही कालेजों में हिन्दी के पठन-पाठन में पर्याप्त प्रगति हुई। असंख्य विद्यार्थियों ने हिन्दी सीखने की ओर विशेष रुचि प्रदर्शित की कि अधिकतर कालेजों के हिन्दी-विभाग मलयालम-विभागों की अपेक्षा पर्याप्त विशाल रहे। हिन्दी में एम. ए. का पाठ्यक्रम स्वीकृत होने के पहले सुयोग्य हिन्दी अध्यापक तैयार करने के विचार से विश्वविद्यालय ने हिन्दी विद्वान की परीक्षा का सूत्रपात किया और यह परीक्षा अपने व्यापक पाठ्यक्रम एवं स्तर की दृष्टि से पर्याप्त महत्वपूर्ण रही और इसने कई विद्यार्थियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। केरल के अधिकतर उस समय के प्राध्यापक विद्वान उपाधिधारी ही रहे, यह बड़े गौरव के साथ कहा जा सकता है। इस आधार पर ही उक्त परीक्षा के स्तर की सहज कल्पना की जा सकती है। कालान्तर में जब विश्वविद्यालय ने यह अनुभव किया कि स्नातकोत्तर स्तर पर हिन्दी अध्ययन की सुविधा और व्यवस्था के अभाव में केरल के हिन्दी-स्नातक बाहरी विश्वविद्यालयों की ओर आकृष्ट होते जा रहे हैं, तो सन् 1957 ई. में विश्वविद्यालय ने एम. ए. में हिन्दी अध्ययन की सुविधा प्रदान की और तब से लेकर आज तक इस विश्वविद्यालय ने सैकड़ों स्नातकोत्तर हिन्दी उपाधिधारियों को पैदा किया। केरल के हिन्दी उपाधिधारी सदैव ज्ञान-पिपासु रहे हैं। उनके मन में हिन्दी में उच्चतम परीक्षा पास करने की ललक बनी रही। अतः कई स्नातकोत्तर उपाधिधारियों ने आगरा, बनारस, सागर जैसे विश्वविद्यालयों से पी-एच. डी. प्राप्त करने के श्रम में सफलता प्राप्त की। किन्तु उन्हें अपने इस मार्ग में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इन कठिनाइयों से अवगत हो विश्वविद्यालय ने अपने यहाँ शोध की व्यवस्था कर ली। केरल विश्वविद्यालय से कई लोगों ने पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त कर ली है और अधिकतर शोध-विषय हिन्दी-मलयालम तुलनात्मक अध्ययन ही रहे। इस प्रकार केरल विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग ने कम समय में आशातीत प्रगति प्राप्त कर ली है। बाद में कोचीन विश्वविद्यालय की स्थापना के साथ ही केरल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विश्वविद्यालय ने एरणाकुलम में स्थित अपने स्नातकोत्तर तथा शोध-विभाग को कोचीन के सुपुर्द कर दिया। आज यह विभाग किसी भी अन्य भाषा-विभाग से गुण एवं मात्रा में आगे है।

कालिकट विश्वविद्यालय का हिन्दी-विभाग भी अपने उषाकाल से पर्याप्त सक्रिय रहा था। आज उक्त विश्वविद्यालय में भी हिन्दी की पी-एच. डी. तक की शिक्षा केलिए आवश्यक प्रबंध है।

इस प्रकार दोनों विश्वविद्यालयों के हिन्दी-विभाग के प्रयत्नों के फलस्वरूप आज केरल में हजारों की संख्या में हिन्दी स्नातकोत्तर उपाधिधारी तथा दर्जनों पी-एच. डी. उपाधिधारी तैयारी हो चुके हैं, जो केरल के कालेजों में प्राध्यापक पद पर कार्यरत है।

हिन्दी पत्रिकाएँ—केरल में हिन्दी पत्रिकाओं का इतिहास आज से लगभग चालीस वर्ष पहले से आरंभ होता है। इस अल्पावधि में कई पत्रिकाओं ने जन्म लिया और बहुतों ने अकाल मृत्यु भी प्राप्त की। हिन्दी पत्रिकाओं के विकास केलिए अनुकूल वातावरण केरल में तैयार नहीं हो सका। इसके पीछे कई कारण हैं। एक तो केरल अहिन्दी प्रदेश है, जहाँ हिन्दी पत्रिकाओं के अधिक पाठक मिलना कठिन है। दूसरे हिन्दी पत्रिका चलाना आर्थिक लाभ का काम नहीं रहा। जहाँ ग्राहकों की संख्या ही नगण्य है, वहाँ पत्रिका से क्या आर्थिक लाभ प्राप्त हो सकता है ! फिर भी जिन लोगों ने पत्रिका चलाने का साहस किया, वह इसलिए कि उनमें अदम्य उत्साह एवं राष्ट्रभाषा-प्रेम था। लेकिन यह राष्ट्रभाषा-प्रेम बिना पैसे के चल नहीं सकता था। तीसरे केरल से निकली पत्रिकाओं का स्तर भी ऐसा नहीं रहा कि वे उत्तर भारत से निकली पत्रिकाओं की स्पर्धा में ठहर सकें। एक तो स्तरीय पत्रिका का अभाव और फिर उत्तर भारत से प्रकाशित पत्रिकाओं की तुलना में अधिक मूल्य, इन दोनों कारणों से केरल की पत्रिकाओं को जन्म लेने के साथ ही साथ अंतिम सांस भी लेनी पड़ी। इन सब के अतिरिक्त एक कारण और भी था कि केरल में हिन्दी में सृजनात्मक साहित्यकारों की संख्या नाम-मात्र केलिए थी। हाँ अब तो बड़ी संख्या में सृजनात्मक प्रतिभा के साहित्यकार हो चुके हैं। फिर भी कहानी, कविता, एकांकी जैसी विधाओं में सशक्त लेखनी चलाने की क्षमता रखने वाले साहित्यकार आज भी विरले ही प्राप्त होंगे। अकेले लेख या अनुवाद से कब तक पत्रिका जी सकती है ? अतः सबसे बड़ी कमजोरी यह थी कि केरल से निकलने वाली पत्रिकाएँ नाम मात्र केलिए साहित्यिक थीं, बहुधा वे प्रचारात्मक या फिर परीक्षोपयोगी रहीं। इन सबसे महत्वपूर्ण कारण यह भी था कि पत्रिकाओं का संपादन करने की क्षमता रखने वाले संपादक नहीं मिले। संपादक कहलाने के मोह में पड़कर पत्रिका चलाना एक बात है और वास्तविक संपादन-क्षमता के आधार पर पत्रिका चलाना और बात है। केरल में सिर उठाकर अकाल में ही काल-कवलित कुछ पत्रिकाओं के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्तर, संपादकीय, प्रकाशित सामग्री आदि से अवगत होने पर इस बात में आश्चर्य केलिए गुंजाइश नहीं रहती कि वे जल्दी ही क्यों समाप्त हो गयीं। निरुद्देश्य पत्रिका दीर्घजीवी नहीं हो सकती। इस पृष्ठभूमि के साथ आगे हम केरल की हिन्दी-पत्रकारिता का एक संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत करेंगे।

केरल में अब तक 12–15 पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ, जिनमें से अधिकांश स्वातंत्र्योत्तर काल की उपज हैं। स्वातंत्र्यपूर्व काल की पत्रिकाओं में सबसे पहला नाम 'हिन्दी मित्र' का है, जो पहले-पहल अगस्त 1941 में नीलकंठन नायर के संपादकत्व में त्रिच्चूर से प्रकाशित हुई थी। हिन्दी सेवा समिति केलिए सरस्वती इलेक्ट्रिक प्रेस, तृश्शूर से यह मुद्रित होती थी। इसके अधिकतर लेखक केरलीय ही होते थे। यह पत्रिका साहित्यिक एवं प्रचारात्मक होती थी। आर्थिक कठिनाइयों के कारण यह पत्रिका अधिक दिन तक नहीं चल पायी। इसके तीन ही अंक निकले थे।

इस हिन्दी मित्र के प्रकाशन के उपरांत बहुत समय तक कोई पत्रिका केरल से नहीं निकली। संभवतः हिन्दी मित्र की दुर्गति एवं असमय में ही बंद हो जाना हिन्दी पत्र चलाने के इच्छुकों के सामने एक प्रश्न चिह्न बना रहा। अतः किसी ने बहुत समय तक इस ओर आगे बढ़ने का साहस नहीं दिखाया। फिर जनवरी 1950 में एक हिन्दी प्रेमी सज्जन बालकृष्णन् ने ओलवक्कोड से 'ललकार' पत्रिका का संपादन किया। इस पत्रिका के सहयोगी संपादक पी. नारायण तथा एम. एन. राजन थे। यह ललकार भारतीय संस्कृति की अखंड एकता की समर्थक एवं उद्घोषक रही। इसके लेखक उत्तर-दक्षिण दोनों के साहित्यकार रहे। इसने भारतीय संस्कृति के प्रबल पक्ष को उजागर करके दिखाने का व्रत लिया था। हिन्दी भाषा का प्रचार-प्रसार तथा उसकी उन्नति केलिए प्रयत्नशील होने का पावन संकल्प भी इस पत्रिका के पीछे था। इसने साहित्य-स्तर को पर्याप्त ऊँचा रखने की ओर विशेष ध्यान दिया था। यह पत्रिका स्कोलर प्रेस, पालघाट से मुद्रित हुआ करती थी। लगभग एक वर्ष तक चल पाने के बाद यह पत्रिका भी बंद हो गयी।

सुनने में आता है कि कोट्टयम के पं. नारायणदेव के संपादकत्व में विश्व भारती नामक एक पत्रिका भी कुछ दिनों तक निकलती रही। यह सारथी प्रेस, कोट्टयम से मुद्रित होती थी। इसके स्थायी लेखक थे अभयदेव। हिन्दी मलयालम वाङ्मय का परस्पर आदान-प्रदान इसका लक्ष्य रहा। इसका कोई अंक अब उपलब्ध नहीं है। इस कारण पत्रिका के स्तर के संबंध में कुछ कहना असंभव है। वैसे ही विश्वनाथ माल्या के प्रयत्नों से 'प्रताप' नामक पत्रिका भी दो तीन अंकों तक चली थी। वह भी अल्प समय में ही अकाल मृत्यु का ग्रास बन गयी। फरवरी 1951 से एक नयी पत्रिका 'अरविन्द' के नाम से कोल्लम से निकलने लगी थी। एन. के. उण्णित्तान, जी. सी. रंजनदास तथा कृष्ण किशोर के संयुक्त प्रयास से यह पत्रिका निकलती रही। विद्याभिवर्धिनी प्रेस, कोल्लम में यह मुद्रित होती थी। जैसा नाम वैसे इसके

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशित विषय भी बहुत ही आकर्षक थे। संपादकों में सच्ची लगन और उत्साह था। हिन्दी के विद्यार्थी को यथासंभव सहायता पहुँचाना पत्रिका का उद्देश्य रहा। इसमें अन्य विषयों के साथ ही सुन्दर मौलिक कहानियाँ भी प्रकाशित हुआ करती थीं। सामयिक विषयों, समस्याओं पर इसके संपादकीय भी महत्वपूर्ण रहे।

केरल की पत्रकारिता के इतिहास में विद्वान वासुदेवन पिल्लै के संपादकत्व में निकली राष्ट्रवाणी का समुचित आदर रहा। इसका पहला अंक 15 अगस्त 1953 में निकला और लगभग एक वर्ष तक वह लगातार प्रकाशित होती रही। वास्तव में यह पत्रिका वासुदेवन पिल्लै द्वारा संस्थापित तिरुवितांकूर हिन्दी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम की मुख-पत्रिका थी। यह त्रिभाषा पत्रिका थी और प्रति सप्ताह निकलती थी। हिन्दी, मलयालम तथा तमिल में लेख, अनुवाद, कहानियाँ और परीक्षोपयोगी सामग्री प्रकाशित होती थी। एक साहित्यिक पत्रिका का संपादन करना वासुदेवन पिल्लै का लक्ष्य नहीं रहा। इसका लक्ष्य प्रचारात्मक था। विभिन्न परीक्षाओं में बैठने वाले विद्यार्थियों के लाभार्थ सामग्री प्रदान करना इसका मुख्य उद्देश्य रहा। सभा की गतिविधियों का लेखा-जोखा भी इसमें दिया जाता रहा। इस पत्रिका ने केरल के अनेक नवोदित साहित्यकारों को लिखने की प्रेरणा दी। हिन्दी तथा मलयालम की कई साहित्यिक विधाओं के अनुवाद भी इसमें प्रकाशित हुए। पंचवटी, रामचरितमानस आदि के मलयालम अनुवाद इसमें क्रमशः प्रकाशित होते रहे।

केरल का सर्वाधिक लोकप्रिय हिन्दी पाक्षिक 'युगप्रभात' सन् 1956 से लेकर 1974 तक निरंतर सुचारु रूप से प्रकाशित होता रहा। पहले यह पाक्षिक एन. वी. कृष्ण वारियर तथा रविवर्मा के संपादकत्व में निकला, बाद में केवल रविवर्मा इसके संपादन-कार्य को संभालते आये। यह पाक्षिक केरल में ही नहीं समूचे भारत में प्रतिष्ठा प्राप्त कर सका। पहले से इसका स्तर इतना ऊँचा रहा कि इसने अखिल भारतीय ख्याति प्राप्त की। इसने केरल के तथा बाहर के लेखकों को स्थान दिया। केरलीय संस्कृति एवं साहित्य की गरिमा से भारतीयों को अभिभूत करने के विचार से इसमें मलयालम की रचनाओं के अनुवाद को अधिक प्रश्रय मिला। मलयालम के ही नहीं अन्य दक्षिणी भाषा-साहित्यों के अनुवाद भी इस पाक्षिक में बराबर स्थान पाते रहे। यह मातृभूमि प्रकाशन, कोषिकोड से निकलता आया। भले ही पूरे घाटे में यह पत्रिका निकलती थी तो भी मातृभूमि कार्यालय ने लगभग 15 वर्षों तक इसे सुचारु रूप से प्रकाशित करके अपने राष्ट्रभाषा-प्रेम का प्रोज्वल परिचय दिया। बड़े खेद की बात है कि 'युगप्रभात' जैसे स्तरीय पाक्षिक को भी अपनी आर्थिक कठिनाई तथा बढ़ते हुए कागज के मूल्य आदि के कारण बंद करने की नौबत आ गयी। युगप्रभात इस बात में गर्व अनुभव कर सकता है कि जितने दिन वह चला, ठीक ही चला तथा केरलीय सृजनात्मक प्रतिभाओं को सामने लाने में विशेष कार्य किया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जुलाई सन् 1957 से लगभग एक वर्ष तक एरणाकुलम से आर्य कैरली नामक पत्रिका निकलती रही। यह हिन्दी-मलयालम द्विभाषी पत्रिका थी। बाद में 1958 से दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की केरल शाखा की तरफ से 'केरल भारती' पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ, जो अनेक विघ्न-बाधाओं का सामना करते हुए छोटे-बड़े अपने आकारों में भी प्रकाशित होती आ रही है। इस पत्रिका को प्रारंभ करने में उस समय के सभा के मंत्री वेंकटेश्वरन जी का बड़ा हाथ रहा। पहले यह उन्हीं के संपादकत्व में प्रकाशित होती आयी। बाद में समय-समय पर आंजनेय शर्मा, नारायण देव, पी. नारायण, नागप्पा आदि इसका संपादन करते आये। इस पत्रिका ने केरल के हिन्दी साहित्यकारों को बड़ा प्रोत्साहन दिया और इसके माध्यम से कई कहानीकार, लेखक एवं अनुवादक हिन्दी साहित्य-क्षेत्र में आ सके। इस पत्रिका में प्रथम हिन्दी के लेख, कहानियाँ और अंत में मलयालम की सामग्री प्रकाशित होती है। भाव, भाषा आदि की दृष्टि से इसमें प्रकाशित अधिकतर रचनाएँ पर्याप्त संतोषजनक हैं। हाँ नयी प्रतिभाओं को स्थान देने की ओर भी इसका विशेष ध्यान रहा। केरल तथा बाहर के लेखकों की रचनाएँ इसमें समान रूप से स्थान पाती आ रही हैं। मलयालम तथा हिन्दी के कई विशिष्ट ग्रंथों के अनुवाद इसमें प्रकाशित होते आ रहे हैं। केरल भारती के पीछे एक बड़ी संस्था का बल है। इस कारण आर्थिक कठिनाइयों के बावजूद भी यह पत्रिका जीती आ रही है। वर्तमान में उसका जो लघु-आकार दृष्टिगोचर हो रहा है, उसे देखते हुए आशंका होने लगती है कि यह पत्रिका भी 'युगप्रभात' के समान संभवतः अपनी अंतिम सांस खींच रही है।

'केरल ज्योति' केरल हिन्दी प्रचार सभा की मुखपत्रिका है। इसका आरंभ अक्तूबर 1966 को हुआ। तब से आज तक यह मासिक पत्रिका प्रकाशित होती आ रही है। केरल हिन्दी प्रचार सभा की ओर से प्रकाशित यह पत्रिका राष्ट्रवाणी मुद्रणालय, तिरुवनंतपुरम में मुद्रित होती है। इसके प्रधान संपादक पी. जी. जोसफ तथा संपादक के. जी. बालकृष्ण पिल्लै हैं। युगप्रभात, केरल भारती आदि पत्रिकाओं के जैसे ही इसके भी लेखक समस्त भारतीय हैं। फिर भी हमें यह कहना पड़ता है कि केरल ज्योति के अधिकतर लेखक केरल के बाहर के लोग हैं। इस पत्रिका का स्तर सामान्यतया संतोषजनक है। समय-समय पर इसके कई विशेषांक भी निकले और निकलते आ रहे हैं। केरल के कुछ उत्साही नवयुवक साहित्यकारों, हिन्दी-प्रेमियों के निरंतर अथक प्रयास एवं निष्ठा के फलस्वरूप यह पत्रिका समस्त विघ्न-बाधाओं का सामना करती हुई उत्तरोत्तर प्रगति करती आ रही है।

केरल की हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में केरल हिन्दी साहित्य-मंडल की त्रैमासिक पत्रिका 'साहित्य मण्डल पत्रिका' का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। यह पत्रिका सितंबर 1973 से निकलती आ रही है। डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर के प्रधान संपादकत्व में प्रस्तुत पत्रिका पुलिकल प्रिंटेर्स, एरणाकुलम से मुद्रित हो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशित होती आ रही है। इसकी एक सुयोग्य संपादक-समिति है। बहुत ही उच्च-स्तरीय साहित्यिक पत्रिकाओं की श्रेणी में इसका नाम लिया जा सकता है। केरल तथा बाहर के अच्छे साहित्यकारों के शोध परक एवं आलोचनात्मक लेख, कविता संस्मरण, लघु कहानियाँ आदि इसके पृष्ठों को अलंकृत करते आ रहे हैं। केरल साहित्य-मंडल की गतिविधियों तथा केरल तथा बाहर होने वाले साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्य-कलापों का संक्षिप्त समाचार भी इसमें स्थान पाता आ रहा है। साहित्य-मंडल पत्रिका एक सदुद्देश्य से प्रेरित हो प्रकाशित हो रही है। राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में यह पत्रिका अपना विशिष्ट योगदान देती आ रही है। अन्य पत्रिकाओं के समान ही अपने प्रारंभ के दो-तीन वर्षों के भीतर ही यह पत्रिका भी आर्थिक कठिनाइयों का सामना करती आ रही है।

उपर्युक्त पत्रिकाओं के अतिरिक्त भी कुछ अन्य पत्रिकाएँ समय-समय पर प्रकाशित हुई हैं, जिनमें केरल ग्रंथशाला संघम् की पत्रिका ग्रंथालोकम् (1961), पी. जी. वासुदेव से संपादित होकर प्रकाशित केरल पत्रिका (1958), हिन्दी पुस्तक भण्डार के स्वामित्व में प्रकाशित 'भाव और रूप' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

केरल के प्रमुख हिन्दी साहित्यकार

(1) **अभयदेव**—जन्म कोट्टयम जिले के अन्तर्गत पल्लम् नामक गाँव में 12–7–1914 को हुआ। मद्रास विश्वविद्यालय से विद्वान परीक्षा पास की। हिन्दी से मलयालम में और मलयालय से हिन्दी में कई ग्रंथों का अनुवाद किया। एक तारा, अपूर्व बंगाल आदि हिन्दी से मलयालम में अनुवाद किये तो जो जीना भूल गयी, मिट्टी और नारी तथा केरलसिंह मलयालम से अनूदित ग्रंथ हैं। कई कहानियों का भी अनुवाद प्रस्तुत किया। हिन्दी सहकारी संघ के मंत्री तथा मलयालम के गीतकार के रूप में भी प्रसिद्ध हुए।

पता—पल्लम् (डाक), कोट्टयम् जिला, केरल।

(2) **आनंदशंकर माधवन**—शिक्षा : एम. ए.। मलयालम-भाषी हिन्दी-लेखकों में विशिष्ट स्थान है। एम. ए. तक की शिक्षा प्राप्त की है। समस्त भारत की पदयात्रा की है। संप्रति मदार विद्यापीठ, भागलपुर के संचालक हैं। 'प्राच्य भारती' मासिक पत्रिका का संपादन-कार्य भी करते आ रहे हैं। काव्य, उपन्यास, संस्मरण, निबंध आदि साहित्य की नाना विधाओं में साधिकारपूर्ण ढंग से लिखा है। प्रथम याम (जीवनी), बिखरे हीरे (सूक्तियाँ), अनामंत्रित मेहमान (उपन्यास), प्रसून पंथ और दीपाराधना (काव्य), अनलशलाका, हिन्दी आन्दोलन (चिन्तन एवं विचार-प्रधान निबंध) आदि प्रसिद्ध कृतियाँ हैं। 'अनामंत्रित मेहमान' बिहार राष्ट्रभाषा परिषद से एक हजार रुपये का पुरस्कार प्राप्त कर सका। प्रसव-वेदना (दो खण्ड), आरती, उषा, चित्रशाला, याम के फूल, जाह्नवी, माधव-निदान, नान्दी आदि अन्य प्रकाशित रचनाएँ हैं।

पता—'प्राच्य भारती', मदार विद्यापीठ (डाक), भागलपुर (बिहार)

(3) **आर. जनार्दनन् पिल्लै**—जन्म : 12–2–1919, तिरुवनंतपुरम। शिक्षा : एम. ए., केरल के हिन्दी-प्रचारकों, हिन्दी-प्रेमियों में इनका विशिष्ट स्थान है। मद्रास विश्वविद्यालय से हिन्दी विद्वान परीक्षा पास की। 1957 ई. में अलीगढ़ से हिन्दी में एम. ए. पास किया। महात्मा गांधी कालेज, तिरुवनंतपुरम में हिन्दी प्राध्यापक पद पर कार्यरत रहे। 'हिन्दी और मलयालम के आधुनिक खण्डकाव्य' पर शोध-कार्य में तल्लीन हैं। विद्यार्थियों केलिए कई छोटी कहानियाँ, जीवनियाँ, तथा पाठ्य-पुस्तकें लिखी हैं। मलयालम के दो नाटकों के अनुवाद 'गलत धारणाएँ बदलती हैं' तथा 'त्रिवेणी' प्रकाशित हुए।

पता—अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, एन. एस. एस. कालेज, पन्तलम, केरल।

(4) **ऋषिकेशन तम्पी**—तरुण पीढ़ी के प्रबुद्ध हिन्दी प्रचारक एवं हिन्दी सेवी। केरल हिन्दी साहित्य मंडल के मंत्री तथा मंडल पत्रिका के संपादक।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(5) ए. अरविन्दाक्षन—नवोदित साहित्यकार। लेख और आलोचना के क्षेत्र में ठोस कार्य करते आ रहे हैं। शिक्षा : एम. ए. तक। संप्रति कोचीन विश्वविद्यालय के शोध-छात्र। 'महादेवी के रेखाचित्र' प्रकाशित आलोचनात्मक कृति जो उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सन् 1976 में पुरस्कृत हुई। स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में लेखन-कार्य।

(6) ए. गणेश अय्यर—जन्म 9–2–1935, कालड़ी। शिक्षा—हिन्दी में एम. ए. आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम कविता में प्रेम और सौन्दर्य (एक तुलनात्मक अध्ययन) पर शोधप्रबंध पी-एच. डी. केलिए मेरठ विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया जा चुका है। सन् 1955 से कविता तथा लेख लिखते आ रहे हैं, जो केरल भारती, धर्मयुग, आदि में प्रकाशित हुए हैं। केरल का भविष्य (अनुवाद) पुस्तक रूप में प्रकाशित है। गोवर्धन मठाधिपति श्रीमद् शंकराचार्य की ओर से संस्कृत कार्यालय, अयोध्या ने 'विद्यालंकार' की उपाधि से सम्मानित किया है। पता—हिन्दी विभाग, श्रीशंकरा कालेज, कालड़ी, केरल।

(7) प्रोफसर ए. चन्द्रहासन (स्वर्गीय)—सन् 1905 में एरणाकुलम के पास एक सामान्य परिवार में जन्म। रसायनशास्त्र में बी. ए. करके मलबार में अध्यापक पद पर कार्य किया था। हिन्दी प्रचार के क्षेत्र में केरल हिन्दी प्रचार सभा के विविध पदों पर कार्य करते रहे। वे दक्षिण के सर्वप्रथम हिन्दी एम. ए. माने जाते हैं। केरल विश्वविद्यालय के प्रोफसर पद से कार्य-निवृत्त होते ही केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के निदेशक नियुक्त हुए। भारत सरकार, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग आदि की कई समितियों में काम किया। केरल में शिक्षा के क्षेत्र में हिन्दी को स्थान दिलाने में उनका बड़ा हाथ रहा। अच्छे लेखक एवं वक्ता। भारत के कई पत्र-पत्रिकाओं में लिखा है। हिन्दी-मलयालम कोष के सह-संपादक। केरल के हिन्दी प्रचार-प्रसार के कार्यों में उनका सक्रिय हाथ रहा।

(8) डा. एच. परमेश्वरन्—जन्म : अप्रैल 1936 ई. तिरुवनंतपुरम। शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। केरल के हिन्दी-प्रेमियों, निष्ठावान प्रचारकों में डा. परमेश्वरन् का महत्वपूर्ण स्थान है। निराला हिन्दी महाविद्यालय, तिरुवनंतपुरम के संस्थापक सदस्य। वर्षों तक वहाँ हिन्दी-अध्यापन का कार्य करते आये। हिन्दी में एम. ए., पी-एच. डी. तक की शिक्षा प्राप्त की। सहायक ग्रंथों के लेखक रूप में साहित्य-क्षेत्र में आये। उनके कुछ लेख स्थानीय पत्रिकाओं में प्रकाशित। वर्णनात्मक भाषाविज्ञान पर लिखी गयी उनकी पुस्तक 'भाषिकी' सन् 1976 में केन्द्र सरकार तथा उत्तर प्रदेश सरकार से पुरस्कृत हुई।
पता—हिन्दी प्राध्यापक, यूनिवर्सिटी कालेज, तिरुवनंतपुरम।

(9) डा. एन. आई. नारायणन्—लेखक और शोधकर्ता। आगरा विश्वविद्यालय से 'हिन्दी तथा मलयालम के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन' पर हिन्दी में पी-एच. डी. उपाधि ली। उक्त शोध-प्रबंध प्रकाशित हुआ है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पता—हिन्दी प्राध्यापक, एस. एन. कालेज, कोल्लम, केरल।

(10) **डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर**—जन्म सन् 1920 ई. मलाबार में। हिन्दी में एम. ए., पी-एच. डी.। संप्रति कोचीन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष तथा कला-संकाय के प्रधान। बड़े उत्साही हिन्दी-कार्यकर्ता एवं सफल मौलिक लेखक तथा अनुवादक। केरल साहित्य मण्डल पत्रिका के प्रधान संपादक के रूप में हिन्दी-पत्रकारिता के क्षेत्र में भी कार्यरत हैं। कई मौलिक एवं अनूदित रचनाएँ प्रकाशित, जिसमें से प्राचीन कवि केशवदास, आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम काव्य (शोध प्रबंध), सेवासदन की समीक्षा, केरल के प्रथम हिन्दी गीतकार महाराज स्वातितिरुनाल (जीवनी), राष्ट्रभारती को केरल का योगदान (परिचयात्मक इतिहास), निबंधोपहार (निबंध-संकलन) हिन्दी रचना मित्र, महाकवि रवीन्द्रनाथ (जीवनी), विज्ञान योगिनी (जीवनी), गद्यांजलि (संपादित), हिन्दी मलयालम व्यावहारिक कोष आदि मौलिक रचनाएँ तथा आधी घड़ी और जड़ें (अनुवाद) मुख्य हैं। कई बार पुरस्कृत हुए हैं। हिन्दी मलयालम व्यावहारिक कोष (उत्तर प्रदेश शासन से), विज्ञान योगिनी (केन्द्र सरकार से) तथा 'जड़ें' (उत्तर प्रदेश सरकार से) पुरस्कृत कृतियाँ हैं। एक सधे हुए लेखक, समीक्षक एवं अनुवादक के रूप में उनकी सेवाएँ स्तुत्य हैं।

पता—आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कोचीन विश्वविद्यालय, कोचीन 22 केरल।

(11) **डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर**—जन्म 29 दिसंबर 1923 को शास्तांकोटा केरल में। शिक्षा : एम. ए. (बनारस) डी. लिट्, एम. एड.। मलयालम-भाषी हिन्दी साहित्यकारों में सर्वाधिक प्रसिद्ध डा. नायर बहुमुखी कारयित्री प्रतिभा के धनी हैं। जन्मजात कवि, कहानीकार एवं नाटककार, हृदय से एक संवेदन शील अध्यापक एवं मस्तिष्क से आलोचक डा. नायर महात्म गांधी कालेज के हिन्दी विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष हैं। उनका लेखन-कार्य वर्षों पुराना है। उनका पहला लेख जो अत्यन्त महत्वपूर्ण है, सन् 1956 में आगरा विश्व-विद्यालय के मुखपत्र में प्रकाशित हुआ और तब से आज तक उनकी सशक्त लेखनी निर्बाध चलती आ रही है। वे सृजनशील साहित्यकार हैं और गत बीस से अधिक वर्षों से सुनियोजित एवं व्यवस्थित रूप से हिन्दी साहित्य की नाना विधाओं को परिपुष्ट करते आ रहे हैं। मौलिक लेखन के क्षेत्र में उनकी देन बेजोड़ है और केरल का कोई साहित्यकार उनकी सानी नहीं रखता। भारतीय साहित्य, भारतीय साहित्य और कलाएँ (समीक्षात्मक निबंध-संग्रह), निबंध मंजूषा (निबंध संकलन), हार की जीत, प्रोफेसर और रसाइया (कहानी-संग्रह), 'कुरुक्षेत्र जागता है', 'द्विवेणी', सेवाश्रम', 'युग संगम', 'देवयानी' (नाटक), हिमालय गरज रहा है, (काव्य) आदि उनकी बहुप्रशंसित एवं बहुचर्चित कृतियाँ हैं जिन पर आलोचनाएँ देश की प्रमुख पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। महादेवी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभिनन्दन ग्रंथ के सह-सम्पादक रहे हैं। तुलसी मानस चतुश्शती ग्रंथ, सूर पंचशती स्मारक ग्रंथ, निराला (निबंध संकलन) आदि प्रसिद्ध स्मारिका ग्रंथों में तथा देश की उच्च स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में उनके दर्जनों साहित्यिक निबंध प्रकाशित हुए हैं। अपने युग एवं परिस्थिति से प्राप्त संवेदनाओं को अपने निजी आदर्शों से संवलित कर सशक्त भाषाशैली में प्रस्तुत कर पाठकों को हँसाने-रुलाने की उनकी क्षमता ही उनके साहित्य की सफलता है। उनका 'देवयानी' नाटक तथा 'प्रोफेसर और रसोइया' कहानी-संग्रह भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत हुए हैं। मथुरा की कला संस्कृति साहित्य परिषद ने डॉ. नायर को 'साहित्य मार्तण्ड' की उपाधि देकर सम्मानित किया है।

डॉ. नायर मात्र हिन्दी के साहित्यकार नहीं; मलयालम भाषा एवं साहित्य को भी उनपर गर्व है। केरल में संभवतः ऐसा कोई हिन्दी साहित्यकार नहीं, जो इनके जैसे हिन्दी तथा मलयालम में समान क्षमता से लिख सका हो। मलयालम में लिखी गयी उनकी रचनाएँ एक दर्जन से अधिक हैं। उनका 'सीतम्मा' (उपन्यास), गांधीजी, चतुरंगम्, निरंकुश स्त्रियां, मोची की बेटी, जैसी बृहत् रचनाएँ कैरली को उनकी अनुपम देन हैं। 'डेथ और रिससेरेक्शन' उनकी अंग्रेजी रचना है।

डॉ. नायर भारतीय संस्कृति के उन्नायक एवं संपोषक हैं। राष्ट्र प्रेम एवं मानवीय संवेदना से उनकी रचनाएँ अनुप्राणित हैं। वे एक सफल चित्रकार भी हैं। गांधीजी के आदर्शों से प्रेरित होकर उन्होंने जहाँ अपने जीवन को आदर्शमय बना दिया वहाँ देश में महात्माजी के विचारों के प्रचार-प्रसार में अविराम प्रयत्न भी किया है। ओट्टपालम का गांधी विज्ञान भवन उनके कर्मठ जीवन का स्मारक है। वे पालघाट जिले की गांधी शताब्दी समिति के वाइस चेयरमैन और ओट्टापालम के चेयरमेन रहे थे। कालिकट विश्वविद्यालय के प्रारंभ से ही वे कई पदों पर कार्य करते रहे। इस प्रकार उच्चकोटि के साहित्यकार होने के साथ ही साथ वे कई सांस्कृतिक संस्थाओं के कार्यकर्ता भी हैं। वे उच्चकोटि के वक्ता भी हैं।

भारत के कई स्थानों से प्रकाशित संकलनों में डॉ. नायर की रचनाएँ आयी हैं। हिन्दी प्रदेशों से निकलनेवाले विशेषांकों में उनकी रचनाओं का संकलित होना साधारण सी बात है। उनकी कई रचनाओं का भारत की कई भाषाओं में अनुवाद निकला है।

डा. नायर की अनुपम साहित्य-साधना उत्तरोत्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होती आ रही है। यह बड़े सौभाग्य की बात है और उसपर मलयालम भाषी हिन्दी साहित्यकारों को बड़ा गर्व अनुभव होगा कि उत्तर प्रदेश में 'डा. नायर अभिनंदन समिति' का आयोजन हो चुका है, जो शीघ्र ही डा. नायर के व्यक्तित्व

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एवं कृतित्व पर एक अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित करने जा रही है।

पता—आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, महात्मा गांधी कालेज, तिरुवनंतपुरम

(12) **डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै**—जन्म 29-8-1935 को पन्तलम में। शिक्षा : पी-एच. डी. (उस्मानिया विश्वविद्यालय)। डा. पिल्लै उच्चकोटि के निबंधकार, गंभीर समीक्षक एवं सशक्त अनुवादक के रूप में हिन्दी साहित्य-क्षेत्र में अपनी प्रतिष्ठा बना सके हैं। पूर्वधारणा रहित गंभीर अध्ययन एवं मौलिक चिन्तन तथा सहज सरल अभिव्यक्ति एक साहित्यकार के रूप में डा. पिल्लै की विशेषताएँ हैं। हिन्दी तथा मलयालम साहित्य की नाना विधाओं पर वे सन् 1956 से लिखते आ रहे हैं और भारत की प्रसिद्ध पत्रिकाओं में उनके एक सौ से अधिक निबंध प्रकाशित हुए हैं।

डा. पिल्लै की मौलिक एवं अनूदित बीस से अधिक पुस्तकें हैं। हिन्दी मलयालम तुलनात्मक व्याकरण, विद्यार्थी हिन्दी निबंध, प्रबंध-प्रदीप (निबंध-संग्रह), हमारे कलाकार, अध्ययन और अनुसंधान, कैरली वैभव, (समीक्षात्मक निबंध-संकलन), काव्य दीपिका (काव्यशास्त्र), हिन्दी साहित्य का सुगम इतिहास, प्रसाद और कामायनी, पंत छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व, पंत-काव्य में बिम्ब योजना, संत कबीर (आलोचना-साहित्य), दक्षिण में रामकथा (सह-संपादक), काव्य-प्रसून, राजभाषा प्रसून, गद्य चंद्रिका (पाठ्य पुस्तकें) आदि उनकी मौलिक कृतियों में मुख्य हैं। अनुवाद के क्षेत्र में भी उनका सराहनीय व्यक्तित्व है। उनके द्वारा प्रस्तुत ज्ञानेश्वरी गीता का मलयालम अनुवाद, एषुत्तच्छन् कृत 'अध्यात्म रामायण' एवं 'उत्तर रामायण' का देवनागरी लिप्यन्तरण सहित हिन्दी-अनुवाद विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कई स्तरीय पुस्तकों की परीक्षोपयोगी समीक्षाएँ भी प्रस्तुत की हैं, जिनमें निर्मला : एक अध्ययन, प्रतिज्ञा की समीक्षा विशेष उल्लेखीय है। डा. भीमसेन निर्मल के सहयोगी संपादक के रूप में वर्तमान में एक बृहत् 'हिन्दी-हिन्दी तेलुगु कोष' का संपादन भी किया है। डा. पिल्लै की पुस्तकों की समीक्षाएँ देश की नाना पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं और सभी ने उनके समीक्षक-व्यक्तित्व की बड़ी प्रशंसा की है। वाणी सरोवर (लखनऊ) तथा निरपरा (मलयालम—हैदराबाद) के संपादक-सदस्य के रूप में भी वे योग्य सेवाएँ अर्पित करते आ रहे हैं। उनका शोध-प्रबंध 'पंत-काव्य में बिम्ब-योजना' हिन्दी केलिए उनकी अनुपम देन है और उत्तर प्रदेश सरकार ने उसे पुरस्कृत भी किया है।

पता—मंत्री, दक्षिणांचलीय साहित्य समिति, गांधीनगर, हैदराबाद-500380

(13) **डॉ. एन. रामन् इलेडम्**—जन्म : 5-4-1925 को सुप्रसिद्ध कालड़ी नामक स्थान में। शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। डॉ. रामन् इलेडम् की हिन्दी तथा मलयालम साहित्य पर आलोचना में विशेष अभिरुचि है। उनकी साहित्य-साधना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सन् 1950 से आरंभ होती है और स्थानीय पत्रिकाओं में उनके लेख आदि प्रकाशित होते आ रहे हैं। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के विशेष निमंत्रण पर मलयालम साहित्य की गतिविधियों पर भाषण देने केलिए वे गत वर्ष गोरखपुर, इलाहाबाद, और कानपुर विश्वविद्यालयों में गये थे। उनकी 'हिन्दी मलयालम स्वयं शिक्षक' प्रकाशित रचना है और शोध-प्रबंध 'हिन्दी तथा मलयालम की समीक्षा : तुलनात्मक अध्ययन' मुद्रणाधीन है। डॉ. इलेडम् एक सफल लेखक तथा मौन साधक हैं।

पता—अध्यक्ष, स्नातकोत्तर एवं अनुसंधान विभाग (हिन्दी), सेन्ट तोमस कालेज, पालाई, केरल।

(14) **डा. एन. रामन् नायर**—जन्म : 16–5–1931। शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। डा. रामन् नायर एक अनुवादक, कहानीकार और समीक्षक हैं। स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में उनके समीक्षात्मक लेख प्रकाशित होते आ रहे हैं। 'हिन्दी तथा मलयालम के भक्ति कालीन काव्य में वात्सल्य रस' उनका शोध-विषय था। यह शोध-प्रबंध प्रकाशित हो चुका है। 'होरेस की काव्य-कला' तथा 'बाइबिल की कहानियाँ' प्रकाशित हैं। रोमी काव्यशास्त्री होरेस को हिन्दी के माध्यम से भारतीयों केलिए सुलभ बनाने का उनका प्रयास प्रशंसनीय है। 'बाइबिल की कहानी' की विशिष्टता स्वयं सिद्ध है। उत्तर प्रदेश सरकार के द्वारा उक्त ग्रंथ पुरस्कृत हुआ है। पहले डा. नायर सनातन धर्म कालेज में प्राध्यापक रहे, वर्तमान में कोचीन विश्वविद्यालय से संबद्ध हैं।

पता—हिन्दी विभाग, कोचीन विश्वविद्यालय, कोचीन 22, केरल।

(15) **एन. वी. कृष्ण वारियर**—जन्म—15–5–1917 को नेरुविश्शेरी, केरल में। शिक्षा : एम. ए., एम. लिट्। श्री वारियर हिन्दी तथा मलयालम में समान अधिकार रखते हैं। अनुवाद तथा मौलिक रचनाओं से दोनों साहित्यों की श्री-वृद्धि करते आ रहे है। उन्होंने कई हिन्दी ग्रंथों का मलयालम अनुवाद प्रस्तुत किया है और मलयालम में स्वतंत्र लेखन भी हुआ है। 'काशीनाथ' और 'देवदास' हिन्दी ग्रंथों के मलयालम अनुवाद हैं। मलयालम में उन्होंने कविता तथा कहानियाँ लिखी हैं। एक सफल अनुवादक के रूप में उनका विशेष स्थान है।

पता—मातृभूमि, कालिकट (डाकघर), केरल।

(16) **एन. वेंकटेश्वरन**—एक लेखक की अपेक्षा एक सफल हिन्दी प्रचारक के रूप में उनका विशिष्ट व्यक्तित्व है। वे हिन्दी की पुरानी पीढ़ी के कार्यकर्ताओं में से एक हैं। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास के प्रान्तीय मंत्री, शिक्षा मंत्री तथा परीक्षा मंत्री के पदों पर रहकर उन्होंने हिन्दी की सेवा की है। उनके संपादन में केरल भारती पत्रिका पहले प्रकाशित होती रही। इस पत्रिका ने केरल के तरुण साहित्यकारों को प्रोत्साहन दिया। वेंकटेश्वरन ने केरल-भारती,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी प्रचार समाचार, दक्षिण भारत आदि पत्रिकाओं में लेखन-कार्य भी किया। उनकी रचना है 'केरल संस्कृति' जो केन्द्र सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हुई है।

पता—द्वारा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास–17।

(17) **एम. के. रामन् एषुत्तच्छन्**—एक सफल प्राध्यापक। हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय में वर्षों से अध्यापन कार्य में लगे हुए हैं। इस दीर्घकालीन अनुभव को 'राजभाषा शिक्षण' नामक पुस्तक में साकार रूप दिया है। यह ग्रंथ प्रशिक्षण महाविद्यालय के छात्राध्यापकों को दृष्टि में रखकर लिखा गया है।

पता—प्राध्यापक, हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय, रामवर्मपुरम, त्रिचुर, केरल।

(18) **एम. के. वेलायुधन नायर**—श्री नायर एक अनुभवी हिन्दी प्रचारक एवं कार्यकर्ता हैं। उन्होंने अपना जीवन ही हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में अर्पित कर दिया है। उनकी निष्ठा एवं कठोर परिश्रम का फल है कि केरल हिन्दी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम दिन-ब-दिन प्रगति के पथ पर अग्रसर होती आ रही है। एक लेखक की अपेक्षा एक प्रचारक के रूप में हिन्दी को उनका योगदान अविस्मरणीय रहेगा। फिर भी कभी-कभी साहित्य-सेवा भी करते आ रहे हैं। उनके कुछ फुटकर लेख इधर-उधर पत्रिकाओं में विकीर्ण हैं।

पता—मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा, तिरुवनन्तपुरम 14, केरल।

(19) **डा. एम. जार्ज**—डा. जार्ज केरल के स्तरीय लेखकों में से एक हैं। शिक्षा : एम. ए., डी. लिट्। वे वर्षों से काथोलिकेट कालेज, पत्तनमतिट्टा में हिन्दी प्राध्यापक पद पर कार्य करते आ रहे हैं। लेखन के प्रारंभिक दिनों में विद्यार्थियों के लाभार्थ हिन्दी स्वबोधिनी, हिन्दी रचना आदि से संबंधित पुस्तकें लिखते रहे। पी-एच. डी. केलिए तुलसीदास और एषुतच्छन् का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया था तो डी. लिट् केलिए भारतीय भक्ति आन्दोलन को विषय चुना। उनके दोनों शोध-प्रबंध संभवतः अप्रकाशित हैं। 'केरल की भक्ति साधना' पर भी एक पुस्तक लिखी है। डा. जार्ज उत्साही प्राध्यापक, अच्छे निबंधकार तथा सफल समीक्षक हैं।

पता—आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, काथोलिकेट कालेज, पत्तनमतिट्टा, केरल।

(20) **डॉ. एस. एन. गणेशन**—जन्म 2-2-1930। शिक्षा : एम. ए. पी-एच. डी.। डॉ. गणेशन एक मंजे हुए समीक्षक, कहानीकार और निबंधकार हैं। उनका शोध-प्रबंध 'हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन' अपने ढंग का विशिष्ट ग्रंथ है जिसमें लेखक के विशद एवं व्यापक अध्ययन तथा गवेषणात्मक दृष्टि का परिचय मिलता है। मथुरा की कला, संस्कृति साहित्य परिषद ने इस पुस्तक पर उन्हें 'साहित्य मार्तण्ड' की उपाधि देकर सम्मानित किया है। डॉ. गणेशन् एक मौन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सारस्वत सेवक हैं। 'नाचती लहरें' तथा 'काव्य रूप मंथन' उनकी इतर रचनाएँ हैं।

पता—प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, मद्रास विश्वविद्यालय, मद्रास।

(21) **श्रीमती एस. तंकमणि अम्मा**—जन्म 18-3-1950 को तिरुवनंतपुरम में। शिक्षा : एम. ए.,। हिन्दी खण्डकाव्यों पर उन्होंने शोधकार्य किया है। अपने विद्यार्थी जीवन में तंकमणि अम्मा एक होनहार विद्यार्थिनी रहीं और एम. ए. सर्वप्रथम उत्तीर्ण किया। काव्य-रचना, निबंध एवं एकांकी लेखन में उनकी विशेष अभिरुचि है। ये रचनाएँ सामयिक पत्र-पत्रिकाओं में स्थान पा चुकी हैं। हिन्दी के समानांतर मलयालम साहित्य पर भी उनका व्यापक अध्ययन है। 'मलयालम के खंडकाव्य' उनकी प्रकाशित समीक्षात्मक रचना है, जिसपर उन्हें उत्तर प्रदेश सरकार का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।

पता—हिन्दी प्राध्यापिका, गवर्नमेन्ट ब्रेनन कालेज, तेल्लिच्चेरी, केरल।

(22) **एस. राजप्पन नायर**—जन्म : 30-11-1923 तिरुवनंतपुरम। शिक्षा : एम. ए. एम. एड.। श्री नायर का कार्यक्षेत्र प्रशिक्षण महाविद्यालयों से संबद्ध है। उनकी दो पुस्तकें 'राष्ट्रभाषा शिक्षण' तथा 'शिक्षा मनोविज्ञान' प्रकाशित हैं। प्रशिक्षण महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम को दृष्टि में रखकर तैयार की गयी ये दोनों रचनाएँ महत्वपूर्ण हैं और हिन्दी में तत्संबंधी ग्रंथों की कमी को पूरा करने में सहायक हैं।

पता—प्राध्यापक, प्रशिक्षण महाविद्यालय, केरलवर्मपुरम, केरल।

(23) **एस. लक्ष्मण शास्त्री**—जन्म : वैकम् में। बाल्यकाल से ही हिन्दी के प्रति विशेष लगाव रहा। वर्तमान में सोवियत दूतावास से संबद्ध हैं। दिल्ली में रहकर हिन्दी तथा अंग्रेज़ी पत्रकारिता के क्षेत्र में सराहनीय कार्य करते आ रहे हैं। हिन्दी में भारतीय साहित्य, अंग्रेजी में 'कण्टेम्पेरेरी इन्डियन लिटरेचर' निकालते आ रहे हैं। एक सफल अनुवादक के रूप में श्री लक्ष्मण शास्त्री का विशिष्ट स्थान है। मलयालम के कई विशिष्ट ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है, जिनमें 'उत्थान', 'पूँजी' तथा 'पद्मावती' विशेष महत्व रखते हैं।

पता—संपादक, भारतीय साहित्य, दिल्ली।

(24) **कुन्निक्कुषि कृष्णन कुट्टी**—कृष्णन कुट्टी केरल के प्रबुद्ध लेखकों में से एक हैं। हिन्दी साहित्य केलिए अज्ञात हिन्दी के गीतकार महाराजा स्वातितिरुनाल् के काव्य को उजागर करने केलिए उन्होंने स्वातितिरुनाल के भजन-कीर्तन का संपादन किया, जिसमें भूमिका रूप में केरल में संगीत, स्वातितिरुनाल का व्यक्तित्व आदि पर भी प्रकाश डाला गया है। बालकोपयोगी साहित्य-निर्माण में भी उनका ध्यान रहा। कविवर रवीन्द्रनाथ, गौरी शंकर, शकुन्तला नाटक और धनुषयज्ञ उनकी ऐसी ही रचनाएँ हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पता—जनसंपर्क विभाग, केरल सरकार, तिरुवनंतपुरम् ।

(25) **डा. के. आर. शशिधरन पिल्लै**—शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी. । डा. पिल्लै केरल के नवोदित हिन्दी साहित्यकारों में अपना स्थान रखते हैं। वे मुख्यतः निबंधकार के रूप में सामने आ रहे हैं। उनके कई साहित्यिक निबंध स्थानीय पत्रिकाओं, स्मारिकाओं में स्थान पा सके हैं। 'निराला और जी. शंकर कुरुप के काव्यों का तुलनात्मक अध्ययन' उनका शोध-विषय रहा, जो अप्रकाशित है।
पता—द्वारा साहित्य मंडल पत्रिका, केरल हिन्दी साहित्य मंडल, कोचीन ।

(26) **डा. के. एस. मणि**—मलयालम भाषी हिन्दी-लेखकों में डा. के. एस. मणि का अपना स्थान है। वे पहले केरल के हिन्दी अधिकारी के पद पर कार्य कर चुके हैं। वर्तमान में केरल विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक हैं। 'वल्लत्तोल एवं मैथिलीशण गुप्त के काव्यों का तुलनात्मक अध्ययन' उनका शोध-विषय रहा। प्रस्तुत शोध-प्रबंध उनके समीक्षक-व्यक्तित्व का द्योतक है।
पता—मणिमन्दिरम, तिरुवनंतपुरम–4, केरल ।

(27) **के. ए. सुब्रह्मण्य अय्यर**—श्री अय्यर केरल प्रांत के बाहर रहकर हिन्दी साहित्य एवं मलयालम साहित्य की सेवा में तल्लीन वयोवृद्ध साहित्यकार हैं। यह बड़े दुख की बात है कि केरल के हिन्दी साहित्यकारों में कहीं भी इनका उल्लेख नहीं हुआ है। संभवतः केरल के हिन्दी साहित्यकारों को केरल के बाहर रहकर हिन्दी-सेवा करने वाले विद्वानों के प्रति परहेज हो। डा. अय्यर लखनऊ विश्वविद्यालय तथा वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय के उपकुलपति पद पर कार्यरत रहकर अवकाश-प्राप्त व्यक्ति हैं। उन्होंने मलयालम महाभारत का सानुवाद लिप्यन्तरण प्रस्तुत किया है और प्रस्तुत विशालकाय ग्रंथ भुवनवाणी ट्रस्ट, लखनऊ से प्रकाशित भी हो चुका है।
पता—द्वारा भुवनवाणी ट्रस्ट, 405/128 चौपटियाँ रोड़, लखनऊ–3 ।

(28) **डा. के. जी. प्रभाकरन**—नवोदित साहित्यकारों में डा. प्रभाकरन भी एक हैं। केरल से प्रकाशित मंडल पत्रिका में वे बहुधा लिखा करते हैं। 'अमर जगत' पत्रिका में भी उनके एक दो निबंध प्रकाशित हुए हैं।

(29) **के. जे. जाण**—केरल के निबंधकारों में श्री जाण का स्थान है। वे पहले केरल भारती पत्रिका में मलयालम साहित्य पर लिखते आये। आजकल साहित्य मंडल पत्रिका तथा हिन्दी प्रचार समाचार में भी लिखते आ रहे हैं। मलयालम साहित्य की विधाओं को हिंदी माध्यम से प्रकाशित करने में उनका सक्रिय हाथ है।
पता—द्वारा साहित्य मण्डल पत्रिका, कोचीन । केरल ।

(30) **के. जे. जोसफ**—जन्म 1933 । जोसफ ने एम. ए. तक की शिक्षा पायी है। सन् 1955 से लेखन-कार्य में लगे हुए हैं। समीक्षा, काव्य-रचना एवं भाषण-कला में विशेष अभिरुचि है। एक पुस्तक 'कैरली साहित्य और भारतीय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपन्यास' प्रकाशित हुई हैं और दूसरी रचना 'केरल की शिक्षा-योजना' मुद्रण में है।

पता—प्राध्यापक, क्राइस्ट कालेज, इरिंजालकुड़ा, केरल।

(31) **के. नारायण**—जन्म 15-8-1925। विद्वान के. नारायण नाटककार, कहानीकार एवं आलोचक हैं। उनकी दर्जनों रचनाएँ विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। वे कर्णाटक संगीत के विद्वान हैं और उससे संबंधित कई लेख मासिक 'संगीत' में प्रकाशित हुए हैं। बालकों केलिए कई रसीली कहानियाँ भी लिखी हैं। उनकी एक पुस्तक 'कर्णाटक संगीत' प्रकाशित हुई है। के. नारायण प्रतिभा शाली साहित्यकार हैं।

पता—टी. सी. 20/94, गांधारी अम्मन कोइल रोड, पुत्तनचन्ता, तिरुवनंतपुरम्।

(32) **डॉ. के भास्करन नायर**—जन्म 26-1-1913 को वैक्कम् के पास वटयार में। शिक्षा एम. ए., पी-एच. डी.। केरल के प्रथम श्रेणी के साहित्यकार एवं हिन्दी प्रचारक के रूप में डॉ. भास्करन नायर का महत्वपूर्ण स्थान रहा। विश्वविद्यालय स्तर पर हिन्दी को पठन-पाठन का विषय बनाने में इनका महत्वपूर्ण हाथ रहा। हिन्दी और मलयालम की कृष्णभक्ति पर शोधप्रबंध लिखकर अलीगढ़ विश्व-विद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। यह पुस्तक रूप में प्रकाशित भी हो चुका है। हिन्दी तथा मलयालम भाषा पर उनका गहरा अध्ययन रहा। उनकी दूसरी कृति 'मलयालम साहित्य का इतिहास' है। उनकी उपर्युक्त दोनों कृतियाँ पुरस्कृत हैं। हिन्दी तथा मलयालम के भक्ति-साहित्य पर वे अनुसंधान निरत थे कि उनकी आकस्मिक मृत्यु हुई। इस कारण उनका एक और ग्रंथ 'केरल के संत' भी अधूरा ही रह गया। वास्तव में डॉ. भास्करन नायर एक मेधावी साहित्यकार एवं सच्चे हिन्दी-प्रेमी थे।

(33) **के. रविवर्मा**—रविवर्मा एक सफल अनुवादक एवं निबंध-लेखक हैं। केरल से निकलने वाली 'युगप्रभात' पत्रिका के वे वर्षों सह-संपादक रहे। भाषा पर रविवर्मा का अच्छा अधिकार है। उनके प्रसिद्ध अनूदित ग्रंथ हैं 'दादा का हाथी' तथा 'अतीत के दिन'। उनकी फुटकर रचनाएँ विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित होती आ रही हैं।

(34) **के. वासुदेवन पिल्लै (स्वर्गीय)**—जन्म 1909 ई. में पल्लिच्चल नामक गाँव में। शिक्षा : साहित्यरत्न तक। श्री पिल्लै कर्मठ हिन्दी प्रचारक एवं साहित्य-सेवी थे। केरल में सर्वप्रथम साहित्यरत्न उत्तीर्ण होने का उन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होंने 1934 में तिरुवितांकूर हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना की, जो बाद में केरल हिन्दी प्रचार सभा के नाम से प्रसिद्ध हुई। श्री पिल्लै भावुक कवि, सफल साहित्यकार और संपादक थे। उनके संपादन में पहले राष्ट्रवाणी पत्रिका निकलती थी। उनकी कहानियाँ, निबंध आदि कई पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हैं, लेकिन उनका संकलन-कार्य नहीं हुआ है। उसकी लिखी हुई 'हिन्दी स्वयं शिक्षक' पुस्तक वर्षों के उपरांत आज भी विद्यार्थियों, हिन्दी-प्रेमियों का मार्ग-दर्शन करती आ रही हैं।

(35) **डा. जी. गोपीनाथन**—केरल के नवोदित तरुण साहित्यकारों में डा. गोपीनाथन का नाम लिया जा सकता है। इनके एकाध लेख इधर-उधर पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। उन्होंने 'केरलीयों की हिन्दी को देन' पर शोध-ग्रंथ लिखकर अलीगढ़ विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. ली है। हाल ही में उनके संपादन में 'मलयालम की नयी कविताएँ' शीर्षक से एक पुस्तक प्रकाशित हुई है, जिसमें मलयालम के अत्याधुनिक कवियों के गीत तथा उनका अनुवाद प्रस्तुत है।

पता—हिन्दी विभाग, कालिकट विश्वविद्यालय, केरल।

(36) **डा. जेकब पी. जार्ज**—अच्छे समीक्षक एवं लेखक हैं। उन्होंने 'आधुनिक हिन्दी गद्य और गद्यकार' विषय पर शोध-कार्य करके पी-एच. डी. ली है और यह शोध-प्रबंध पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है।

पता—हिन्दी विभाग, सेंट-जान्स कालेज, अंचल, केरल।

(37) **डा. टी. के. सरलादेवी**—जन्म 5-4-1932, एरणाकुलम। शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। डा. सरलादेवी एक सफल हिन्दी साहित्यकार हैं। वैसे केरल के प्रमुख हिन्दी-सेवियों में भी एक हैं। कविता पढ़ने और पढ़ाने में उनकी विशेष अभिरुचि है। उनकी कुछ कहानियाँ और कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। हिन्दी की कुछ कहानियों तथा एकांकियों का मलयालम अनुवाद भी प्रस्तुत किया है। गत पन्द्रह-बीस वर्षों से उनकी साहित्य-सेवा चलती आ रही है। इस बीच कुछ समीक्षात्मक निबंध भी पत्रिकाओं में प्रकाशित किये हैं। 'प्रसाद और गुप्त जी के काव्य में नारीत्व का चित्रण पर शोध-प्रबंध लिखा है। 'हिन्दी साहित्य में नारी : भूमिका' उनकी प्रकाशित समीक्षात्मक कृति है। यह कृति केन्द्र सरकार से पुरस्कृत हुई है। लेखिका का भाषा पर आश्चर्यजनक अधिकार है।

पता—प्रोफसर, हिन्दी विभाग, महाराजास कालेज, एरणाकुलम।

(38) **डा. दामोदर प्रसाद**—जन्म 17-2-1917 ई. कोल्लम में। शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। डा. दामोदर प्रसाद कविता तथा कहानी में विशेष अभिरुचि रखते हैं। वैसे वे कवि, कहानीकार, जीवनी-लेखक एवं समीक्षक हैं। उनकी साहित्य साधना 1950 से आरंभ होती है और कई विद्वानों की प्रशंसा के पात्र बने हैं। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, केरल ने रजत-जयन्ती महोत्सव के अवसर पर उनकी दीर्घकालीन हिन्दी साहित्य-सेवा के उपलक्ष्य में उनका सम्मान किया था। उनकी प्रकाशित कृतियों में तीन मूर्ति (कविता-संकलन), प्रसाद कथाएँ, स्वतंत्रता के सिपाही (बालकोपयोगी जीवन चरित) तथा 'सेवासदन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समीक्षा' प्रमुख हैं। 'रूप और रुपये' शीर्षक कहानी पुरस्कृत हुई थी। 'हिन्दी और मलयालम के सामाजिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोष-प्रबंध लिखा था और यह शोध-प्रबंध मुद्रण की प्रतीक्षा में है। भाषा और शैली की दृष्टि से डा. प्रसाद एक सफल लेखक हैं।

पता—अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, श्रीनारायण वनिता कालेज, कोल्लम, केरल।

(39) **पं. नारायणदेव**—पुराने हिन्दी प्रचारक पं. नारायणदेव कवि एवं समीक्षक हैं। देव केरलीय के नाम से उनकी कई कविताएँ प्रकाश में आयी हैं। 'गांधीसप्तक' 'आरती' कविता संकलन हैं। उनमें कवि केलिए आवश्यक उर्वर कल्पना एवं भावना का विलास है। वैसे ही हिन्दी-प्रेमियों तथा विद्यार्थियों के लाभार्थ भी उन्होंने कुछ रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। 'हिन्दी प्रबोध' तथा 'आँसू' एक अध्ययन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भाषा पर देव का अधिकार प्रशंसनीय है।

पता—देव केरलीय, श्री निकेतन, मुट्टम्वलम्, कोट्टयम–4

(40) **श्रीमती पद्मिनी मेनन**—जन्म 1940, एरणाकुलम। शिक्षा : एम. ए.। श्रीमती पद्मिनी मेनन ने हिंदी की सेवा में अभूतपूर्व कार्य करके दिखाया है। हिंदी विश्वकोष के निर्माण में भी अपना योगदान दिया है। उनका लिखा 'पुराण संदर्भ कोष' एक सराहनीय प्रयास है। यह ग्रंथ विद्यार्थियों केलिए विशेष रूप से उपयोगी है। इस प्रकार उन्होंने हिंदी के एक अभाव की पूर्ति कर डाली है। उनकी यह साहित्य-सेवा चिरकाल तक स्मरण की जाएगी। उनकी दूसरी रचना है 'यादें' जो संस्मरणात्मक निबंधों का संग्रह है जो केंद्र सरकार से पुरस्कृत हुई है। उन्होंने मलयालम के उपन्यासकार एम. टी. वासुदेवन नायर की 'नालुकेट्टु' पुस्तक तथा करणसिंह के 'फिलासफी आफ अरविन्दों' का भी अनुवाद प्रस्तुत किया है।

पता—35/923, रविपुरम रोड़, कोचीन–16

(41) **पी. आर. भास्करन नायर**—जन्म : 16–9–1925, आलप्पी। शिक्षा : एम. ए.। सन् 1950 से 1962 तक सनातन धर्म कालेज, केरल में प्राध्यापक पद पर कार्यरत रहे। सन् 1962 से भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के क्षेत्रीय अधिकारी के पद पर कार्यरत हैं। उनके कई आलोचनात्मक लेख आकाशवाणी के मद्रास केंद्र से प्रसारित हुए। कुछ फुटकर लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं।

पता—क्षेत्रीय अधिकारी, शास्त्री भवन, मद्रास–6।

(42) **पी. कृष्णन**—पी. कृष्णन वर्षों से केरल भारती, हिंदी प्रचार समाचार आदि में परीक्षोपयोगी समीक्षात्मक लेख लिखते आ रहे हैं। वैसे मलयालम भाषा एवं साहित्य को भी हिंदी के माध्यम से उजागर करने में उनका बड़ा हाथ है। तत्संबंधी कई निबंध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते आ रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पता—हिन्दी प्राध्यापक, एस. एन. कालेज, कण्णनूर, केरल।

(43) **डा. पी. कृष्णन नायर**—जन्म 1931, वटयार। शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। डा. नायर निबंधकार, कोषकार, आलोचक आदि रूपों में हिंदी की सेवा करते आ रहे हैं। 'प्रेमचन्द तथा उनके समकालीन हिंदी तथा मलयालम के सामाजिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध-प्रबंध लिखकर पी-एच. डी. की उपाधि ली। 'निबंध मालिका' उनके निबंधों का संग्रह है। 'त्रिभाषा स्वबोधिनी' हिंदी के प्रारंभिक अध्येताओं केलिए अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है। 'त्रिभाषा कोष', लोकोक्ति मालिका तथा श्री नारायण गुरु उनकी अन्य प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इस प्रकार नायर जी ने साहित्य की नाना विधाओं में अपनी अमूल्य सेवा अर्पित की है। अवश्य ही उनकी यह सेवा सदा स्मरण की जाएगी। त्रिभाषा कोष (हिंदी-मलयालम-अंग्रेजी), त्रिभाषा कोष (अंग्रेजी-हिंदी-मलयालम) केरल तथा केरल के साहित्यकार, चट्टम्पि स्वामिकल् आदि रचनाएँ प्रकाशन की प्रतीक्षा में हैं।

पता—हिंदी प्राध्यापक, सनातन धर्म कालेज, आलप्पी–3, केरल।

(44) **डा. पी. के. कुञ्ञिरामन**—जन्म 16–6–1925 को नीलेश्वर में। शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। गत दस वर्षों से डा. कुञ्ञिरामन की अनवरत साहित्य-साधना चलती आ रही है। उनके मौलिक समीक्षात्मक निबंध तथा अनूदित कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते आ रहे हैं। उनके निबंध-लेखन का मुख्य विषय मलयालम साहित्य रहा। उसकी विविध विधाओं पर लिखे गये लेख 'युगप्रभात', 'हिन्दी प्रचार समाचार', केरल भारती आदि में प्रकाशित हैं। लेकिन इन निबंधों का पुस्तकाकार प्रकाशन नहीं हो पाया है। 'हिन्दी और मलयालम के आधुनिक खण्डकाव्यों का तुलनात्मक अध्ययन' उनका शोध-विषय रहा, वह भी प्रकाशित नहीं हुआ है। डा. पी. के. कुञ्ञिरामन बड़े परिश्रमी एवं अध्ययनशील लेखक हैं।

पता—हिन्दी प्राध्यापक, पय्यनूर कालेज, पय्यनूर, केरल।

(45) **डा. पी. के. केशवन नायर**—केरल के प्रथम हिन्दी प्रचारकों में श्री केशवन नायर का नाम आदर से लिया जा सकता है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार में उन्होंने अपना सर्वस्व ही अर्पित कर दिया है। उन्होंने गाँव-गाँव जाकर हिन्दी के प्रति लगन और प्रेम पैदा किया। आज केरल के अधिकांश हिंदी अध्यापक तथा लेखक उन्हीं के विद्यार्थी रहे। एक हिंदी-प्रेमी एवं कर्मठ प्रचारक के अतिरिक्त श्री नायर जी उच्चकोटि के लेखक भी हैं। केरल में हिंदी प्रचार के उषाकाल में विद्यार्थियों के लाभार्थ उन्होंने हिंदी मलयालम स्वबोधिनी तथा अनुवाद पुस्तकों को तैयार करने में अपनी सेवा अर्पित की। 'हिंदी मलयाम कोष' जो दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास से प्रकाशित हुआ, उसके संपादकों में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एक श्री नायर थे। हिंदी को उनकी मौलिक देन है उनका शोधपरक एवं आलोचनात्मक ग्रंथ 'दक्षिण के हिंदी प्रचार आन्दोलन का समीक्षात्मक इतिहास', जो बड़े परिश्रम एवं मनोयोग से लिखा गया है। केशवन नायर जी अपनी लेखन-शैली तथा उच्चारण की सहजता के कारण हिंदी-भाषी ही प्रतीत होते हैं। हिंदी प्राध्यापक, हिंदी प्रोफसर, हिंदी विशेषाधिकारी आदि विविध पदों पर हिंदी की सेवा उन्होंने की।

(46) पी. जी **वासुदेव**—जन्म : चंगनाशेरी में। शिक्षा : हिंदी विद्वान (केरल विश्व-विद्यालय)। केरल के इने-गिने साहित्यकारों में श्री पी. जी. वासुदेव का नाम लिया जा सकता है। श्री वासुदेव एक सफल अध्यापक, मौलिक लेखक, सशक्त अनुवादक और अनुभवी प्रचारक हैं। उत्तर भारत के हिंदी वातावरण एवं साहित्यकारों की संगति में रहने का उन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ था, जिस कारण हिंदी की शक्ति एवं क्षमता से वे पूर्णतया परिचित हो सके हैं। उनका साहित्यिक जीवन सन् 1930 के आसपास से प्रारंभ होता है और प्रेमचन्द की साप्ताहिक पत्रिका में भी उनके निबंधों ने स्थान पाया था। हिंदी अध्यापक एवं प्राध्यापक आदि विविध रूपों में उन्होंने हिंदी की महान सेवा की और अब भी करते आ रहे हैं। वे वर्षों से लिखते आ रहे हैं और उनकी कई रचनाएँ—मौलिक एवं अनूदित—भारत भर की स्तरीय पत्रिकाओं में स्थान पा सकी हैं। बालकोपयोगी जीवनी-साहित्यकार के रूप में उन्होंने पर्याप्त यश प्राप्त किया है। बच्चों के श्रीराम, बच्चों के श्री शंकर, बच्चों के श्री नारायण, बच्चों के श्री कुंचन, बच्चों के बुद्ध, बच्चों के चटम्पी, बच्चों के यीशु, बच्चों के तुंचन, बच्चों के वीर वेलुत्तम्पी, आदर्श पुरुष, भाग 1, 2, 3, महान पुरुष 1, 2, 3, हमारे राष्ट्रनेता, महात्मागांधी आदि बच्चों केलिए प्रेरणादायक एवं शिक्षाप्रद हैं। उनकी बाल कहानियाँ भाग 1 व 2 में नीति एवं चरित्र-निर्माण की कथाएँ संगृहीत हैं। हिंदी तथा मलयालय की कई कृतियों के अनुवाद भी उन्होंने प्रस्तुत किये हैं। डा. धर्मवीर भारती के उपन्यास 'सूरज का सातवाँ घोड़ा', विष्णु प्रभाकर के उपन्यास 'स्वप्नमयी' तथा नाटक 'डाक्टर' का मलयालम में उन्होंने अनुवाद किया है और तीनों पुस्तकें प्रकाशित भी हुई हैं। वैसे ही मलयालम के अनेक एकांकी नाटकों, कहानियों का भी उन्होंने हिंदो में अनुवाद प्रस्तुत किय। है। वास्तव में श्री पी. जी. वासुदेव का यह साहित्यिक प्रयास प्रशंसनीय है। वे सक्षम साहित्यकार हैं।

पता—मत्री, हिंदी विद्यापीठ, अम्बुज विलासम् रोड, तिरुवनंतपुरम—1।

(47) **श्रीमती पी. लक्ष्मीकुट्टि अम्मा**—जन्म : 5–1–1916, शिक्षा : एम. ए., एल. टी.। श्रीमती लक्ष्मीकुट्टि अम्मा का संबंध हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालयों से रहा है। वे हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय, त्रिचूर के प्राचार्या पद से अवकाश ग्रहण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर चुकी हैं। अपने विषय से संबंधित दो पुस्तकें उन्होंने प्रकाशित करवायी हैं। उनकी पुस्तक 'शिक्षा शिक्षण' केन्द्र सरकार द्वारा पुरस्कृत हुई है। सन् 1963 से लिखती आ रही हैं। केरल के पावन 'गुरुवायूर' मंदिर पर उनके भावात्मक निबंधों का एक संग्रह भी प्रकाशित हुआ। तीन एकांकी, संपर्क भाषा हिंदी और शिक्षण तथा कुबड़े की कहानी उनकी अन्य रचनाएँ हैं। उनके कई स्फुट लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। भाषा प्रवाहमयी है।

पता—यू. जी. सी. प्रोफसर, निर्मला कालेज, त्रिचूर, केरल।

(48) **डा. पी. वी. विजयन**—शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। डा. विजयन कवि, निबंधकार और आलोचक हैं। उनका काव्य-संकलन 'कथ्य और तथ्य' केन्द्र सरकार से पुरस्कृत हुआ है। कुछ कविताएँ तथा लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। 'प्रसाद और आशान का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध-प्रबंध लिखा है, जो अप्रकाशित है। डा. विजयन से भविष्य में कई आशाएँ हैं।

पता—प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, कोचिन विश्वविद्यालय, कोचिन।

(49) **भारतीदेवी विद्यार्थी**—शिक्षा : बी. ए , एल. टी.। श्रीमती भारतीदेवी विद्यार्थी उपन्यासकार, एकांकीकार तथा सफल अनुवाद कर्ता हैं। पाँच बेंत तथा हार या जीत उनके प्रकाशित उपन्यास हैं। उन्होंने एक मलयालम स्वयं शिक्षक भी तैयार किया था। बच्चों केलिए 'तीन बाल एकांकी' शीर्षक एकांकी-संग्रह भी लिखा। मलयालम के श्रेष्ठ ग्रंथों को हिंदी में लाने की दिशा में उनका कार्य प्रशंसनीय है। मछुवारे, चुनौती, दो सेर धान, आदि मलयालम उपन्यासों के हिंदी अनुवाद हैं।

पता—बिहार बाग, त्रिपूणित्तुरा, केरल।

(50) **रत्नमयीदेवी दीक्षित**—शिक्षा : एम. ए., एक सफफ लेखिका हैं। अधिक लिखा नहीं, पर जो कुछ लिखा बहुत ही स्तरीय है। 'केरल साहित्य दर्शन' उनकी बहुप्रशंसित रचना है। एक अनुवादिका के रूप में भी उन्होंने सराहनीय कार्य किया है। सरदार के. एम. पणिक्कर के कल्याणमल तथा केरलसिंहम् का अनुवाद प्रस्तुत किया।

(51) **डा. रामचन्द्रदेव**—शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। डा. देव निबंधकार एवं आलोचक हैं। सामयिक पत्रिकाओं में वे लिखते आ रहे हैं। 'निर्गुण भक्ति साहित्य के दार्शनिक स्रोत' पर शोध-प्रबंध लिखा था। 'तुलसी और तुंचन' तथा 'मलयालम साहित्य : एक सर्वेक्षण' उनकी आलोचनात्मक रचनाएँ है। भाषा एवं भाव की दृष्टि से डा. देव एक सफल लेखक हैं।

पता—प्राध्यापक, हिंदी विभाग, कोचिन विश्वविद्यालय, कोचिन।

(52) **डा. गोविन्द शेनाय**—जन्म 9–11–1927 कुत्तियतोड्। शिक्षा : एम. ए, पी-एच. डी.। डा. शेनाय हास्य-व्यंग्य लेखक तथा समीक्षक हैं। 1950 के आसपास से उनका लेखन-कार्य आरंभ होता है। 'वर्तमान हिंदी और मलयालम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कथा-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध-कार्य किया था। उनकी कई कहानियाँ तथा लेख कई पत्रिकाओं में स्थान पा चुके हैं। 'आगे कौन हवाल' तथा 'मिस्टिक साहब का कुरता' उनकी व्यंग्य-कहानियों के संकलन हैं। इनमें से दूसरी पुस्तक भारत सरकार से पुरस्कृत हुई है। भाषा पर असाधारण अधिकार डा. शेनाय की रचनाओं में देखा जा सकता है। हास्य-व्यंग्य लेखक के रूप में वे सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं।

पता—आचार्य एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, महाराजास कालेज, एरणाकुलम।

(53) **वी. डी. कृष्णन नंपियर**—जन्म 27–10–1940 तिरुवल्ला। शिक्षा : एम. ए.। श्री नंपियार हिंदी तथा मलयालम में समान रूप से लिखते आ रहे हैं। हिंदी में लेखन-कार्य 1964 से आरंभ होता है। समालोचना, अनुवाद एवं हास्य-व्यंग्य में विशेष अभिरुचि है। पत्र-पत्रिकाओं में लिखते आ रहे हैं। हिंदी में अनूदित कहानियों का एक संकलन प्रकाशनाधीन है।

पता—प्रवक्ता, हिंदी विभाग, महाराजास कालेज, एरणाकुलम।

(54) **वी. नारायणन कुट्टी**—शिक्षा : एम. ए.। एक समीक्षक एवं निबंधकार के रूप में श्री नारायणन कुट्टी उभर रहे हैं। लगभग 1965 से वे लिखते आ रहे हैं। 'हिंदी की नयी कविता' उनकी आलोचनात्मक कृति है। भाव तथा अभिव्यक्ति की समरसता उनकी लेखन-शैली की विशेषता है।

(55) **महाकवि वेण्णिकुलम गोपालकुरुप**—जन्म : 9–5–1902 वेण्णिकुलम। शिक्षा : विद्वान, साहित्य निपुण। मलयालम के यशस्वी महाकवि वेण्णिकुलम गोपाल कुरुप ने मलयालम में तीस से अधिक पुस्तकें लिखी हैं। हिंदी में भी उनकी महती साहित्य-सेवा अनुवाद रूप में है। गोस्वामी तुलसीदास के रामचरित-मानस का मलयालम पद्यानुवाद प्रस्तुत करके हिंदी के प्रति अपना अनुराग उन्होंने प्रकट किया है।

पता—टी. सी. 220, ताइक्काड, तिरुवनंतपुरम।

(56) **डॉ. वेल्लायणि अर्जुनन्**—जन्म : 10–2–1933, तिरुवनंतपुरम। शिक्षा : एम. ए. (हिंदी, मलयालम, अंग्रेजी) पी-एच. डी., डी. लिट्। तमिल, तेलुगु और कन्नड़ में डिप्लोमा। बहुभाषाविद एवं भाषाशास्त्री तथा मलयालम विश्वकोष के प्रधान संपादक डॉ. वेल्लायणि अर्जुनन् कविता, निबंध, आलोचना तथा भाषाशास्त्रीय गवेषणा में विशेष तत्पर हैं। वे 1950 से मलयालम में तथा 1960 से हिन्दी में लिखते आ रहे हैं। 'हिंदी तथा मलयालम की समान शब्दावली का भाषा-शास्त्रीय अध्ययन' पी-एच. डी. का शोध-प्रबंध था तो 'दक्षिण भारतीय भाषाओं पर हिंदी शब्दावली का प्रभाव' पर डी. लिट् की उपाधि प्राप्त की। विश्व-विद्यालय अनुदान आयोग की योजना के अन्तर्गत शोध-कार्य में प्रवृत्त रहकर 'हिंदी तथा मलयालम भाषाओं की एकता का भाषातात्विक अध्ययन' तथा 'हिंदी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एवं मलयालम की लोकोक्तियों का तुलनात्मक अध्ययन' शीर्षक पुस्तकें तैयार की हैं। उपर्युक्त चारों ग्रंथ प्रकाशन केलिए हिंदी साहित्य सम्मेलन के विचाराधीन हैं। उनके साहित्यिक एवं भाषाशास्त्रीय लेख भारत की अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित होते आ रहे हैं। अतः डा. अर्जुनन् की हिंदी तथा मलयालम केलिए सेवा अत्यन्त प्रशंसनीय है।

पता—प्रधान संपादक, मलयालम विश्वकोष, तिरुवनंतपुरम–14।

(57) **डॉ. (सिस्टर) क्लेमेन्ट मेरी**—जन्म 19–8–1917 इलंकुन्नपुषा, केरल। शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी.। सन् 1946 से 1948 तक केरल में तथा 1948 से बंगलूर में सेवारता हैं। डा. क्लेमेन्ट मेरी प्रौढ़ लेखिका हैं। वे एक निर्भीक समीक्षक हैं। उनका शोध-प्रबंध 'हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य', जो पुस्तकाकार प्रकाशित है, उनके प्रौढ़ चिन्तन, गहरे अध्ययन तथा विशाल दृष्टिकोण का द्योतक है। भाषा पर लेखिका का विशेष अधिकार है और उसकी शैली प्रवाहयुक्त एवं सरल है। लेखिका से ऐसी सशक्त रचनाओं की भविष्य में भी आशा है।

पता—आचार्या एवं अध्यक्षा, हिंदी विभाग, माऊण्ट कार्मेल कालेज, बांगलूर।

कुछ अन्य साहित्यकार

(58) **अनन्तरामन**—निबंध-लेखक, अनुवादक एवं कहानीकार।

(59) **डॉ. ईश्वरी**—शोध-प्रबंधकार तथा फुटकर निबंध-लेखिका। 'हिंदी तथा मलयालम की तुलनीय शब्दावली' पर शोधकार्य किया।

(60) **एन. के. उण्णित्तान**—फुटकर रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। सफल अनुवादक।

(61) **एच. पद्मनाभन**—छात्रों केलिए सहायक पुस्तकों के लेखक।

(62) **एच. बालसुब्रह्मण्यम्**—हिंदी निबंधों तथा सहायक ग्रंथों के लेखक। पत्रिकाओं में लेखन-कार्य।

(63) **एन. ई. मुत्तुस्वामी अय्यर**—परीक्षोपयोगी टीकाकार तथा सहायक ग्रंथों के लेखक।

(64) **डॉ. ए. राजकुमारन**—शोध-प्रबंधकार तथा फुटकर निबंधकार, रोचक भाषा-शैली।

(65) **एन. पी. कृष्ण पिल्लै**—निबंध-लेखक। अन्दमान निकोबार द्वीप समूहों में हिंदी अध्यापन कार्य। 'हिंदी रचना बोध' प्रकाशित तथा 'कार निकोबार' प्रकाशनाधीन। कई लेख 'हिंदी प्रचार समाचार' में प्रकाशित।

(66) **ए. एन. राघवन नायर**—'हिंदुस्तानी बालबोधिनी' के लेखक।

(67) **एन. एम. करुणाकरन**—तरुण साहित्यकार। फुटकर निबंध लेखक।

(68) **एन. सरस्वती अम्मा**—'हिंदी व्याकरण' की लेखिका।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(69) **डॉ. एस. राधादेवी**—फुटकर लेखन तथा शोध प्रबंध-लेखन का कार्य । 'श्रीमती बालामणि अम्मा तथा महादेवी वर्मा का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध-प्रबंध प्रस्तुत किया ।

(70) **एम. के. रवीन्द्रन**—फुटकर निबंध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित ।

(71) **के. जी. बालकृष्ण पिल्लै**—पत्र-पत्रिकाओं में लिखते आ रहे हैं।

(72) **के. पी. कृष्णन कुट्टी**—निबंध-लेखक ।

(73) **डॉ. के. पद्मावती**—पत्रिकाओं में लेखन-कार्य । 'हिंदी और मलयालम का प्रगतिवादी काव्य' पर शोध-कार्य ।

(74) **डा. जस्टिन एब्रहाम**—फुटकर लेखन-कार्य । 'हिंदी और मलयालम का कहानी-साहित्य' पर शोधकार्य ।

(75) **जे. रामचन्द्रन नायर**—'छायावादी काव्य दर्शन' का लेखक ।

(76) **टी. के. प्रभाकरन**—साहित्यिक विषयों पर निबंध-लेखन ।

(77) **टी. के. भास्कर वर्मा**—अनुवादक के रूप में आगे बढ़ रहे हैं ।

(78) **टी. एन. विश्वन्**—प्रतिभाशाली लेखक । आलोचक । 'कहानी : स्वर और स्वरूप' प्रकाशित कृति ।

(79) **परमेश्वरन नंपूतिरी**—अनुवाद तथा फुटकर रचनाएँ प्रकाशित ।

(80) **डा. पी. के. पद्मजा**—शोध-कार्य तथा निबंध-लेखन ।

(81) **पी. नारायण**—बड़े प्रतिभाशाली कवि, कहानीकार एवं भावुक निबंध-लेखक । पुस्तकाकार लेखन कम हुआ । प्रसिद्ध पत्रिकाओं में सामयिक विषयों पर लेख लिखते आ रहे हैं । उनकी कुछ मौलिक कविताएँ स्थानीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं ।

(82) **पी. एन. भट्टतिरी**—सफल अनुवादक

(83) **पी. बालकृष्णन**—पत्रिकाओं में लेखन ।

(84) **मूत्तूर राघवन नायर**—चिन्ताविष्टा सीता (अनुवाद)

(85) **बी. कृष्ण कुमारी**—निबंध-लेखिका । अरबी-फारसी शब्दों से युक्त हिंदी-शैली ।

(86) **डा. रवीन्द्रनाथन**—शोध-कार्य और फुटकर लेखन। 'प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यास-साहित्य पर मार्क्सवाद का प्रभाव' पर शोध-कार्य ।

(87) **वी. के. हरिहरन उण्णित्तान**—निबंध-लेखन । सशक्त एवं प्रभावशाली भाषा ।

(88) **डा. वी. एन. फिलिप**—शोध-लेखन एवं निबंध-लेखन । 'भक्ति साहित्य में विरह भावना' पर शोध-कार्य । स्थानीय पत्रिकाओं में निबंध-लेखन ।

(89) **डा. शीला**—शोध-लेखिका । 'तकषि एवं प्रेमचंद के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध-प्रबंध लिखा था ।

(90) **डा. सुशीलाम्मा**—शोध-कार्य तथा निबंध-लेखन । 'हिंदी भक्ति काव्य की सामाजिक भूमिका' शोध-विषय रहा ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(91) **डा. सुनीता**—निबंध-लेखिका एवं शोध-प्रबंध लेखिका । मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में सांस्कृतिक पक्ष पर शोध-कार्य ।

(92) **डा. सुभद्राम्मा**—फुटकर रचनाएँ तथा शोध-कार्य । हिंदी और मलयालम के रामकाव्य पर शोध-कार्य सपन्न हुआ ।

(93) **सोमवर्म राजा**—अनुवादक एवं फुटकर निबंध-लेखक ।

◆ ◆ ◆

मलयालम–इतर भाषा-भाषी केरल के साहित्यकार

(1) **डा. इकबाल अहमद**—जन्म : बस्ती, उत्तर प्रदेश 3 जुलाई 1943 । शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी. । हिन्दी के मध्यकालीन साहित्य और विशेषकर सूफी साहित्य के अध्ययन में विशेष अभिरुचि । सन् 1966 ई. से लेखन-कार्य करते आ रहे हैं । दो पुस्तकें अब तक प्रकाशित हैं—मिर्जा अब्दुर्रहमान प्रेमी कृत नख-शिख (संपादित) तथा हिन्दुस्तानी ग्रामर । स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर लिखते आ रहे हैं ।
पता—हिन्दी विभाग, कालिकट विश्वविद्यालय, केरल ।

(2) **डा. मलिक मुहम्मद**—मातृभाषा : तमिल । शिक्षा : एम. ए., डी. लिट. । मौलिक लेखक, आलोचक एवं अनुवादक । 'हिन्दी कृष्ण-काव्य पर तमिल प्रबंधम् का प्रभाव' पर पी-एच. डी. तथा 'वैष्णव भक्ति आन्दोलन' पर डी. लिट की उपाधि प्राप्त की । दोनों शोध-प्रबंध प्रकाशित हो चुके हैं । दक्षिण के प्रसिद्ध विद्वानों में आप का भी नाम लिया जा सकता है । 'अमीर खुसरो' उनकी संपादित रचना है । उनका पी-एच. डी. का शोध-प्रबंध उत्तर प्रदेश सरकार तथा बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद से पुरस्कृत है । भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मश्री' की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया है तो लंदन की रायल एशियाटिक सोसाइटी ने उन्हें अपना 'फेलो' चुन लिया । हिन्दी के भक्ति कालीन साहित्य के अधिकारी विद्वान हैं ।
पता—अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कालिकट विश्वविद्यालय, केरल ।

(3) **डा. विश्वनाथ माल्या**—हिन्दी भाषा-भाषी । स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में लेखन-कार्य ।
पता—हिन्दी प्राध्यापक, एस. एच. कालेज, कोचीन, केरल ।

(4) **डा. सुधांशु चतुर्वेदी**—मातृभाषा : हिन्दी । डा. चतुर्वेदी हिन्दी के अच्छे साहित्यकार तथा मलयालम भाषा के हितैषी विद्वान हैं । केरल में रहकर उन्होंने मलयालम पर अधिकार कर लिया और मलयालम की कई रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया । उनके ये सारे अनुवाद पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते आ रहे हैं । 'कुमारन आशान्' अनूदित पुस्तक है ।
पता—हिन्दी विभाग, केरलवर्मा कालेज, त्रिचूर–4, केरल ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशित प्रमुख कृतियाँ

काव्य

(1) आरती—पं. नारायणदेव, हिन्दी पुस्तक मंदिर, कोट्टयम 1960
(2) कथ्य और तथ्य—डा. पी. वी. विजयन, हिन्दी साहित्य मंडल, कोचीन 1971
(3) केरल सतसई—के. वासुदेवन पिल्लै, वासुदेवन पिल्लै स्मृति ग्रंथ का परिशिष्ट 1964
(4) दीपाराधना—आनंदशंकर माधवन, प्राच्य भारती, बिहार, 1962
(5) तीन मूर्त्ति—डा. दामोदर प्रसाद, प्रसाद प्रकाशन, कोल्लम
(6) प्रसून पंथ—आनंदशंकर माधवन, प्राच्य भारती, बिहार,
(7) स्वातितिरुनाल् के हिन्दी गीत—सं. डा. विश्वनाथ अय्यर, स्वातितिरुनाल संगीत सभा, तिरुवनंतपुरम 1963
(8) हिमालय गरज रहा है (खंडकाव्य)—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्रीनिकेतन प्रकाशन, तिरुवनंतपुरम, 1965

नाटक-एकांकी

(1) कुरुक्षेत्र जागता है—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्रीनिकेतन प्रकाशन, तिरुवनंतपुरम 1961
(2) तीन एकांकी—प्रो. लक्ष्मीकुट्टिअम्मा, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली 1967
(3) देवयानी—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान, दिल्ली 1970
(4) द्विवेणी—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्रीनिकेतन प्रकाशन, तिरुवतंतपुरम 1961
(5) युगसंगम—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्रीनिकेतन प्रकाशन, तिरुवनंतपुरम 1964
(6) वीर दलवा वेलुत्तंपी—डा. एन. रामन नायर, गीता प्रकाशन, कोचीन, 1972

कहानी

(1) आगे कौन हवाल (व्यंग्य)—डा. गोविन्द शेनाय, केरल हिन्दी साहित्य मण्डल, कोचीन 1971
(2) प्रोफसर और रसोइया—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1974
(3) मिस्टिक साहब का कुरता (व्यंग्य)—डा. गोविन्द शेनाय, तिरुवनंतपुरम 1961
(4) हार की जीत—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्रीनिकेतन प्रकाशन, 1964

बाल-साहित्य और जीवनी

(1) आदर्श बालक भाग 1, 2, 3,—पी. जी. वासुदेव, विद्यार्थी मित्रम्, कोट्टयम 1959
(2) आदर्श पुरुष—पी. जी. वासुदेव, दि एजुकेशनल साप्लाइस डिपो, तिरुवनंतपुरम 1960
(3) प्रथम याम (जीवनी)—आनंदशंकर माधवन, प्राच्य भारती, बिहार 1964
(4) प्रसाद कथाएँ (लघु कथाएँ)—डा. दामोदर प्रसाद, प्रसाद प्रकाशन, कोल्लम
(5) बच्चों के चट्टंपी—पी. जी. वासुदेव, दि एजूकेशनल साप्लाइस डिपो, तिरुवनंतपुरम 1962

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(6) बच्चों के बुद्ध—पी. जी. वासुदेव, दि एजूकेशनल साप्लाइस डिपो, 1962
(7) बच्चों के श्री कुंचन—पी. जी. वासुदेव, दि एजूकेशनल साप्लाइस डिपो, 1962
(8) बच्चों के श्री नारायण—पी. जी. वासुदेव, दि एजुकेशनल साप्लाइस डिपो, तिरुवनंतपुरम 1962
(9) बच्चों के श्रीराम—पी. जी. वासुदेव, दि एजूकेशनल साप्लाइस डिपो, 1962
(10) बच्चों के श्रीशंकर—पी. जी. वासुदेव, दि एजुकेशनल साप्लाइस डिपो, 1962
(11) बाल कहानियाँ 1, 2, 3—पी. जी. वासुदेव, विद्यार्थी मित्रम्, कोट्टयम 1959
(12) महाकवि रवीन्द्रनाथ—डा. विश्वनाथ अय्यर, ईश्वरन एण्ड कंपनी, तिरुवनंतपुरम
(13) महान पुरुष 1, 2, 3—पी. जी. वासुदेव, विद्यार्थी मित्रम्, कोट्टयम् 1960
(14) विज्ञान योगिनी—डा. विश्वनाथ अय्यर, रामचन्द्र अय्यर, तिरुवनंतपुरम 1960
(15) स्वतंत्रता के सिपाही—डा. दामोदर प्रसाद, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली 1965
(16) स्वातितिरुनाल—कुन्निकुषि कृष्णन कुट्टि, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली 1966

समीक्षात्मक निबंध-आलोचना

(1) अध्ययन और अनुसंधान—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, प्रगति प्रकाशन, आगरा, 1975
(2) आधुनिक हिन्दी गद्य और गद्यकार—डा. जेकब पी. जार्ज, ग्रंथम कानपुर 1966
(3) आधुनिक हिन्दी तथा मलयालम काव्य का तुलनात्मक अध्ययन—डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली 1970
(4) केरल का स्वर्गिक स्थान गुरुवायूर—प्रो. पी. लक्ष्मीकुट्टि अम्मा, गीता प्रकाशन, कोचिन 1973
(5) केरल की भक्ति साधना—डा. एम. जार्ज, हिमालय प्रकाशन, आगरा 1968
(6) केरल गौरव—एन. वेंकटेश्वरन, बेनी माधव, इलाहाबाद 1967
(7) केरल साहित्य दर्शन—रत्नमयी देवी दीक्षित, सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, 1956
(8) केरलीयों की हिन्दी को देन—डा. जी. गोपीनाथन, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, 1973
(9) कैरली वैभव—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, दक्षिणांचलीय साहित्य समिति, हैदराबाद 1976
(10) कैरली साहित्य और भारतीय उपन्यास—के. जे. जोसफ, बीना प्रकाशन, इरिञालकुडा, केरल 1968
(11) चेतन : एक अध्ययन—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, विद्यार्थी पब्लिकेशनस, हैदराबाद 1970
(12) छायावादी काव्य दर्शन—जे. रामचन्द्रन नायर, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली 1976
(13) तुलसी और तुंचन—डा. रामचन्द्रदेव, शब्दलोक प्रकाशन दिल्ली
(14) पंत-काव्य में बिम्ब योजना—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, दक्षिण प्रकाशन, हैदराबाद 1974
(15) पंत : छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, जय प्रकाशन हैदराबाद 1970

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(16) प्रतिज्ञा—एक अध्ययन—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, विद्यार्थी पब्लिकेशनस, हैदराबाद 1972

(17) प्रसाद और कामायनी—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, बुक लॉन्स, हैदराबाद, 1959

(18) प्राचीन कवि केशवदास—डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, लोकभारती, इलाहाबाद 1968

(19) भक्ति आन्दोलन—डा. एम. जार्ज, सोमैया पब्लिकेशनस, बंबई, 1971

(20) भारतीय साहित्य—डा. एन. चंद्रशेखरन नायर, श्रीनिकेतन प्रकाशन, तिरुवनंतपुरम 1967

(21) भारतीय साहित्य और कलाएँ—डा. एन. चंद्रशेखरन नायर, श्रीनिकेतन प्रकाशन, तिरुवनतपुरम 1967

(22) मलयालम के खंडकाव्य—एस. तंकमणि अम्मा, गीता प्रकाशन, कोचिन 1974

(23) मलयालम साहित्य—डॉ. रामचंद्रदेव, अशोक प्रकाशन गृह, दिल्ली 1970

(24) मलयालम साहित्य का इतिहास—डॉ. के भास्करन नायर, हिन्दी समिति लखनऊ

(25) महादेवी के रेखाचित्र—अरविन्दाक्षन, गीता प्रकाशन, कोचिन 1974

(26) राष्ट्रभारती को केरल का योगदान—डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1970

(27) वल्लत्तोल और मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन—डॉ. के. एस. मणि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

(28) संत कबीर—डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, साहित्य प्रकाशन, हैदराबाद 1975

(29) सेवासदन की समीक्षा—डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, साहित्य निकेतन, कोल्लम

(30) सेवासदन की समीक्षा—डॉ. दामोदर प्रसाद, प्रसाद प्रकाशन, कोल्लम

(31) हमारे कलाकार—डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, विद्यार्थी पब्लिकेशनस, हैदराबाद।

(32) हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन—डॉ. एस. एन. गणेशन, राजपाल एण्ड संस 1963

(33) हिन्दी और मलयालम के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन—डॉ. एन. आई. नारायणन, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा

(34) हिन्दी का स्वातंत्र्योत्तर विचारात्मक गद्य—डा. (सिस्टर) क्लेमेन्ट मेरी, स्मृति प्रकाशन इलाहाबाद।

(35) हिंदी की नई कविता—वी. नारायणन कुट्टि

(36) हिन्दी तथा मलयालम के कृष्णभक्ति साहित्य—डॉ. के. भास्करन नायर, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली 1960

(37) हिन्दी प्रचार आन्दोलन का समीक्षात्मक इतिहास—पी. के. केशवन नायर, हिंदी साहित्य भंडार, लखनऊ 1962

(38) हिन्दी साहित्य का सुगम इतिहास—डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, जय प्रकाशन, हैदराबाद, 1970

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(39) हिन्दी साहित्य का इतिहास (प्रश्नोत्तरी) डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, विद्यार्थी पब्लिकेशनस, हैदराबाद 1966
(40) हिन्दी साहित्य में नारी : भूमिका—डॉ. सरला देवी, केरल हिन्दी साहित्य मडल, कोचिन, 1971

भाषाविज्ञान, भाषाशिक्षण

(1) त्रिभाषा स्वबोधिनी—डॉ. पी. कृष्णन नायर, श्री प्रकाशन, तिरुवनंतपुरम 1967
(2) भाषिकी—डॉ. एच. परमेश्वरन, केरल साहित्य मंडल, कोचिन 1974
(3) मलयालम स्वयं शिक्षक—के. वासुदेवन पिल्लै, श्रीराम विलासम् बुकडिपो, कोल्लम
(4) मलयालम स्वयं शिक्षक—भारतीदेवी विद्यार्थी, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास 1951
(5) राष्ट्रभाषा शिक्षण—राजप्पन नायर, हिन्दी साहित्य भंडार, लखनऊ, 1965
(6) शिक्षा मनोविज्ञान—राजप्पन नायर, श्री प्रकाशन, तिरुवनंतपुरम 1968
(7) शिक्षा शिक्षण—प्रो. पी. लक्ष्मीकुट्टि अम्मा, केरल साहित्य मंडल, कोचिन, 1971

निबंध

(1) अनल शलाका—आनंदशंकर माधवन, प्राच्य भारती बिहार,
(2) निबंधोपहार—डॉ. विश्वनाथ अय्यर, रामनारायणलाल बेनी प्रसाद, इलाहाबाद 1958
(3) निबंध मंजूषा—डा. एन. चन्द्रशेखरन नायर, श्रीनिकेतन प्रकाशन, तिरुवनंतपुरम 1967
(4) निबंध मालिका—डॉ. पी. कृष्णन नायर, श्रीप्रकाशन, तिरुवनंतपुरम 1971
(5) प्रबंध प्रदीप—डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी 1963
(6) हिन्दी आन्दोलन—आनंदशंकर माधवन, प्राच्य भारती बिहार
(7) हिन्दी निबंध—डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, विद्यार्थी पब्लिकेशनस्, हैदराबाद 1973
(8) याद (संस्मरण)—पद्मिनी मेनन, इंडिया बुक कंपनी, दिल्ली 1969

व्याकरण

(1) तुलनात्मक व्याकरण (हिन्दी व मलयालम)—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, किताब महल, इलाहाबाद, 1959
(2) सरल हिन्दी व्याकरण एवं रचना—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी 1961
(3) हिन्दी रचना-बोध—एन. पी. कृष्ण पिल्लै, 1971
(4) हिन्दी व्याकरण—सरस्वती अम्मा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली 1966
(5) हिन्दी व्याकरण तथा अनुवाद–डा. एम. जार्ज, ग्रेस पब्लिकेशनस, मावेलिकरा 1958

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पाठ्य पुस्तक

(1) गद्य चंद्रिका (सं.)—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, विद्यार्थी पब्लिकेशनस, हैदराबाद 1976

(2) गद्यांजलि (सं.)—डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, हिन्दी बुक स्टाल, तिरुवनंतपुरम 1961

(3) मंजरिका (सं.)—टी. जी. वासुदेव, दि एजूकेशनल साप्लाइस डिपो, तिरुवनंतपुरम 1962

(4) राजभाषा प्रसून—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, प्रभात पब्लिकेशनस, तेनाली 1963

(5) हिन्दी बाल सरिता—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, दाचेपल्लि किष्टैया एण्ड संस, सिकंदराबाद 1976

कोष

(1) त्रिभाषा कोष—डा. पी. कृष्णन नायर श्री पब्लिकेशन्स, तिरुवनंतपुरम, 1969

(2) पुराण संदर्भ कोष—पद्मिनी मेनन, ग्रंथम, कानपुर 1969

(3) मलयालम हिन्दी व्यावहारिक कोष—डा. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, नाशनल बुक स्टाल, कोट्टयम 1959

(4) लोकोक्ति मालिका—डा. पी. कृष्णन नायर, दि एजूकेशनल साप्लाइस डिपो तिरुवनंतपुरम 1965

(5) हिन्दी मलयालम कोष—दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास 1940

(6) हिन्दी मलयालम कोष—डा. रामन नायर 1948

(7) हिन्दी मलयालम कोष—अम्मिणि अम्माल, श्रीराम विलासम् प्रेस कोल्लम 1951

(8) हिन्दी मलयालम कोष—दिवाकरन पोट्टी, नेशनल बुकस्टाल, कोट्टयम 1956

(9) हिन्दी मलयालम निघंटु—हरनस् 1958

(10) हिन्दी मलयालम निघंटु—अभयदेव, नेशनल बुकस्टाल, कोट्टयम् 1966

(11) हिन्दी हिन्दी तेलुगु कोश—डा. भीमसेन निर्मल, डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, एम. रंगय्या, राजकमल बुक सेन्टर, सुल्तान बाजार, हैदराबाद 1977

अनूदित कृतियाँ

(1) अतीत के दिन—(के. पी. केशव मेनन की आतमकथा) नेशनल बुकट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली

(2) अध्यात्म रामायण (काव्य—एषुत्तच्छन्)—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, भुवन वाणी ट्रस्ट लखनऊ

(3) उत्तर रामायण (काव्य—एषुत्तच्छन)—डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै, भुवन वाणी ट्रस्ट लखनऊ

(4) ओटक्कुषल (काव्य—जी शंकर कुरुप) जी. नारायण पिल्लै, ज्ञानपीठ 1966

(5) कवि श्री माला (काव्य—जी. शंकर कुरुप)—एम. श्रीधर मेनन, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा, 1962

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(6) कवि श्री माला (काव्य—वल्लत्तोल)—एम. श्रीधर मेनन, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा 1962
(7) महाभारत (काव्य—एषुत्तच्छन्)—के. एस. सुब्रह्मण्य अय्यर, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ 1975
(8) केरलसिंहम् (उपन्यास—के. एम. पणिक्कर)—रत्नमयी देवी दीक्षित, साहित्य अकादमी दिल्ली 1956
(9) चुनौती (उपन्यास—तकषी)—भारती विद्यार्थी, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली
(10) जड़ें (उपन्यास—मलयाट्टूर)—डा. विश्वनाथ अय्यर, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली 1976
(11) जो जीना भूल गयी (उपन्यास—वेट्टूर रामन नायर) अभय देव, हिन्दी प्रकाशन, सहकारी संघ 1959
(12) दादा का हाथी (उपन्यास—वैकम मुहम्मद बशीर)—रविवर्मा, साहित्य अकादमी 1963
(13) दो सेर धान (उपन्यास—तकषी) भारती विद्यार्थी, साहित्य अकादमी
(14) पद्मावती (उपन्यास—के. दामोदरन)—लक्ष्मण शास्त्री, अशोक प्रकाशन गृह दिल्ली 1970
(15) मछुआरे (उपन्यास—तकषी)—भारती विद्यार्थी, साहित्य अकादमी 1959
(16) उत्थान (नाटक—तोप्पिल भासी)—एस. लक्ष्मण शास्त्री, अशोक प्रकाशन दिल्ली 1960
(17) गीतानंद (नाटक—एम. परमेश्वरन पिल्लै)—पी. जी. वासुदेव, राम नारायण बेनी प्रसाद, इलाहाबाद
(18) पूंजी (नाटक—तोप्पिल भासी)—एम. लक्ष्मण शास्त्री, अशोक प्रकाशन दिल्ली
(19) मिट्टी और नारी (नाटक—उरूब)—के. कृष्ण मेनन, हिंदी प्रकाशन, सहकारी-संघ, कोट्टयम 1958
(20) वह फिर आ रहा है (नाटक—सी. जे. तोमस)—पी. जी. वासुदेव, हिंदी प्रकाशन, सहकारी संघ 1958
(21) कैरली 5 भाग (कहानी)—एस. लक्ष्मण शास्त्री, अशोक प्रकाशन दिल्ली
(22) केरल का भविष्य (लेख—स्वामी आगमानंदजी)—एम. गणेश अय्यर, रामकृष्ण अद्वैताश्रम कालड़ी, 1959

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दक्षिणांचलीय साहित्य समिति
गांधीनगर, हैदराबाद–500 380

हमारे प्रकाशन

1. **दक्षिण में रामकथा** 12-50

   संपादक : डॉ. भीमसेन निर्मल
   डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै
   डॉ. विजयवीर विद्यालंकार

2. **शाकुन्तलम् की अभिज्ञानता** 10-00

   मूल : (विश्वनाथ सत्यनारायण)
   अनुवाद : आर. शेखर, एम. ओ. एल.

3. **कैरली वैभव** 10-00

   डॉ. एन. पी. कुट्टन पिल्लै

प्रकाशनाधीन

1. **नदी सुन्दरी**

   (मूल : डॉ. अब्बूरि रामकृष्णाराव)
   अनुवाद : डॉ. भीमसेन 'निर्मल'

2. **दीक्षितुलु**

   (मूल : स्व. मुनिमाणिक्यम नरसिंहाराव)
   अनुवाद : डॉ. भीमसेन 'निर्मल'

3. **कुछ अपनी कुछ परायी**

   (काव्य संकलन)
   श्री एम. रंगय्या, एम. ए., बी. एड्.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी हिन्दी-तेलुगु कोष

(बृहदाकार–लगभग एक लाख शब्द)

संपादक

डा. भीमसेन निर्मल

डा. एन. पी. कुट्टन पिल्लै

एम. रंगय्या, एम. ए. बी. एड्.

टी. राजकुमारी, एम. ए. (हिन्दी-तेलुगु)

प्रकाशक

श्री हरि प्रकाशन

नामपल्ली स्टेशन रोड़ (गदवाल पैलेस)

हैदराबाद–आं. प्र.

प्राप्ति-स्थान

किरण प्रकाशन

4–8–494, गौलीगुडा,

राममंदिर रोड

हैदराबाद–500 012

राजकमल बुक सेन्टर

सुल्तान बाजार

घड़ियाल के सामने

हैदराबाद – आं. प्र.